# नवरत्नउपदेशका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

(पारला-मुबईमे आयोजित अध्ययनशिखिरके केसेटोके आधार पर गुजराती प्रवचनोंका हिन्दी अनुवाद)

o
o
o
o
o
o
o
o
o
o
o
o
o
o
o
o
o

*गोस्वामी श्याममनोहर*

लेखक-प्रकाशक
गोस्वामी श्याम मनोहर
६३, स्वस्तिक सोसायटी, चौथा रास्ता,
जुहुस्कीम, पारला, मुबई - ४०००५६

अनुवादक अशोक शर्मा

नि शुल्क वितरणार्थ आर्थिक सहयोग
वैष्णव समाज मेड़ता राजस्थान

# नवरत्न उपदेशका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

(प्रति ११०० प्रकाशनवर्ष वि स २०६२ श्रीवल्लभाब्द ५२७)

मुद्रक
जी एन पिन्टस्
२९९४/१, मस्जिद खजूर,
धर्मपुरा, चावडी बाजार,
दिल्ली - ११०००६

।।श्रीकृष्णाय नम ।।

।। श्रीमदाचार्यचरणकमलेभ्यो नम ।।

## प्रकाशकीय

महाप्रभू श्रीवल्लभाचार्यचरणका यह **नवरत्न** ग्रथ, मूलमे उत्तर गुजरातके खेरालु गावके श्रीगोविन्द दवेको भगवत्सेवा करते हुवे जो उद्वेग होता था उसके निवारणकेलिये प्रकटा उपदेश है, और षोडशग्रथोंमेका छट्ठा ग्रथ है

महाप्रभुजी द्वारा चुने मार्गसे, कलिकालक्रमसे विपरीत ही दिशामें चलनेकी मानसिकता रखनेवाले हम गोस्वामी बालक और अनुगामी वैष्णव जनताको आज पुष्टिसम्प्रदायमे सबसे अधिक अगर कोई बात चुभती है तो वह महाप्रभुजी द्वारा उपदिष्ट सिद्धान्त ही हैं ऐसी अपनी दुर्गतिमें से बाहर आनेके लिये उपदेशक और अनुगामी एक बार मिलकर अपने मूल सिद्धान्त और उनके निरूपक ग्रथोका निभ्रात आशय पारस्परिक सहमतिसे जब तक निर्धारित न कर लें तब तक अपनी समस्याका सम्यग्रतया साप्रदायिक समाधान नहीं मिल सकता अतएव कुछ गोस्वामी नवयुवक एक सार्वजनिक चर्चासभा करनेका आग्रह कर रहे थे मैं उस समय भी बहुत आशावादी नहीं था तो भी चर्चासभामें विचारोंकी आधारभूमिकाके रूपमें विचार्य मुद्दे, सिद्धान्तवचन, और उनके भावाभिप्राय जो मरी समझके अनुसार ठीक लगते थे उनका १३ शीर्षकोंमे एक संकलन प्रस्तुत किया था. उसके बाद **सिद्धान्तवचनावली** के तौरपर प्रकाशित करवाकर सबको भिजवा भी दी थी आज परन्तु महाप्रभुजीके नाम पर अपने चरण पुजवानेवाले हम गोस्वामी बालकोंको महाप्रभुजीके वचन गालीसे भी अधिक चुभते है उस कारण अनुगामी वैष्णव जनताको भी महाप्रभूजीके साक्षात् वचनों के बजाय उनके वशजोंके वचन अधिक कर्णप्रिय लगते है इस

कारण पहले तो कोई सुनना ही नहीं चाहता अथवा तो सुनकर मूल आचार्यवाणीका यद्वा-तद्वा अभिप्राय देकर छूट जाना चाहते हैं अथवा कितनेही चतुर गोवा अब सिद्धान्तोंके प्रकट हो जानेके कारण उन्हे सिद्धान्तके तौर पर व्यक्तिगत अथवा तो सार्वजनिक रूपमें मानते हैं परन्तु उसके होते हुवे भी आठ गुना हो हल्ला सिद्धान्तविरुद्ध कार्यक्रमोंकी एक कूटनीति भरा जनतामें शुरु किया हैं इसका हेतु केवल एक ही कि जैसे बने वैसे जनतामें व्यामोह फैला दो कि सच्चे सिद्धान्तोंकी गभीरताकी ओरसे पुष्टिमार्गीय जनता आख कान मोड ले।

इस परिस्थितिमें प्रभुने जिसे जैसी सामर्थ्य दी हो तदनुसार महाप्रभुजीका वास्तविक अभिगम जनताके समक्ष प्रस्तुत करते रहना चाहिये क्योंकि आजके स्वार्थकी कीचडमें गलेतक डूब कर फसे हुये हम सब आजकी तारीखमें हिलमिलकर सर्वमान्य प्रस्तुति अपने सिद्धान्तोंकी कर सकें, ऐसी शक्यता लगती नहीं है अतएव जो सिद्धान्तचर्चासभा बुलाई गई थी उसके वार्षिकोत्सव रूपमे महाप्रभुजीके वास्तविक अभिप्राय प्रस्तुत करनेके लिये ग्रथोक्ता हरेक वर्ष स्वाध्याय करते हैं स्वाभाविक रीतिसे इसमे मेरी भाषा कठोर होती है, जो कि नहीं होनी चाहिये, ऐसा स्वीकारते हुये भी, कभी तो ऐसी तेजाबी भाषासे धुलकर हम गोस्वामी बालक और वैष्णवोंमे रहा हुवा पुष्टिका बीजभाव सच्चे सुवर्णकी तरह चमक उठेगा तो जैसे गालिबने कहा है **इश्क मुझको नहीं वहशत ही सही मेरी वहशत तेरी शोहरत ही सही. कता कीजे न ताल्लुक मुझसे कुछ नही हो तो अदावत ही सही** इस न्यायानुसार मैं अपने आपको न केवल क्षम्य बल्कि कृतकृत्य भी मान लेनेकी मनोवृत्ति रखता हू. पुष्टिप्रभु महाप्रभु और प्रभुचरण हमको वास्तविक पुष्टिमार्गके पथिक बनायें उस एक महत्त्वाकाक्षाके साथ।

इस स्वाध्यायप्रवचनको कैसेटमेंसे कम्प्युटरमें उतारनेवाले चि परेश और चि मनीषा, जिन्होंने मेरी अनघड गुजराती भाषाको सुधारनेकेलिये घटो घटोकी प्रूफरीडिंग की और अपेक्षित थोडा बहुत सशोधन करने एकत्रित होकर बैठनेवाले सब विद्यार्थियोका हृदयसे आभार मानना कि नहीं! इस बारेमें मेरे मनमें थोडी अनिश्चय हैं क्योंकि पुष्टिमार्गके प्रति मेरी कि इनकी ही नहीं बल्कि सब पुष्टिमार्गीयोकी इस बारेमें गम्भीर जबाबदारी है ही अतएव मार्गकी सेवाके कार्यक्रममें आभार किसका मानना होता है! लेकिन फिर भी मेरी भाषाकी कमिया पुष्टिमार्गका विषय न होकर मेरी व्यक्तिगत कमी या न्यूनताका विषय है उस कारण आभार नहीं मानू तो मैं कृतघ्नी बनूगा! इसके अतिरिक्त इसके मुखपृष्ट का डिजाइन बनानेवाले चि जगदीश शेठ और उनमे रग भरनेवाली चि ख्याति मेहता हैं उसके बाद मुद्रणसंबधी बहुत कुछ जबाबदारी श्रीमनीष बाराईने मेरे प्रत्येक प्रकाशनकी तरह निभाई है अतएव इन सबका आभार मानना कि नहीं!

सब पुष्टिमार्गीयोकेलिये पुष्टिबीजभावकी निश्चित दृढताकी शुभेच्छाओं के साथ!

वि स २०६१ दीपावली *गोस्वामी श्याममनोहर*

## ।।अमृतवचनावली।।

(१) जो कटोरी (गहने धरिके सामग्री आई सो तो भोग श्रीठाकुरजी आप ही के द्रव्यकू आरोगे सो आप ही को भयो जो श्रीठाकुरजीको द्रव्य खायगो सो मेरो नाहिं अरु मेरो सेवक

भगवदीय होयगो सो देवद्रव्य कबहू न खायगो जो खायगो सो महापतित होयगो ताते वा प्रसादमेंते भोजन करिवेको अपनो अधिकार न हतो, याकेलिये गोअन्‌कों खवायो अरु श्रीयमुनाजीमे पधरायो (यह सुनिके सब वैष्णव चुप होय रहे)

{श्रीमहाप्रभु घरुवार्ता - ३}.

(२) धनादिकी कामनापूर्तिकेलिये जो शास्त्रविहित श्रवण-कीर्तन-अर्चन आदि किये जावे हैं उनकु कर्ममार्गीय समझने उदरपोषणार्थ आजीविकाके उपार्जनके रूपमें जो श्रवण-कीर्तन-अर्चन आदि किये जावें उनकु तो खेतीबारीकी तरह 'लौकिक कर्म' ही कहनो चहिये मलप्रक्षालनार्थ गंगाजलकु प्रयागमें लावे जेसो वो निषिद्धाचरण हे, ओर एसो दुष्कृत्य करवेवालो पापभागी ही होवे है

{श्रीप्रभुचरण : भक्तिहंस}

(३) अपने सेव्य-स्वरूपकी सेवा आप ही करनी और उत्सवादि समयानुसार, अपने वित्त अनुसार करने, वस्त्राभूषण भांति-भांतिके मनोरथ करी सामग्री करनी

{श्रीगोकुलनाथजी-चतुर्थेश : २४ वचनामृत}

(४) जब सन्तदासको सगरो द्रव्य गयो तब श्रीठाकुरजीकी सेवामें मंडान श्रीठाकुरजीके द्रव्यसों राखे और श्रीठाकुरजीके द्रव्यमेंते चौबीस टका पूजी करि कोडी बेचते सो श्रीठाकुरजीकी पूजीमेंते तो कासिदको दियो न जाई सो कमाईको टका दिये तब इनकी मजूरीको राजभोग न भयो सो महाप्रसाद हू न लियो टकाके चूनको न्यारो भोग धरते सो राजभोग जानते, महाप्रसाद लेते, और नित्यको नेग बहोत श्रीठाकुरजीके द्रव्यसो होतो, ताते आपुनी राजभोगकी सेवा सिद्ध न भई (जाने) कासिदको दिये सो नारायणदासको लिखें जो तुम्हारी प्रभुतातें एक दिन राजभोगको नागा पर्यो जो मेरी सत्ताको भोग न धर्यो' या प्रकार सन्तदास

विवेकधैर्याश्रयको रूप दिखाये विवेक यह जो श्रीगुसाईजीको हूडी पठाई - आपुनी सेवा न भई - राजभोगको नागा माने धैर्य यह जो श्रीठाकुरजीको द्रव्य खान-पान न किये आश्रय यह जो मनमें आनन्द पाये - दुःखलेश न पाये

{श्रीहरिरायजी-द्वितीयेश भावप्रकाश ८४ वैष्णवनकी वार्ता-७६}

(५) पारिश्रमिकके रूपमें वित्त दे के कोइ दूसरेके द्वारा सेवा कराई जावे तो चित्तमें अहंकार तो बढे परन्तु वो भगवान्‌में कभी चाट नहीं सके भगवत्सेवार्थ कोई दूसरेसू पारिश्रमिक धन लिये जावेपे तो, जेसे पडा-पुरोहितनकु यज्ञयागादिको फल नहीं मिले परन्तु यजमानन्‌कु ही मिले, वेसे ही सेवाकर्ताकी सेवा निष्फल बन जाय हे यजमान, जेसे, दक्षिणा दे के पुरोहितन्‌के द्वारा यज्ञयाग करा लेवे, देसे ही भगवत्सेवा (आजकल जेसे पुष्टिभार्गीय हवेलीन्‌में वैष्णवगण गुसाई-मुखिया-भौतरिया-समाधानीकी बटालियनसू करवा लेवे हें वा तरह अनुवादक) करा लेवेमें क्या बुराई? वहा कर्ममार्गमे वो विहित होवेसे पुरोहितन्‌सू कर्म सम्पन्न करा लेनो आपत्तिजनक नहीं हे भक्तिमार्गमें, परन्तु, या तरहसू भगवत्सेवा करा लेवेको कहीं विधान उपलब्ध न होवेसू, कोइ दूसरेकु धन दे के सेवा करानो अनुचित ही हे भक्तिमार्गमें तो भगवदुक्त प्रकार (निज घरमें निजपरिजनन्‌के सहयोगद्वारा निजी तन-मन-धनसू ही) भगवत्सेवा करनी चाहिये

{सुरतस्थ ३/२ गृहाधिपति श्रीपुरुषोत्तमजी सिद्धा.मुक्ता. विवृ प्रका.२}

(६) "अत्र गृहस्थानविधानेन, स्वगृहाधिष्ठित-स्वरूप-भजन-परित्यागेन अन्यत्र तत्करणे भक्ति न भवति, इति सूचित भवति" अर्थात् यहा सेवोपयोगी स्थानके रूपमें निज घरको विधान उपलब्ध होवेसू, अपने घरमें बिराजते ठाकुरजीकी सेवा छोडके कोइ दूसरी जगह (अर्थात् हवेलीन्‌में जेसे आजकल

भेंट-सामग्री चढा के नित्य या मनोरथों की झाकी कर लेनो वैष्णवन्ने पुष्टिमार्गमें परमधर्म मान लियो हे वेसे) भगवत्सेवा करवेवालेन्कू कभी भक्ति सिद्ध नहीं हो सके हे

**{श्रीवल्लभात्मज-श्रीबालकृष्णजी भक्तिवर्धिनीव्याख्या २}**

{७} जो श्रीवल्लभकुल है वह अपने सेव्यस्वरूपपर कैसो स्नेह रखे हैं कि एक ओर द्रव्यको ढेर करो और दूसरी ओर श्रीठाकुरजी पधरावो तो श्रीवल्लभकुल इस द्रव्यकी ओर देखेगो भी नहीं, और श्रीठाकुरजीकू अतिस्नेहसू पधरा लेगो लेकिन जो या कलिके जीव हैं उनकू तो द्रव्य ही प्रिय लगे है या कारण वह तो श्रीठाकुरजीकी ओर देखेंगे नहीं और केवल वैभवकी ओर देखेंगे और तुरन्त मोहमें पडेंगे

**{श्रीमट्टूजी महाराजके ३२ वचनामृत ५}**

{८} लौकिक अर्थकी इच्छा राखिके जो भगवद्भजनमे प्रवृत्त होय सो सर्वथ क्लेश पावे हे इतने कछू लाभके लिये पूजादिकमें प्रवृत्त होय सो 'पाखडी' और देवलक' कह्यो जाय हे तासू लाभपूजार्थ सिवाय जामें निषेध नहीं हे एसी रीतिसू 'मेरो लौकिक सिद्ध होय' एसी इच्छासू जो भजनमे प्रवृत्त भयो होय सो 'लोकार्थी' कह्यो जाय

**{श्रीनसिहलालजी महाराज सिद्धान्तमुक्तावलि-टीका श्लोक १६-१७}**

{९} श्रीउदयपुर दरबारकु आशिर्वाद! याके द्वारा सूचित कियो जावे हे कि चल-अचल सम्पत्तिके आर्थिक तथा स्वामित्वकी व्यवस्थाके बारेमें योग्य व्यक्तिन्की एक सलाहकार समिति नियुक्त कर ली गई हे सेवा आदि विषयन्मे पुरातन तथा प्रवर्तमान प्रणालिके अनुसार काम कियो जायेगो, और यदि पुरातन परम्पराको बाध न होतो होयगो और समिति कोइ तरहके सुधारकी इच्छा रखती होयगी तो ऐसे सुधार भी स्वीकारे

जायेंगे और श्रीठाकुरजीको द्रव्य अपने व्यक्तिगत उपयोगमें नहीं वापर्यो जायेगो, जेसी कि परम्परा आज भी हे ही, और याकु निभायो जायेगो तो भी मेरे पूर्वजन्के समयसू चले आ रहे मेरे स्वामित्वके हक्क वा ही तरह कायम रहेगे या ही तरह आय-व्ययकु भी उन-उन बहीखातान्में लिख्यो जायेगो जेसे कि हालमें लिख्यो जा रह्यो हे

**{नि.ली गोस्वामितिलकायित श्रीगोवर्धनलालजीमहाराज डिक्लेरेशन मितिभाद्रशुक्लापचमी स १९४८ ता५/९/१८९३}**

(१०) महाराजकु जो आमदनी वैष्णव आदिन्सू होवे हे वामेंसू घरखर्चाके रूपमें महाराज ठाकुरजीकी सेवाको खर्चा निभावें हें ठाकुरजीकेलिये चल या अचल सम्पत्ति अलगसू निकालके वामेस् ठाकुरजीकी सेवाको खर्च नहीं निभायो जावे हे ठाकुरजीके वैभवको, नेगभोगको, आभूषण-वस्त्र आदिको खर्च महाराज स्वय अपनी आमदनीके अनुसार निभावे हे ठाकुरजीके सन्मूख भेट धरी नहीं जा सके ठाकुरजीकी भेंट देवमन्दिरमें भेजनी पडे हे महाराज वा भटकु अपने उपयोगमें ला नहीं सकें

**{नि.ली अमरेलीवाले गो.वागीशलालजीके आम-मुखत्यार "अमरेलीहवेली व्यक्तिगत हे या सार्वजनिक" मुद्देपर सन् १९०९-१० मे गायकवाडी बडौदा राज्यकी कोर्टमे दी गई जुबानी}**

(११) जेसे अपने पूर्वपुरुष स्वय अपने धर्मके सत्यस्वरूप तथा शुद्धाद्वैतसिद्धान्त कु पूर्णतया समझके वैष्णवधर्मको यथार्थ उपदेश लोगन्कु देते हते, ओर मध्यवर्ती कालमे जो सम्पत्ति आदिके कारणन्सू हमने बहोत हद् तक छोड दिये हें, या कारणसू अधिकाश लोगन्में साधारण सेवा और केवल वित्तजा भक्ति की ही रूढिके अनुसार जानकारी बच गयी हे

{नि.ली.गो.श्रीदेवकीनन्दनाचार्य-पचमेश द्वारा मुंबईके वैष्णवनकु लिखित पत्र : 'आश्रय' अप्रिल ८७ के अकमे प्रकाशित}

(१२) वकील यदि कोई भी पुष्टिमार्गीय मन्दिरमे, वैष्णव श्रीठाकुरजीकी सेवा और नेग-भोग केलिये, और श्रीठाकुरजीकी सेवाकु निभावेकेलिये भेट आदि दे के वित्तजा सेवा करते होंय और वा मन्दिरमे तनुजा सेवा भी करते होंय तो वो, "मन्दिर पुष्टिमार्गीय नहीं होवे" ऐसे आपको कहनो हे?

पू.पा.महाराजश्री : पुष्टिमार्गीय वैष्णवन्केलिये स्वतन्त्रतया तनुजा या वित्तजा सेवा करवेकी कोई प्रक्रिया नहीं ह, ओर एसी सेवाकी जाती होय तो वाकु 'साम्प्रदायिक मन्दिर' नहीं कह्यो जा सके

{सुरतस्थ ३/२ गृहाधिपति नि.ली.पू.पा.गो श्रीव्रजरत्नलालजी महाराज : "नडियादकी हवेली वैयक्तिक हे या सार्वजनिक" विवादमें पुष्टिमार्गके विशेषज्ञ साक्षीके रूपमें दी जुबानी}

(१३) : या ही तरह अपने यहा जो सन्मुखभेंट धरी जाय हे वो भी देवद्रव्य होवे हे, ओर वा सामग्रीकु काममें नहीं लियो जाये श्रीगोकुलनाथजी और श्रीचन्द्रमाजीके घरमें आज भी ये नियम पाल्यो जाय हे वो वल्लभकुलके श्रीयमुनाजीके पडाकू दी जाय हे दूसरा कोई वाको अनुकरण करे तो वो अनुचित हे. हम श्रीनाथजीके सामने जो सन्मुख भेट धरें हे, वो श्रीमहाप्रभुजीकी पादुकाजीकु धरे हे, फिर भी वो आभूषणन्में वापरी जावे हे, सामग्रीमें नहीं सन्मुखभेट धरवे मे बहोत अनाचार होवे हे या तरहसू आयो द्रव्य 'देवद्रव्य' बने हे वाकु लेवेवालेकी बुद्धि बिगडे बिना नहीं रहे

{नि.ली.गो.श्रीरणछोडलालजी महाराज राजनगर वचनामृत-४८४-८७}

(१४/क) वैष्णवन्के पास जो भी परम पदार्थ हे वाको अस्तित्व आजके ही दिनको आभारी हे कालकी भीषणता और परिस्थितिकी विषमता के अत्यन्त विकट युगमें श्रीमत्प्रभुचरणन्के दिव्य सिद्धान्तन्के ऊपर अटल रहवेपर ही जीवमात्रको ऐहिक और पारलौकिक कल्याण हो पावेगो अन्याश्रयके त्यागकी भावनापे जगत्के जीव दृढ रहे तो वैष्णव-हवेलीन्के वैभवके कारण जो वैष्णव घरसेवाकु भूल चुके हते, सयोगावशात् उन हवेलीन्मे श्रीके दर्शन आज बन्द भये हें, सो वैष्णवन्के घर पुन भगवत्सेवासू किलकिलाते हो जायेगे ये लाभ सम्प्रदाय और सम्प्रदायीन् केलिये मामूली नहीं रहेगो ईश्वरेच्छा अनाकलनीय होवे हे मोकु तो श्रद्धा हे कि या कठिन परीक्षामे हम सभीन्को श्रेय ही सिद्ध होवेवालो हे

(१४/ख) मेरे अनुयायीन्कु दो प्रकारकी दीक्षा दउ हू प्रथम कठी बाधनी तथा दूसरी ब्रह्मसम्बन्धदीक्षा कठी-बाधनी साधारण वैष्णवन्कु ही दी जावे हे तथा ब्रह्मसम्बन्ध विशेषरूपसू उन अनुयायीन्कु, जो सेवामें विशेषरूपसू बढनो चाहे हे पहली दीक्षाकु 'शरण-दीक्षा' कहें ह तथा दूसरी दीक्षाकु 'आत्मनिवेदन' कहें हे शरणदीक्षासू वैष्णव सिर्फ नामस्मरण करवेको ही अधिकारी बने हे तो सेवावाले वैष्णवकु ब्रह्मसम्बन्धदीक्षा लेवेके बाद ही अधिकर मिले हे ब्रह्मसम्बन्धवालो वैष्णव अपने घरमे ही सेवाको अधिकारी होवे हे हम स्वरूपकी सेवा नन्दालयकी भावनासू करें हे यालिये हम सातोंके सात पुत्रन्के 'घर' ही कहलावे हें ओर हमारे घरकी सृष्टि 'तीसरे-घरकी-सृष्टि' कहलावे हे

{नि.ली.गो.श्रीव्रजभूषणलालजी महाराज तृतीयेश
(१४/क) श्रीमत्प्रभुचरणप्राकट्योत्सव ता. २४/१२/४८के दिन मुबइके पुष्टिमार्गीय वष्णवन्की सभामें अध्यक्षीय प्रवचन.
(१४/ख) बयान मूर्तिबा कार्या सहा कमि देवस्थानविभाग

खड उदयपुर एव कोटा बजरिये कमिशन मुकाकरोली फाईल सख्या १/४/६४. श्रीद्वारकाधीशमन्दिर दिनाक ७/११/६५}.

(१५) आज मोकु अपने हृदयके उद्‌गार कहवे दो, मेरो हृदय जल रह्यो ह, मन्दिरन्‌मे मात्र द्रव्यसग्रहकी प्रवृत्ति बच गई हे, ओर वोही अनर्थन्‌की जड हे ऐसे मन्दिरन्‌के अस्तित्वसू कोई लाभ नहीं हमारो सम्प्रदाय सामुहिक नहीं वैयक्तिक हे सार्वकालिक तथा सार्वदेशिक अवश्य हे परन्तु सार्वजनिक नहीं "करत कृपा निज दैवी जीवनपर" या उक्तिमे 'निज' शब्दको प्रयोग कियो गयो हे दैवी जीव कहीं भी हो सके हैं परन्तु सार्वजनिक रूपसू नहीं आज हम 'पुष्टि' को नाम लेवेके भी अधिकारी नहीं हे! अपने मन्दिर कहा हे! आजको हमारो जीवन चार्वाक-जीवन हो रह्यो हे क्या हम, आज जा प्रकारको सम्प्रदाय हे, वाकु जिवाना चाहें हे? यदि सच्चे सम्प्रदायकु चाहते हो तो स्वरूपसेवा घर-घरमें पधराओ एव नामसेवापे भार रखो भक्तिकी प्राप्ति स्वगृहन्‌में सेवा करवेसू ही होयगी आजके इन मन्दिरन्‌सू कोई लाभ नहीं हे, क्योंकि इनमें द्रव्यसग्रहकी प्रधानता आ गयी हे, ओर जहा द्रव्य इन्द्रो होय हे वहीं अनर्थ हो जावे हे आज सम्प्रदायको विकृत स्वरूप यासू ही हे

**{ नि.ली. गो. श्रीकृष्णजीवनजी महाराज मुबई-मद्रास 'वल्लभविज्ञान' अक ५-६ वर्ष १९६५}**

(१६/क) हम श्रीवल्लभाचार्यजीकी आज्ञाका पालन कहा कर रहे हे? अपने यहा गृहसेवा कहा हे? केवल मन्दिरन्‌मे दर्शनसू क्या लाभ हे? श्रीमहाप्रभुजीकी आज्ञा हे "कृष्णसेवा सदा कार्या" यदि श्रीमहाप्रभुजी मन्दिरकु मुख्य मानते तो अपनी तीन परिक्रमान्‌मे अनेक मन्दिर स्थापित कर देते श्रीगुसाईजीने श्रीगिरिधरजीकु सातस्वरूपके मनोरथ करते समय या प्रकारकी चेतावनी दी थी मन्दिरस्थापन करते समय उनकु डर हतो कि घरमेंसू ठाकुरजी मन्दिरमें पधार जायेंगे मेरे पिताजीने कल

(उपर्युद्धृत १५ वचनमें) जो कह्यो वो अक्षरश सत्य हे तुम अपने घरन्में ठाकुरजीकु पधराओ ओर सेवा करो

(१६/ख) पुष्टिमार्गीय प्रणालिकाके अनुसार ट्रस्ट होनो उचित नहीं हे श्रीआचार्यचरणने प्रत्येक ब्रह्मसम्बन्धी जीवकु आज्ञा दी हे "गृहे स्थित्वा स्वधर्मत" (भक्तिवर्धिनी) अर्थात् गृहमें रहके स्वधर्माचारण करनो चहिये गोस्वामी बालक भी आचार्य होवेके बावजूद वैष्णव भी हे अत आचार्यश्रीकी उपरोक्त आज्ञाकु पालनो उनको भी कर्तव्य हे अत मेरो तो माननो यही हे कि आचार्यचरणके सिद्धान्तके अनुसार वैष्णवन्कु स्वयके घरमें श्रीठाकुरजीकी सेवा करनी चहिये ओर धर्मग्रन्थन्को पठन-पाठन करनो चहिये नहीं कि मन्दिरन्में जाके ट्रस्ट तो पुष्टिमार्गीय प्रणालिकासू सगत होनेवाली बात नहीं बल्कि अपनी प्रणाली भग करवेवाली बात हे

(दहिसरमें श्रीगोवर्धननाथ हवेली ट्रस्टके सस्थापक पू. पा.नि.ली. गो.श्रीव्रजाधीशजीमहाराज : (१६/क) 'वल्लभविज्ञान' अक ५-६ वर्ष १९६५, (१६/ख) 'नवप्रकाश' अक ८ वर्ष ८)

(१७/क) ओर जब जनरल पब्लिक ट्रस्ट हे तब ठाकुरजीकु गोस्वामीके सम्बन्धसू पृथक् करके ठाकुरजीकु सब सम्पत्ति अर्पण करके, अर्थात् भेट करके रिलीजिअस एडॉमिन्टके रूपमें भये वे ट्रस्ट हे ऐसी अवस्थामे इन ट्रस्टन्सूं जो नेग-भोग चलायो जावे हे, वो देवद्रव्यसू चलायो जा रह्यो हे देवद्रव्यको उपभोग करनेवालो अन्तमें देवलक ही होवे हे श्रीमदाचार्यचरणने प्रभुकी सोनेकी कटोरी गिरवी रखके जब भोग आरोगायो तब आपने वा द्रव्यसू समर्पित सारो को सारो प्रसाद गायनक् खवा दियो ये हे साम्प्रदायिक सिद्धान्त या प्रकारके आदर्शरूप सिद्धान्त्को जा प्रथासू विनाश होवे, आचार्यन्कु देवलक बनायो जाय, वा प्रथाकु जितनी शीघ्र सम्प्रदायसू हटा दी

जाय, उतनो ही श्रेय यामें गोस्वामिसमाज तथा वैष्णवसमाज को निहित हे

(१७/ख) भगवत्सेवा सम्प्रदायकी आत्मरूप प्रवृत्ति हे आचार सेवाको अग हे, सेवाके अनुकूल आचारको पालन कियो जानो चहिये आचार - पालनकु प्रमुखता देके भगवत्सवाको त्याग भी उचित नहीं हे भगवत्सेवा जेसे भी बने करो गुरुघरन्‌में मत भेजो - यदि हम भगवद्द्रव्यकु पेटमें डालेंगे तो वो अपराध हे ग्रन्थन्‌के अध्ययनके प्रति हमकु समाजकु आकृष्ट करनो चहिये

**{नि ली गो.श्रीदीक्षितजी महाराज मुबई-किशनगढ (१५/क) "आचार्योच्छेदक ट्रस्ट प्रथासे पुजारीपनकी स्थापना घोर सिद्धान्तहानि एव घोर स्वरूपच्युति" लेख पृष्ठ ७ (१६/ख) 'श्रीवल्लभविज्ञान' अक ५-६ वर्ष १९६५ में प्रकाशित वक्तव्य}**

(१८/क) जेसे स्वरूपसेवा स्वार्थबुद्धिवश ओर लौकिक कार्य समझके नहीं करवेकी श्रीमहाप्रभुजीकी आज्ञा हे, वसे ही नामसेवा भी वृत्त्यर्थ नहीं करनी चहिये, ऐसी आज्ञा श्रीमहाप्रभुजी निबन्धमें करें हें वृत्त्यर्थ सेवा करवेसू प्रत्यवाय (दोष) लगे हे जेसे गगाजमुनाजलको उपयोग गुदाप्रक्षालनार्थ नहीं कियो जा सके, वैसे ही सेवाको उपयोग भी वृत्त्यर्थ नहीं करनो चहिये

(१८/ख) तन ओर वित्त प्रभुकेलिये वापर्यो जाय तो मन भी प्रभुमे अवश्य लगे ही हे अतएव श्रीवल्लभने उपदेश कियो हे कि "तत्सिद्धयै तनुवित्तजा" मानसी जो परा हे वो सिद्ध करनी होय तो तनुवित्तजा सेवा आवश्यक हे तन और वित्त कहीं एकत्र लगायो जाय तो चित्त भी वहा दिन-रात लग्यो रह सके हे दलालीको व्यवसाय करवेवालेके व्यावसायमे केवल तनसू श्रम कियो जावे हे परन्तु वामे वित्त स्वयको लगायो नहीं जावे हे अतएव बजारके भावन्‌की घटवढमें दलालकु तनिक भी मानसिक चिन्ता होवे नहीं कोइ बच्चाको पिता केवल ट्युशन फी देके

बादमें समझ ले हे कि बच्चा परीक्षामे पास हो ही जायेगो इन तीनोंकु फलप्राप्ति होवे नहीं क्योंकि तनुजा-वित्तजा दोनों नहीं लगी अब तनुवित्तजा दोनों लगावेवालेके चित्तप्रवण होवेको उदाहरण देखें एक दुकनदार दुकान और मालकी खरीदीमें पूजी लगा के व्यापार शुरु करे सुबहसू रात तक वहा उपस्थित रहके जब तन भी व्यापारमें लगावे हे तो या कारणसू दिनरात वाकु व्यापारके विचार आते रहे अच्छी तरह व्यापार केसे करू - केसे व्यापार बढे अत पुष्टिमार्गे प्रभुमे आसक्ति सिद्ध होवेकेलिये मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया समझायी गयी हे कि भावपूर्वक भक्तकु तनुवित्तद्वारा सेवा करनी चहिये

**{पू पा गो श्रीगोविन्दरायजी महाराज पोरबन्दर - (१६/क) 'सुधाधारा' पृ.११४. (१६/ख) 'सुधाबिन्दु' पृ.७३}**

(१९) वल्लभमतमे ये सिद्धान्तत गलत हे ओर ऐसे देवस्थानन्के चढावाको प्रसाद भी खायो नहीं जा सके हे, क्योंकि वहा देवलकत्व हो प्रधान हे आजके युगकुं देखते भये जहा न्यास करनो आवश्यक हे वहा उपर्युक्त सिद्धान्तनकु ध्यानमें रखके ही न्यास करनो आवश्यक हे, जासू देवलकवृत्तिसू बच्यो जा सके यदि एसी व्यवस्था नहीं की गइ तो देवद्रव्य होवेगो, जाके सेवन करवेसू आचार्य स्पष्ट कहे हे कि नर्कपात होयगो

**{नि ली गो श्रीरणछोडाचार्यजी प्रथमेश "हमारी धार्मिक स्थितिका वर्तमान स्वरूप एव भविष्यकी व्यवस्थाहेतु प्रतिवेदन (दि २५/२/८१) पृ१२}**

(२०) क्योंकि श्रीनाथजी स्वय वाके भोक्ता हे किन्तु वैष्णव-वृन्द तथा सेवकगण भी वा महाप्रसाद लेने तकके अधिकारी नहीं हे यह आचार्यचरणके इतिहाससू प्रत्यक्ष प्रमाणभूत हे वाके महाप्रसाद लेवेको केवल गायकू ही अधिकार हे अन्यथा वा देवद्रव्यके उपभोग करवेसू निश्चय ही अध पतन हे सब प्रकारके दान-चढावा व वसूल वसूली करवेको उल्लेख कियो गयो

हे, वो भी सम्प्रदायके सिद्धान्तसू नितान्त विरुद्ध हे अपने सम्प्रदायकी प्रणाली के अनुसार जो अपने सम्प्रदायके सेवक हे, उनको ही द्रव्य गुरु-शिष्यके सम्बन्धसू लेके सेवामें उपयोग करायो जा सके हे सम्प्रदायमें सब प्रकारके दान-चढावान्को उपयोग सेवामें नहीं कियो जाय हे, और कदाचित् कहीं कियो जातो होय तो वो सम्प्रदायके नियमन्सू विरुद्ध होवे के कारण बन्द कर देनो चहिये

**{पू पा गो.श्रीघनश्यामलालजी-सप्तमेश "श्रीनाथद्वारा ठिकानेके प्रबन्धकी दिल्ली-योजनाकी आलोचना (ता १-२-५६)"}**

(२१/क) प्रश्न 'देवद्रव्य' कायकू कहें हे? 'देवद्रव्य'को मतलब, देवको द्रव्य ऐसो द्रव्य या पदार्थ जो देवकु ही उद्देश्य बनाके अर्पण कियो गयो होय वाकु 'देवद्रव्य' कहें हे याही प्रकार गुरुकु उद्देश्य बनाके अर्पण किये गये द्रव्यकु 'गुरुद्रव्य' कह्यो जाय हे प्रभूकी प्रसादी वस्तूकू 'महाप्रसाद' कहें हे या प्रकारके मन्दिरन्में ठाकुरजीके सन्मुख भेट धरे जाते द्रव्यकू और ट्रस्टकी ऑफिसमे आते द्रव्यकु तो स्पष्ट शब्दन्में 'देवद्रव्य' कह्यो जा सके हे, और वा द्रव्यसू सिद्ध होती सामग्रीमें भगवत्प्रसादी होवेके बाद महाप्रसादपनो तो आवे हे परन्तु वाके साथ वामे देवद्रव्यपनो भी रहे ही हे याही कारण वैष्णवन्कु ऐसे महाप्रसादकु देवद्रव्य समझके ही व्यवहार करनो चहिये ऐसे महाप्रसादकू लेनेमें देवद्रव्यको बाध तो रहे ही हे

(२१/ख) मन्दिरके स्थलके फेरबदलके बारेमे श्री गो पू १०८ श्रीबालकृष्णलालजी ने कह्यो कि पुष्टिमार्गमें सार्वजनिक मन्दिरकी परम्परा नहीं हे यामें व्यक्तिगत स्वरूप, निजी स्वरूप, की ही बात हे, और याही कारण पुष्टिमार्गमें सेवाप्रकार देवालयके प्रकार जेसो नहीं हे मन्दिरको निर्माण भी घर जेसो होवे हे कहीं भी ध्वजा-शिखर नहीं होवे वैष्णव भी घरमें ही सेवा करे हे तथा वाकु 'मन्दिर' ही कहें हे

{'सेवा-देवद्रव्य-विमर्श' ग्रन्थके सहलेखक पू.पा.गो. श्रीबालकृष्णलालजी महोदय सूरतस्थ ३/२ गृहाधीश (२१/क) 'वैष्णववाणी' अंक३, वर्ष मार्च १९८३ (२१/ख) 'गुजरात समाचार' अंक २५/५/९३मे प्रकाशित}

(२२) वह्यसम्बन्ध लेके सेवा करवेसू प्रत्येक इन्द्रियन्को भगवान्में विनियोग होवे हे मन्दिर-गुरुघर केवल उपदेशग्रहण करवेकेलिये हें सेवा अपनकु अपने घरन्में करनी हे

{पू.पा.गो.श्रीमथुरेश्वरजी सस्थापक - श्रीगोवर्धननाथजी मन्दिर, होलिवुड्,एन् वाय्,अमेरिका' 'वल्लभविज्ञान' अंक ५-६ वर्ष १९६५}

(२३) प्रश्न अपने सम्प्रदायमें मन्दिरकु 'मन्दिर' न कहके 'हवली' क्यों कह्यो जावे हे?

उत्तर सामान्यतया इतर हिन्दु-सम्प्रदायमे 'मन्दिर' शब्द देवालयके अर्थमें प्रयुक्त होवे हे परन्तु ऐसे देवालयके रूपमें मन्दिर जेसी सस्थाको पुष्टिमार्गमें अस्तित्व ही नहीं हे क्योंकि पुष्टिमार्गमें अपने माथे जो प्रभु पधराये जावें हें वे प्रभुस्वरूप ओर उनकी सेवा हरेकको व्यक्तिगतरूपमे वाकी भावनाके अनुसार पधराये जावे हें स्वयके श्रीठाकुरजीकी सेवा पुष्टिमार्गीय जीवको एकमात्र स्वयको कर्तव्य बन जातो स्वयको ही धर्माचरण हे पुष्टिमार्गीय सेवा सामूहिक जीवनको विषय नहीं परन्तु व्यक्तिगत जीवनको विषय हे जेस लोकमें पत्नी अथवा माताको पति अथवा पुत्र की सेवा या वात्सल्य प्रदान करवेको वाको व्यक्तिगत धर्म उत्तरदायित्व ओर अधिकार होवे हे वा ही तरह जा सेवकके जो सेव्यस्वरूप होवे हें वा सेव्यस्वरूपकी सेवा वाको व्यक्तिगत प्रवृत्ति नहीं परन्तु सेवा तो स्वयके आन्तरिक जीवनके साथ सम्बन्ध रखवेवाली बात होवेसू स्वयके जीवनकी स्वयके घरमें की जावेवाली धर्मरूप प्रवृत्ति हे अत इतर हवेलीन्की

तरह जेसे 'श्रीनाथजीको मन्दिर' शब्द, रूढ हो गयो होवेसू, प्रयोग कियो जावे हे वस्तुत तो सामुहिक दर्शन या सेवा जहा की जाती होय एसे अन्यमार्गीय सार्वजनिक देवस्थान जेसो वो मन्दिर नहीं हे

{सेवा-द्रेवद्रव्य-विमर्श' ग्रन्थके लेखक अ.सो.वा.पू.पा.गो श्रीवल्लभरायजी सुरतस्थ ३/२ गृहगोस्वामी 'पुष्टिने शीतल छायडे' पृ.त्र १५७-१५८}

(२४) श्रीमहाप्रभुजीने अलग-अलग मन्दिरन्की प्रणाली खडी नहीं करी, परन्तु यामें जगद्गुरु श्रीवल्लभाचार्यकी एक दूरदृष्टि हती प्रत्येक वैष्णवको घर नन्दालय बननो चहिये कोइ मन्दिरके पडौसमें एक बहन रहे हे वाकु मन्दिरकी आरतीके घन्टानाद सुनाई पडे हे सेवा करवेकु बैठी भइ वो बहन ठाकुरजीके वस्त्र बडे करके स्नान करावे जा रही हती कि आरती घटानाद सुनाई दिये वो ठाकुरजीकु वहीं वाही अवस्थामें छोडके मन्दिरकी तरफ दौड गई थोडी देरके बाद लौटके घर आई अब विचार करो कि या तरहसू कोई सेवा करे तो वामे आनन्द कभी आ सके क्या? यहा तो प्रत्येक वैष्णवको घर नन्दालय हे

{श्रीमद्भागवततत्त्वमर्मज्ञा श्रीगिरिराजजीहवेली (बडौदा) सचालिका, अमेरिकामें सार्वजनिक मन्दिरार्थ स्वय के सेव्य श्रीगोवर्धननाथजीके स्वरूप पधराके वहा नवपुष्टि चेतनाको सचार करवेवाली पू.पा.गो. सुश्रीइन्दिराबेटीजी 'वैष्णवपरिवार' अक जून ९०}

(२५) "अति धन्यवादार्ह हे कि आपने इतनी मेहनत करके सम्प्रदायके सिद्धान्तन्कू कोर्टमे समझाये"— हमारो यामें पूरो सहयोग रहेगो, तनमनधनसे हमारे सभी चि.बालक या कार्यमें सहयोग करवेकु तैयार हे"

{पू.पा.गो.चि.श्रीहरिरायजी(जाम.) के सिद्धान्तनिष्ठ पितृचरण नि.लीगो. श्रीव्रजभूषणलालजी महाराज मोकु (प्रस्तुत-सम्पादकको) भेजे दि.२६-१०-८६ और ७-११-८६ के पत्रन्में}.

(२६) मैं तो एक बात कहनी चाहूगो कि समाजके भीतर ओर अपने सम्प्रदायमे इतनो अधिक सिद्धान्तवैपरीत्य हो गयो हे कि गुजरातके एक गावमें पुष्टिमार्गके ही अपने सम्प्रदायके ही, दो मन्दिर हे ओर मन्दिरन्की दीवाल भी एक ही हे, परन्तु ऐसी जबरदस्त प्रतिस्पर्धा वैष्णवसमाजमे पैदा हो गई हे कि मानों एकदूसरेके साथ स्पर्धा करते होय ऐसे ईर्ष्या-द्वेषको वातावरण जब सेवाके क्षेत्रमे उत्पन्न हो जावे तो वासू बढके लोकार्थित्व ओर क्या हो सके हे! जो शॉ-बिजनस सम्प्रदायमें चल रह्यो हे वाको निवारण होय एतदर्थ एक सुन्दर चर्चासभाको आयोजन भयो हे मेरी सविशेष विनती ये हे कि एसे सभी सिद्धान्तवैपरीत्यकी फजीहत जो सर्वाधिक कहीं होती होय तो गुजरातमे होवे हे भागवतमे भी लिख्यो भयो हे कि 'गुर्जरे क्षीणता गता'' अत सिद्धान्तकी सत्यनिष्ठा कहीं साधनी होय तो ओर श्रीमहाप्रभूजीके पुष्टिसिद्धान्तन्के सद्जागरणकी कहीं आवश्यकता होय तो गुजरातमें एसी सभान्को आयोजन होनो चहिये

{पू.पा.गो.चि श्रीद्वारिकेशकुमारजीमहोदय ''पुष्टिसिद्धान्त चर्चासभा (दि.१०-१३ जनवरी, ९२. पार्ले-मुंबई) विस्तृतविवरण'' पृ.३१७-३१८}.

(२७) पुष्टिमार्ग गुप्त हे, दिखावाकेलिये तो हे ही नहीं, भक्त ओर भगवानके आन्तरिक सम्बन्ध दृढ करवेको मार्ग हे दोनोंके सबध एसे होने चहिये कि कोइ तीसरेकु वाकी जानकारी न हो पाये अपनो अपने भगवान्के साथ क्या सम्बन्ध हे याकु

दूसरे कोइ व्यक्तिकू जतावेकी आवश्यकता ही क्या हे? प्रशसा पावेकू? स्वयंकी महत्ता बढावेकू? ये तो सभी कुछ बाधक हें

**{पू पा गो चि श्रीद्वारकेशलालजी महोदय (श्रीवल्लभाचार्य प्राकट्यपीठ अमरेली-कादीवली-चम्पारण्य-सूरत) 'पुष्टि नवनीत' पृ.१२}**

(२८/क) प्रश्न आज चल रहे जो डिस्प्युट् हैं वामे कितनेक सिद्धान्त चर्चित हो रहे हैं जैसे कि नये मन्दिर नहीं खोलने, ट्रस्टमन्दिर नहीं बनाने, ठाकुरजीके नामपे द्रव्य नहीं लेनो, ठाकुरजीके दर्शन नहीं कराने, तथा बिना समझे-सोचे कोईकू ब्रह्मसम्बन्ध नहीं देनो इन सब विषयमें आपको अभिमत क्या है?

उत्तर देखो मन्दिरकी जहा तक स्थिति है तो ये बात सत्य हैं के पुष्टिमार्गीय प्रकारसु मन्दिर तो मात्र एक ही है, और सबकी घरकी स्थिति हती आज मन्दिर जितने हैं अथवा जिन स्थाननकू अपन मन्दिर समझे हैं वो स्थान वाकु अपन 'मर्यादापुष्टि मन्दिर' कह सके हैं, 'पुष्टिमन्दिर' नहीं पुष्टिको प्रकारतो मात्र गृहसेवामें ही हैं

(२८/ख) आजसे डेढसौ साल पहले, श्रीमहाप्रभुजीके समय से तब तलक पुष्टिमार्गमें कोई भगवद्-मन्दिर खोलनेका क्रम नहीं था प्रत्येक वैष्णव घर घरमें सेवा हो उसका आग्रह रखता था वैष्णव अपने घरमें श्रीठाकुरजीके स्वरूपको सेव्य तरीके पधराकर गुरुघरकी प्रणालिकानुसार सेवा करते थे

**{पू पा गो. श्रीव्रजेशकुमारजी तृतीयेश २७/क 'आचार्यश्रीवल्लभ' अगस्त १९९४, अक ५, पुष्टिमार्गवर्तमान, प्रश्न-उत्तर ४, पृ. ७, २७/ख व्रज मोहे बिसरत नाहीं, पृ १४०-४१}**

(२९) श्रीमहाप्रभुजी आज्ञा करे हैं कि दुनियामे भटकते रहते अपने मन-चित्तकू श्रीठाकुरजीके साथ जोडकर उनकी

तनुवित्तजा सेवा करनी  तनुवित्तकी सेवा अर्थात् अपने कमाये भये अपने धनसू, अपने घरमें श्रीठाकुरजीकी अपने शरीरसू सेवा करनी वह

{पू.पा.गो.चि. श्रीवागीशकुमारजी 'वल्लभीय चेतना', अक्टूबर १५, २००३, पृ. ४}

(३०) चित्त भगवत्प्रेममें परिपूर्ण हो जावे है, पूर्णत भगवानमे जुड जावे है, तन्मय और तल्लीन हो जावे है तब परा सेवा भई यह 'मानसी सेवा' कहलावे याके साथ मनुष्यकू शरीरसू भी सेवा करनी चहिये  तनुजा सेवासू शरीरकी शुद्धि होवे है अहता अर्थात् हूपनेकू नाश होवे है धनसू होती सेवा वित्तजा सेवा है वासू ममता-मेरेपनेकू नाश होवे है अहता और ममता एक दूसरेके साथ जूडी रहे हैं अतएव तनुजा और वित्तजा सेवा साथ होनी चहिये यामे प्रधानता तनुजासेवाकी है कवल धन देनेसू सेवा नहीं होवे यासू राजसी वृत्ति आवे है

{पू.पा.गो.चि. श्रीद्वारकेशलालजी महोदय, षष्टेश, वडोदरा  श्रीमद्भगवद्गीता पुष्टिदर्शन पृ. १२५}

oooooooooooo

oooooooo

oooo

o

# विषयानुक्रमणिका


| विषय | पृष्ठ |
|---|---|
| पुष्टिसिद्धान्तचर्चा-वार्षिकोत्सवका उद्देश्य | १ |
| नवरत्नग्रथके अध्ययनकेलिये विषय | १ |
| पुष्टिमार्गीय आचारसहिता अर्थात् षोडशग्रथ | २ |
| पुष्टिभक्तिमार्गमें प्रवृत्तको नवरत्नका उपदेश | ३ |
| समझ श्रद्धा एव निष्ठानुसार पुष्टिमार्गके सिद्धान्तोंका वर्गीकरण | ४ |

(१) बाल्यावस्था ४
(२) कुमारावस्था ४
(३) किशोरावस्था ५
(४) युवावस्था ५
(५)प्रौढावस्था ६
(६) वृद्धावस्था ६
नवरत्न ग्रथ किशोरबोध है ६
पुष्टिमार्गकी माता श्रीयमुनाजी मर्यादामार्गकी माता
श्रीगायत्री एव प्रवाह मार्गकी माता श्रीलक्ष्मीजी ७
आधुनिक मनोवैज्ञानिक ऐरिक्सनकी दृष्टि एव
नवरत्न ग्रन्थ समझनेमें उसकी उपयोगिता ९
बालकके विकासकेलिये प्रथम सोपानविश्वास १०
श्रीयमुनाजी द्वारा पुष्टिमार्गीय विश्वासकी प्राप्ति १२
विश्वासका उल्टा अविश्वास १३
विकासका दूसरा सोपान आरम्भ १४
लज्जा, अनिश्चय दूर करनेकेलिये बालबोध
एव सिद्धान्तमुक्तावलीमें श्रीमहाप्रभुजीका उपदेश १६
आरम्भका अपोजिट अपराधबोध १७
श्रीमहाप्रभुजीने अपनी सामर्थ्यसे हमें अपराधबोधरहित बनाया १८
तीसरा सोपान उद्योग/पुरुषार्थ २०
उद्योगका प्रतिबधक लघुताग्रथि/इन्फीरियारीटि कॉम्प्लेक्स २१
विकासका चौथा सोपान आत्मनिर्धार/सेल्फ
आइडेन्टिफिकेशन २२
आत्मनिर्धारका अभाव पालनकी कमीके कारण २४
विकासका पांचवा सोपान घनिष्ठता/इन्टिमेसी २५
घनिष्ठताके अभावमें अकेलेपनका दोष और उसे दूर
करनेके उपाय २६
विकासका छट्ठा सोपान सृजनशीलता/प्रोडक्टिविटी २७
विकासका सातवा सोपान आत्मस्वरूपबोध/
ईगो- आइडेन्टिफिकेशन ३१

आत्मस्वरूपबोधका विरुद्ध आत्मविभाजन/ईगोस्प्लिट् ३२
आत्माके अविभाजनके लिये श्रीमहाप्रभुजी द्वारा ली गई सावधानी ३५
उद्वेग और चिंताके बीच रहे हुवे सबंधका विचार ३७
(१) उद्वेगसे उत्पन्न होती चिंता ३८
(२) उद्वेगरूपा चिंता ३९
(३) उद्वेग उत्पन्न करनेवाली चिंता ४०
चिंताके स्वरूपका विचार ४०
नवरत्न, अन्त करणप्रबोध, विवेकधैर्याश्रय ग्रंथोंमें वर्णित चिंताके विषयकी आन्तरिक सगति ४२
बालकके स्वस्थ मानसिक विकासका सोपान [1]विश्वास फिर [2]आत्मनिर्भरता और उसके बादमे [3]आरम्भ ४८
आत्मनिर्भरताका प्रयास सफल न होनेपर लज्जा और अनिश्चय ४९
पुष्टिमार्गीयों की लज्जा और अनिश्चय को श्रीमहाप्रभुजीने सिद्धान्तमुक्तावली में दूर किया ५०
पुष्टिमार्गीयका स्वस्थ विकास (आत्मस्वरूपबोध) केलिये जरूरी [4]उद्योग, [5]आत्मनिर्धार [6]घनिष्ठता [7]सृजनशीलताका षोडशग्रंथोंमें विचार ५१
(४) उद्योग ५१
(५) आत्मनिर्धार ५५
(६)घनिष्ठता ५६
(७) सृजनशीलता ५८
चिंताकी अप्रासगिकता भजनीय या आश्रयणीय श्रीकृष्णके स्वरूपविचारके आधारपर ५९
प्रमेयबलकी अनुपलब्धिमे श्रीमहाप्रभुजीकी वाणीका प्रमाणबलही मार्गपर चलनेके लिये प्रज्ज्वलित मशाल ६५
उद्वेगकी धुनाई या जुगालीसे होती चिंताकी मनाही ६७
काम क्रोधकी धुनाई या जुगाली करनेसे पापाचार ६९
काम क्रोधकी धुनाई या जुगाली करनेसे नाश ७१

धुनाई या जुगाली रहित कामक्रोध अगर धर्माविरुद्ध
हो तो हमारे भीतर शक्ति पैदा करता है ७२
उद्वेगके मुख्य दो कारण इष्टवियोग और अनिष्टसयोग ७४
इष्टानिष्टके वियोग-सयोगकी प्राथमिक अवस्था
समझनेपर चिताके फिनोमिनाको समझोगे ७६
उद्वेगकी पहली शर्त सभानता निद्राधीन या बेहोश
व्यक्तिको कभी उद्वेग नहीं होता ७७
व्यवसायात्मक ज्ञान यह मूल है जहा उद्वेग उत्पन्न होता है ७८
चिताको समझनेकेलिये क्लिफ्र्डमोर्गन्के व्यवसायात्मक
ज्ञानकी विवेचना ७९
क्लिफ्र्डमोर्गनकी दृष्टिसे व्यवसायात्मक ज्ञानसे तीन
प्रकारकी अनुभूति ८०
(क) [1]उद्दीपनसे [2]स्नेह, स्नेहसे [3]आशा ८०
(ख) [1]उदासीनतासे [2]भय, भयसे [3]निराशा
८०
व्यवसायात्मक ज्ञान और अनुव्यवसायात्मक ज्ञान ८२
चिताके कारण अनुव्यवसायात्मक ज्ञानके साथ
नवरत्नग्रथकी सगति ८३
शारीरिकमानसशास्त्रानुसार चिता और चिंतनकी समझ ८४
(१) ओटोनोमस् सिस्टम् ८४
(२) सिम्पथैटिक सिस्टम् ८४
(३) पैरासिम्पथैटिक सिस्टम् ८५
पेरासिम्पथैटिक सिस्टम् को जगानेपर चितापर काबू
पाया जा सकना ८७
चिंतन कि चिता/निर्विषय अथवा सविषय ८८
निर्विषय चिंतन ८८
सविषय चिंतन ९०
नवरत्नके उपदेश द्वारा पुष्टिमार्गीय सविषय समाधिसे
चिताको उद्वात्तीकरण ९२
समर्पणपूर्वक सेवा करने वाले भक्तको निश्चिंत होना जरूरी ९५

सुखदु खादिके आवर्तनसे जीवनकी जीवत्तता ९६
जीवनके लचीले स्वभाव (अन्-प्रेडिक्टेबल फ्लक्च्युऐशन)
से उद्वेगका उद्भव १०१
भक्ति चिताको सहन नहीं कर सकती १०३
चिताको दूर करनेके लिये चितनका उपदेश १०६
परमात्मामें जीवन जीनेका आत्माका अभिगम ११२
नवरत्नमें उपदिष्ट चितनके प्रकारोंको पेटेन्ट् मेडिसन्
नहीं मान लेना ११३
भगवानके बारेमें निश्चित नहीं होना ११८
नवरत्न ग्रथका स्वाध्याय १२२
श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण
१ (आन्तरिकोपायोपदेश) निवेदितात्मभि (कर्तृप्रज्ञाविवेक) *कापि चिन्ता*
*कदापि न कार्या इति पुष्टिस्थो भगवान्* (सम्प्रदानमतिविवेक) *अपि*
*लौकिकीं च गति न करिष्यति* १२३
सघन अक्षरोसे आर्थिकोपदेशका निरूपण १२४
वाचनिक और आर्थिक उपदेशमे अतर १२५
नवरत्नमें वाचनिक और आर्थिक उपदेश १२५
भक्तिमार्गमे प्रवृत्तको नवरत्नका उपदेश १२६
तिरछे अक्षरोंवाले शब्दोंसे रोगका वर्णन १२७
अन्डरलाईनस औषधिका वर्णन १२८
प्रवाहीजीवको लौकिक गतिके कारण उद्वेग नहीं होता १२८
लोकमें प्रवृत्ति निवेदितात्माको उद्विग्न करेगी १२९
यह उपदेश निवेदितात्माकी चितानिवारणके लिये है १३१
विषयकेसाथ लेन-देन करती बुद्धिके प्रकार १३४
प्रज्ञा का स्वरूप १३४
प्रतिभाका स्वरूप १३५
कर्तृप्रज्ञा विवेक १३५
सम्प्रदानमतिका विवेक १३६
निवेदितात्माको किसी भी प्रकारकी चिता नहीं करनी १३६

आत्मचिंतनकरने वाली बुद्धि मनसे नहीं दौडती १३७
परमात्मानुगामिनी बुद्धि विषयसे विचलित नहीं होती १३७
'नवरत्न सूत्र है और विवेकधैर्याश्रय उसका भाष्य है'
विधानकी परीक्षा १४०
आत्मनिवेदीका आत्मनिर्धार ही सहज उद्वेग उत्पन्न
करता है १४१
चितानिवृत्तिकेलिये कायिक, वाचिक और आन्तरिक उपाय १४२
नवरत्न-विवेकधैर्याश्रय ग्रथोकी सगति १४२
विवेक-धैर्य-आश्रयके शिखर पर पहुचनेके लिये
तलेहटीसेशुरुआत करनी पडेगी १४४
तलेहटीकी ऊचाई और शिखिरकी ऊचाईका भेद
समझना पडेगा १४५
१ प्रभुसे प्रार्थना नहीं करनी यह प्रथम विवेक १४६
२ अभिमान नहीं करना यह दूसरा विवेक १४७
३ हठाग्रहत्याग यह तीसरा विवेक १४८
४ कर्तव्याकर्तव्यके बारेमें सजगता - चौथा विवेक १४९
धैर्यके चार प्रकार सहज प्रतीकार या अनाग्रह, सहन,
त्याग और असामर्थ्यभावना १५०
बौद्धिक अनाग्रह १५०
लगनवाला अनाग्रह १५०
व्यवहारिक अनाग्रह १५१
बौद्धिक, लगनवाला कि व्यवहारिक हठाग्रह नहीं रखना १५१
धैर्यकी परिभाषा १५१
लगनके अनाग्रह द्वारा धैर्यको प्राप्तकरनेकी शुरुआत १५२
लगनके हठाग्रहसे धैर्य खडित होगा १५३
लगनके अनाग्रहसे त्यागकी कला प्राप्त होती है १५४
१ अनाग्रहितया प्रतीकार शक्य हो तो वह धैर्यमे बाधक
नहीं परन्तु साधक कदम १५५
२ प्रतीकार शक्य न हो तो दु खोको सह लेना यह धैर्यका
दूसरा कदम १५६

३ स्वत कुछ आरम्भ नहीं करना यह धैर्यका
तीसरा कदम १५६
४ असामर्थ्यकी भावना चौथा कदम १५६
आश्रयकी परिभाषा १५७
१ आश्रयका पहला मुकाम मन-वाणीसे प्रभूकी शरणागति १५८
२ आश्रयका दूसरा मुकाम मन-वाणी-कायासे अन्याश्रय
नहीं करना १५९
अन्याश्रय कहने पर अन्य कौन? १५९
डॉक्टर या वकील इत्यादिके साथ का व्यवहार आश्रय
नहीं होता १६०
आराध्यदेवका ही आश्रय १६१
३ आश्रयका तीसरा मुकाम प्रभु पर चातक जैसा विश्वास १६२
परमात्मामे विश्वास यह आश्रयका महत्वपूर्ण अग है १६५
४ आश्रयका चौथा मुकाम 'प्राप्त सेवेत निर्मम.' १६६
नवरत्न सूत्र है और विवेकधैर्याश्रय भाष्य है १६७
[illegible]
२ (आन्तरिकोपायोपदेश) सर्वथा तादृशै जनै (साक)
निवेदन तु (सर्वथा) स्मर्तव्य (कर्तृस्मृतिविवेक), सर्वेश्वर
सर्वात्मा (सप्रदानप्रज्ञाविवेक) च निजेच्छात. करिष्यति.
१६८
सप्रदानप्रज्ञाविवेक १६९
निवेदनन्तु स्मर्तव्य (कर्तृस्मृतिविवेक) १६९
सर्वेश्वर च सर्वात्मा (सप्रदान के बारेमें प्रज्ञा
प्राप्तकरनेका विवेक) १७०
[illegible]
३ (आन्तरिकोपायोपदेश) प्रभु सम्बन्धो न
प्रत्येकम् (कर्तृकर्तृबुद्धिविवेक), अत सर्वेषाम् अन्यविनियोगे अपि
स्वस्य का चिन्ता' इति स्थिति १७२
अपनोंका अन्यविनियोग होता हो तो भी चिता नहीं करनी १७२

निवेदनका भान रखो अभिमान नहीं १७३
निवेदनके स्वरूपका विचार जरूरी १७४
निवेदन अपने सबधोंका होता है १७७
भक्तिके सबधसे हम कृष्णकी आत्मा बन सकते हैं १८४
प्रभुकी प्रभुतामें विरोधाभास नहीं है १८५
पाच प्रकारके प्रतिबधोमे सेवा छोड देनी चाहिये १८६
श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण
४ {आन्तरिकोपायोपदेश} सर्वेषा प्रभु सम्बन्धो न प्रत्येकम् (कर्तृकर्मबुद्धिविवेक) ; अत स्वस्य अन्यविनियोगेऽपिका चिन्ता' इति स्थिति १९०
अपने अन्यविनियोगके बारेमें भी चिता नहीं करनी १९०
आत्मनिवेदनका कर्ता और उसमें प्रभुको निवेदित हुवे कर्मके बारेमे सच्ची बुद्धि रखनेके विवेकसे चिता त्यागी जा सकती है १९१
अविवेकीकेलिये चिता निवारणका उपदेश नहीं है १९१
श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण
५ {आन्तरिकोपायोपदेश} ज्ञानाद् अथवा अज्ञानाद् यै कृष्णसात्कृतप्राणै (कर्तृबुद्धिविवेक) आत्मनिवेदनम् कृत तेषा का परिदेवना! १९५
भक्ति और चिता परस्पर विरोधी होते है २०५
जिसने प्राण कृष्णसात् किये हों उसे परिदेवना नहीं होती २०६
अज्ञानाद् अथवा ज्ञानात्का अनर्थ २०८
कृष्णसात्कृतप्राण यह आर्थिक+वाचनिक उपदेश है २०९
श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण
६ {आन्तरिकोपायोपदेश} तथा श्रीपुरुषोत्तमे (ज्ञप्रधानबुद्धिविवेक) निवेदने चिन्ता त्याज्या हरि, हि स्वत समर्थ २१०
समर्थो हि हरि स्वत २११
श्रीपुरुषोत्तमे तथा निवदने चिन्ता त्याज्या २१३

श्लोका वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

७ {आन्तरिकोपायोपदेश} हरि हि स्वत समर्थ, (तस्मात्) श्रीपुरुषोत्तमे (सम्प्रदानबुद्धिविवेक) *विनियोगे अपिसा* त्याज्या २१६

श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

८ {आन्तरिकोपायोपदेश} (यूयम्) अखिला, साक्षिणो भवत (कर्तृबुद्धिविवेक-धैर्य), यस्मात्, पुष्टिमार्गस्थितो हरि (सम्प्रदानबुद्धिविवेक) (तस्मात्) *लोके तथा वेदे स्वास्थ्य तु न करिष्यति* (सम्प्रदाननतिविवेक) २१७

लीलात्मक सरस साक्षिभाव और अरसात्मक साक्षिभावका भेद २१९

श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

९ {कायिकान्तरिकोपायोपदेश} सेवाकृति *मुरो आज्ञा (नुसारिणी भवति*, हरीच्छया बाधन, वा (क्रियाप्रज्ञाविवेक) अत सेवापर चित्त विधाय सुख (कर्तृप्रतिज्ञाविवेक-धैर्योपदेश) स्थीयताम् २२७

श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

१० {आन्तरिकोपायोपदेश} हरि *चित्तोद्वेगम् अपि विधाय* यद्यत् करिष्यति *तस्य* लीला तथैव इति मत्वा (कर्तृधैर्योपदेश) चिन्ता द्रुत त्यजेत् २३६

[illegible] २४४

११ {वाचनिकोपायोपदेश} तस्मात् *सर्वात्मना* नित्य श्रीकृष्ण शरण मम (इति) वदद्भि एव सतत स्थेयम् (सम्प्रदानाश्रयोपदेश), इत्येव मे मति २४४

नवरत्नग्रथोक्त शरणागति और विवेकधैर्याश्रयोक्त

शरणागतिका तुलनात्मक स्वरूप २४५
उपसंहार २५०

०००००००००
०००००००
००००
०

# नवरत्नम्

(आत्मनिवेदनके चिंतनद्वारा लौकिक अथवा अलौकिकके बारेमें, सेवामें उपयोगी अथवा अनुपयोगी बातोंके बारेमें करनेमें आती हुई किसी भी प्रकारकी चिंता न करनेका उपदेश)

चिंता कापि न कार्या निवेदितात्मभि. कदापीति।
भगवान्पि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम्।।१।।
निवेदन तु स्मर्तव्य सर्वथा तादृशैर्जनै ।
सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छात. करिष्यति।।२।।

(स्वय आत्मनिवेदन करनेवाले अथवा उसके द्वारा निवेदित स्वकीयोंका, जो निवेदित अथवा अनिवेदित व्यक्तियोंकेलिये विनियोग होता हो, तब आत्मनिवेदनके स्वरूपका विचार करके भक्तिकेलिये चिंता दूर करनी)

सर्वेषा प्रभुसबधो न प्रत्येकमिति स्थिति ।
अतोऽन्यविनियोगेऽपि चिता का स्वस्य सोऽपि चेत् ।।३।।
अज्ञानाद् अथवा ज्ञानात् कृतमात्मनिवेदनम् ।
यै कृष्णसात्कृतप्राणै तेषा का परिदेवना ।।४।।

(आत्मनिवेदन पर पूरा विश्वास न होनेके कारण अथवा भगवत्सेवामें निवेदितका विनियोग न होनेके कारण होती चिता श्रीपुरुषोत्तमके स्वरूप चितवनद्वारा दूर करनी)

तथा निवेदने चिता त्याज्या श्रीपुरुषोत्तमे ।
विनियोगेऽपि सा त्याज्या समर्थो हि हरि: स्वत ।।५।।

(स्वय या स्वयके स्वकीय लौकिक अथवा वैदिक व्यवहारोमें स्वस्थ न रह सकते हो तो उनके कारण होती चिता भी अपनी साक्षीभावनाके चितन द्वारा दूर कर लेनी)

लोके स्वास्थ्य तथा वेदे हरिस्तु न करिष्यति ।
पुष्टिमार्गस्थितो यस्मात् साक्षिणो भवताखिला ।।६।।

(गुरु एव भगवान दोनोंकी अथवा तो उन दोनोंमेंसे किसी एककी आज्ञा पाली न जा सकती हो तो उस भयके कारण होती चिता स्वसेव्य प्रभुके स्वरूपके चितन या भगवत्सेवाके तात्पर्य चितन द्वारा दूर करनी)

सेवाकृतिर्गुरोराज्ञा बाधनं वा हरीच्छया ।
अत सेवापर चित्त विधाय स्थीयता सुखम् ।।७।।

(उपदेशित प्रकारसे सेवाका निर्वाह करनेकी सामर्थ्य हो कि न हो परन्तु उसके कारण स्वभाविक रूपसे उत्पन्न होती चिताको भगवल्लीलाकी भावना या भगवत-शरणागतिकी भावनासे दूर कर लेना)

चित्तोद्वेग विधायापि हरिर्यद्यत् करिष्यति ।
तयैव तस्य लीलेति मत्वा चिता द्रुत त्यजेत् ।।८।।

तस्मात् सर्वात्मना नित्य श्रीकृष्ण शरण मम।
वदद्भिरेव सतत स्थेयमित्येव मे मति.।।९।।

।।इति श्रीमद्वल्लभाचार्यविरचित नवरत्न सम्पूर्णम्।।

*****

***

*

श्रीकृष्णाय नम ।।
।।श्रीमदाचार्यचरणकमलेभ्यो नम ।।

जयति श्रीवल्लभार्यो जयति च विट्ठलेश्वर. प्रभु श्रीमान्।
पुरुषोत्तमश्च तैश्च निर्दिष्टा पुष्टिपद्धतिर्जयति।।

पुष्टिसिद्धान्तचर्चा-वार्षिकोत्सवका उद्देश्य .

आज हम, अपने सिद्धान्तोका अपनी सक्रिय बुद्धि द्वारा समझनेका जो अभिगम उसका उत्सव, पुष्टिसिद्धान्त-चर्चा-सभाके वार्षिक उत्सव रूपमें मना रहे हैं निष्क्रिय रीतिसे केवल सुनते रहना, अपनी बुद्धिका प्रयोग न करना, वैसा तो हमने बहुत सुन लिया अपनी सक्रिय रुचिके साथ महाप्रभुजीकी वाणीका अवगाहन करनेका जो अभिगम वह ही पुष्टि सिद्धान्त-चर्चा सभा थी. उसी चर्चासभाके वार्षिक महोत्सवको इसी अभिगमसे हम गोस्वामी बालक ही नहीं, केवल आप वैष्णव ही नहीं, लेकिन अपन सब पुष्टिमार्गीय मिलकर मनाये, और उसीकी कडीके रूपमें अब हम नवरत्नका थोडा सघन स्वाध्याय करेगें

नवरत्नग्रथके अध्ययनकेलिये विषय

यह जो पत्रिका है इसे जिन लोगोंने रखना हो वह इसे हाथमें रखें नवरत्नके श्लोकोंका अन्वय करके, हरेक शब्दका अन्वय करनेके बाद जो वाक्यरचना होती है उस वाक्यके घटक क्या क्या उपादान हैं उन्हें अलग अलग प्रकारसे अलग अलग टाईपमे दर्शाया गया है वहा एक टाइपको कन्डेन्स् अर्थात् सघन कर दिया है तो दूसरे किसी टाइपके नीचे अन्डरलाइन कर दी गई है किसी टाइपको तिरछा करा है तो किसी टाइपको ब्रेकेट्में डाला गया है एव बौक्स ब्रेकेट् साईडमे दिया गया है अर्थात् जो वाक्यके घटक अलग अलग अग हैं, उन्ह हम अच्छी तरहसे समझें आज हमें थोडी देर हो गई है, इसलिये आज आप

इसे रखो, रद्दी समझ कर इसे फेंक नहीं देना जोकि हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है इसलिये समझा रहा हू कि रद्दीमें मत फेंक देना मोटे तौरपर आज कदाचित शुरु हो सकेगा तो आज करूगा, नहीं तो कल हम इसे शुरु करेंगे इसे समझनेसे पहले कुछ जो मुख्य विषय हैं नवरत्नके उपदेशके पीछे, उन विषयोंको भी हमें समझना पडेगा सबसे पहला विषय नवरत्नके बारेमें यह है कि नवरत्न षोडशग्रन्थोंमे का एक ग्रन्थ है

## पुष्टिमार्गीय आचारसहिता अर्थात् षोडशग्रंथ

हम सब पुष्टिमार्गीय हैं और अपने पुष्टिमार्गकी जो कोई आचारसहिता है तो उस आचार संहिताका प्रथम उपदेश या प्राथमिक उपदेश महाप्रभूजीने षोडशग्रथों द्वारा किया है इसके अतिरिक्त भी कितनेक आचारसहितारूप ग्रन्थ महाप्रभुजीने किये हैं दृष्टिगत रूपसे जो उपदेश महाप्रभुजीने स्वय न किये हो, वह उपदेश श्रीगोपीनाथजी और श्रीगुसाईजीने दिये हैं वैसे भी कुछ ग्रंथ है इसके लिये ही षोडशग्रथ एव वैसे ही अन्य ग्रथोको एककाय प्रकट करनेका प्रोजेक्ट मैंने हाथमें लिया है लगभग २२ ग्रन्थोका एक वोल्युम प्रकाशित होने जा रहा है, श्रीमहाप्रभूजी कृपा करेंगे तो निश्चित प्रकाशित हो जायेगा इसमें श्रीगोपीनाथजी एव श्रीगुसाईजी द्वारा रचित साधनदीपिका, सर्वोत्तमस्तोत्र, वल्लभाष्टक, स्फुरत्कृष्णप्रेमामृत, श्रीमहाप्रभुजी द्वारा रचित ग्रन्थ पचश्लोकी, शिक्षाश्लोकी एव सर्वनिर्णयका साधनप्रकरण, मगलाचरण ऐसे ग्रथोका भी समावेश करके लगभग २२ ग्रथोकी एक अपनी आचारसंहिताका निकट भविष्यमें प्रकाशन करूगा वर्तमानमें हमें जो समझनेकी आवश्यकता हैं वह यह है कि षोडशग्रथ हमारी सबसे पहली आचारसहिता है षोडशग्रथके उपदेशसे हम अलग पडे तो किसी दूसरे मार्गपर भटक जायेंगे और फिर समझलो कि तुम पुष्टिमार्गपर नहीं चल रहे षोडशग्रथको समझो किस प्रकार समझोगे? इसके बारेमें किसी भी प्रकारकी विप्रतिपत्ति (विरोध) नहीं हो सकती स्वय

पढकर समझो, बालकोके उपदेश द्वारा समझो, चर्चा करके समझो अनुवादसे समझा बशरते अनुवाद प्रमाणित हो तो कोई कठिनाई नहीं

## पुष्टिभक्तिमार्गमे प्रवृत्तको नवरत्नका उपदेश

श्रीगुसाईजीने यहा नवरत्न ग्रन्थके अन्तमें एक महत्वपूर्ण बात कही है और उसे प्रत्येक पुष्टिमार्गीयको ध्यानमें रखना चाहिये, श्रोताओको तो निश्चित, परन्तु जो पुष्टिमार्गके सिद्धान्तोंका उपदेश करना चाहते है, उनको तो सविशेष तो श्रीगुसाईजी आज्ञा करते हैं

**भक्तिमार्गे प्रवृत्तस्य दाढ्यर्थम् इदम् उच्यते।**
**अन्धस्य सूर्यइव तद्विमुखस्य न अत्र अर्थिता।।**
(श्रीगुसाईजी कृत नवरत्नप्रकाश)

जो पुष्टिमार्गमे प्रवत्त हुआ है, जो पुष्टिमार्गपर चलना चाहता है **पुष्टिमार्गे प्रवृत्तस्य दाढ्यर्थम् इदम् उच्यते** यह जो कुछ उपदेश देनेमें आ रहा है वह पुष्टिमार्गपर स्वय दृढतासे कदम भर सके उसके लिये दिया गया है **अन्धस्य सूर्य इव अधे** मनुष्यके लिये सूर्य उगे कि न उगे उससे उसे कुछ फरक नहीं पडता अतएव जो पुष्टिमार्गके सिद्धान्तसे विमुख हैं उनके लिये नवरत्नमे चिता करनी या नहीं करनी उसके बारेमें कुछ भी नहीं कहा गया है जो पुष्टिमार्गपर चलना चाहते हैं उन्हें जो चिता हो रही है, उनकी चिताके निराकरणका यहा उपदेश है हमारे लडका नहीं है, पत्नी नहीं मिल रही, परीक्षामें पास होना है, व्यवसाय नहीं चलता अतएव **चिन्ता कापि न कार्या निवेदितात्मभि. कदापीति** करोगे तो भगवान तुम्हारी लौकिक गति ही करने वाले हैं एक बात ठीकसे समझ लो कि ऐसी चिताके साथ नवरत्नका कुछ लेना देना नहीं है **तदविमुखस्य न अत्र अर्थिता.** यहा ऐसे लोगोंको उद्देशित करके कुछ भी नहीं

कहा जा रहा यह बात हमें सबसे पहले समझ लेनी चाहिये चाहो तो लिख कर स्पष्ट करलो तुम्हारे हाथ में कागज है, चाहे तो मनमें उतार लो, लेकिन यह बात सबसे पहला विषय है जो कि प्रत्येकको समझना चाहिये वर्तमानमें तो जमाना ऐसा विचित्र आ गया है कि मुझे डर लगता है कि थोडे दिनों बाद किसीको चिता होगी, तो पुरुषोत्तमयागकी तरह नवरत्नमहायाग भी होने लगेगा . **चिताकापि न कार्या स्वाहा। निवेदितात्मभि कदापीति स्वाहा।। भगवानपि पुष्टिस्थो स्वाहा।।**

कर दो इस तरह सबको स्वाहा लेकिन यहा ऐसा तो कुछ भी कहनेमें नहीं आ रहा भाईसाहब। स्वाहाका सिद्धान्त कहनेमें नहीं आ रहा, वैसी चिताओके बारेमें दूसरे १५ ग्रन्थोमें भी कोई भी ऐसा शब्द महाप्रभूजीने नहीं कहा है

<u>समझ, श्रद्धा एव निष्ठानुसार पुष्टिमार्गके सिद्धान्तोंका वर्गीकरण</u> :

(१) <u>बाल्यावस्था</u>

षोडशग्रन्थमे दूसरे उपदेशको बालबोध कहा गया है उससे कुछ हमें सकेत या सूचना मिलती हो तो हम उसे ले सकते है जैसे एक बालकका शारीरिक विकास या मानसिक विकास, परिवारमें या समाजमे जिस रीतिसे होता है उन सबको अनुलक्षकरके बाल्यावस्था, कुमारावस्था, किशोरावस्था, यौवनावस्था, प्रौढावस्था एव वृद्धावस्था, ऐसे लगभग छ प्रकारकी अवस्थाऐ स्वीकारनेमें आती हैं षोडशग्रन्थमे दूसरा उपदेश बालबोध है इस हिसाबसे भी यमुनाष्टक एव बालबोध हमारे लिये बालोपदेश है पुष्टिमार्गीय दृष्टिसे बाल्यावस्था अर्थात् पुष्टिमार्गके सिद्धान्तोंकी समझ पुष्टिभक्ति एव पुष्टिशरणागतिको जीनेके लिये अपने अभिगमके लिये जैसी निष्ठा या श्रद्धा बाल्यावस्थामें आवश्यक होती है, वैसे उपदेश है अतएव बाल्यावस्थाको उद्देशित करके दिये गये यह उपदेश हैं यमुनाष्टक एव बालबोध

(२) कुमारावस्था

उसके बाद आती है कुमारावस्था कुमारावस्थाका भेद एव बाल्यावस्थाका भेद हम सक्षेपमे इस प्रकार समझ सकते हैं कि जो अपने पैरोसे चल न सकता हो वह बाल एव जो चलने लगे, थोडे डगमग कदम रखता हो उसमें कोई मुश्किल नहीं है, लेकिन चलने लगे तो वह कुमार अतएव यमुनाष्टक एव बालबोध जो अपने बालबोध हों तो सिद्धान्तमुक्तावली एव पुष्टिप्रवाहमर्यादाको अपनी कुमारावस्थाका बोध अर्थात् कुमारबोध कहा जा सकता है

(३) किशोरावस्था

तत्पश्चात् सिद्धान्तरहस्य नवरत्न, अन्त करणप्रबोध एव विवेकधैर्याश्रय यह पुष्टिमार्गीय विश्वास, पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तोंकी समझ, पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तोंको जीनेकी निष्ठा, उनका कैशोर्य अर्थात् किशोरावस्था अतएव इन चारों ग्रथोंको हम किशोरबोध कह सकते हैं महाप्रभुजीकी भाषाकी नकल करनी हो तो बालबोधकी तरह सिद्धान्तरहस्य, नवरत्न अन्त करणप्रबोध एव विवेकधैर्याश्रय, यह अपना किशोरबोध है अपने कैशोर्यका सूचक है

(४) युवावस्था

फिर आते हैं, कृष्णाश्रय, चतुश्लोकी एव भक्तिवर्धिनी इनमें पुष्टिमार्गके यौवनका उपदेश है श्रीकृष्णकी अनन्य शरणागति, श्रीकृष्णका अनन्य आश्रय एव श्रीकृष्णमें अनन्यासक्ति उनका वर्णन कृष्णाश्रय, चतुश्लोकी एव भक्तिवर्धिनीमें किया गया है अनन्याश्रय एव अनन्यासक्ति अगर तुम समझ गये, तो तुम पुष्टिमार्गके यौवनको जीनेके लिये तैयार हो गये बस, तुम पुष्टिमार्गमें युवा हो गये यग बाय हो गये यग गर्ल हो गई एकदम यगऐजमें तुम आ गये बस इसके सिवाय पुष्टिमार्गका

यौवन दूसरा कुछ नहीं है कि श्रीकृष्णका अनन्याश्रय एव अनन्यासक्ति तुमको हो गई इस कारण भक्तिवर्धिनी तुम्हे आगेका दिशानिर्देश करती है कि अच्छे यौवनके बाद भी एक अवस्था आती है वह हैं **यथा भक्ति प्रवृद्धया स्यात्.** यह प्रौढताके बारेमें युवाओका दिया गया बोध है अतएव इन तीनों ग्रथोंको मैं ऐसा कहना चाहूगा कि तीनो ग्रथ पुष्टिमार्गके युवाबोध हैं

(५) <u>प्रौढावस्था</u>

अब आते हैं जलभेद, पचपद्यानि एव सन्यासनिर्णय यह पुष्टिमार्गके प्रौढताके सूचक ग्रथ हैं प्रौढताके ग्रथ इसके लिये कि यौवनम जो कुछ पुरुषार्थ तुम कर सकते थे वह तूमने कर लिया यह पुरुषार्थ तुमने, तुम्हारे परिवार या परिवार एव समाजके लाभकेलिये किया तुम्हारे वैसे स्वरूपके दिशानिर्देश करने वाले ग्रथ है अतएव यह तुम्हारी प्रौढताके सूचक ग्रथ हैं इन तीनोंमे पुष्टिमार्गका प्रौढबोध है

(६) <u>वृद्धावस्था</u>

निरोधलक्षण एव सेवाफल यह जो दो ग्रथ हैं वह पुष्टिमार्गके वृद्धबोध उपदेश ग्रथ हैं अर्थात् जो कुछ डेवलपमेन्ट् (उन्नति) हो सकता था, उसकी उच्चतम ऐवरेस्टकी चोटीकी तरह, जहा तुम पहुच सकते थे वहा तुम पहुच गये, इस बातके सूचक ग्रथ हैं यहा वृद्ध अर्थात् कमजोर, हाथमे लकडी और पैर कापते हो, दात टूट गये हो उस अर्थमें नहीं श्रद्धामे वृद्ध, ज्ञानमें वृद्ध, तपोवृद्ध, साधनावृद्ध या स्नेहवृद्ध स्नेह तुम्हारा इतना वृद्ध हो गया, ऐसे वृद्धबोधके उपदेशक यह ग्रथ है

<u>नवरत्न ग्रथ किशोरबोध ह</u>

इस दृष्टिसे षोडशग्रथमे नवरत्नका स्थान क्या है? यह हमें स्पेसीफिकलि समझना पड़ेगा कि यह किशोरबोध ग्रंथ है किशोर अर्थात् जिसे आजकी भाषामें टीनेजर कहते है

यह कौमार्य एव यौवन अवस्थाओंके बीच आता समय है साइकोलोजीमें एक सिद्धान्त मान्य है कि टीनेजमें लगभग सबको चिंता होती है कि मेरा क्या होगा? जरा मुझे माफ करना मुझे एक फिल्मी गीत याद आ गया **न जाने इनमे किसके वास्ते हु मैं, न जाने इनमें कौन है मेरेलिये.** तो टीनएजकी बहुत ही ड्रामेटिक प्रोब्लम् है और यही टीनेजकी प्रोब्लम पुष्टिमार्गमें भी है. इतने सारे सिद्धान्तोंमें न जाने इनमे किसके वास्ते हु मैं और इन सिद्धान्तोमें न जाने इनमे कौन है मेरे लिये तो ऐसी कुछ टीनेजकी एक स्पेशियल प्रोब्लम् है यह प्रोब्लम् नवरत्नमे भी रही हुई है और उस प्रोब्लमका सोल्युशन् या समाधान नवरत्न, विवेकधैर्याश्रय एव अन्त करणप्रबोध देते हैं

**<u>पुष्टिमार्गकी माता श्रीयमुनाजी, मर्यादामार्गकी माता श्रीगायत्री एव प्रवाह मार्गकी माता श्रीलक्ष्मीजी</u>**

यद्यपि सबसे पहले श्रीमहाप्रभुजीने यमुनाष्टकको बालबोध नहीं कहा बावजूद इसके ऐसे बालबोध होनेके सारे ही लक्षण महाप्रभुजीने सूचित किये है

**न जातु यमयातना भवति ते पय पानत**

बालक अर्थात् क्या? बालककी सबसे प्रथम अवस्था या इसकी बुद्धिका प्रथम व्यापार किसमें होता हैं? अपनी माको पहचाननेमें जो छोटा बच्चा अपनी माको नहीं पहचान सकता है उसे तुरन्त डाक्टरके पास ले जाते है कुछ बीमारी है इसमे दूध पी रहा है दृष्ट एवं माको क्यों नहीं पहचानता? कुछ न कुछ इसके दिमागमे या कुछ न कुछ इसकी आखमें या कुछ न कुछ इसके कानमे लफडा है अतएव सबसे पहले अपनी माको पहचाने वह बालक, जो माको नहीं पहचान सकता है वह बालक

कहलानेके लायक नहीं अतएव जो अपनी पुष्टिनिष्ठा, पुष्टिश्रद्धा, पुष्टिभक्ति है उसे जन्म देनेवाली अगर कोई मा है तो वह श्रीयमुनाजी है अर्थात् प्रथम जो बोध है माको पहचाननेका न **जातु यमयातना भवति ते पय पानत** इस अर्थमें यमुनाष्टक भी बालबोध ही है नाम भले ही महाप्रभुजीने अगले ग्रथको बालबोध दिया है लेकिन इस अर्थमें यमुनाष्टक भी बालबोध ही है बालकसे भी छोटा हो तो वह शिशु कहलाता है वैसा शिशुबोध भी यमुनाष्टकको कह सकते है

शास्त्रमें जो मर्यादाके उपदेशका **वचसा वेदमार्गोहि** ऐसा निरूपण करनेमें आया है उस शास्त्रमें गायत्रीके लिये ऐसा कहा गया है कि **गायत्री वेदमातरम्** तो गायत्री ये मर्यादामार्गकी माता है जो गायत्रीको नहीं पहचान सकता, वह व्यक्ति किसी भी दिन मर्यादामार्गपर आगे नहीं चल सकता मर्यादामार्गमें **गायत्री वेदमातरम्** है ऐसी कि जिसके कारण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यकेलिये शास्त्रमें ऐसे कहा गया है कि **मातु यद् अग्रे जायन्ते द्वितीय मौञ्जिबन्धनात्** पहले तो अपनी शारीरिक माताके पेटमे था अत शरीरसे जन्म बहुत अच्छा हुआ कि मनुष्य रूपमे तू जन्मा लेकिन अब दूसरा जन्म तेरा गायत्री माताके कारण हो रहा है इसी कारण ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्यको द्विज कहा जाता है द्विज अर्थात् दूसरी बार जन्मे उसका नाम द्विज

जैसे मर्यादामार्गमें गायत्री वेदमाता होनेके कारण प्रत्येक द्विजकी माता है, वैसे ही श्रीयमुनाजी पुष्टिमार्गमें प्रत्येक पुष्टिमार्गीय, जो पुष्टिमार्गपर चलकर पुष्टिप्रभुकी ओर चलना चाहता है, उनकी माता है **दौर करि सोर करि जाय पिय सों कहें अतिहि आनन्द मन मे जु भरके. ब्रह्मसबध जब होत या जीवको तबही इनकी भुजा वाम फरके.** इस कारण श्रीयमुनाजी अपनी पुष्टिमाता है

मुझे आज एक गुमनाम लेटर मिला है कि तुम प्रवचन करते हो लेकिन तुम्हारी शैली अच्छी नहीं है, तुम्हे क्या अधिकार है किसीको सिद्धान्त कहनेका? भाई! मेरे हिसाबसे तो, ऐसे पूछनेका अधिकार लेटर लिखनेवालेने कहासे लिया कि मैं सिद्धान्त नहीं बोल सकता? तुम्हे कोई अधिकार हो न हो लेकिन मैं तो बोलूंगा ही क्योंकि मैं मेरी बात तो कहता नहीं महाप्रभुजीकी बात कह रहा हू अर्थात् बोलूगा मैं आया ह् इस पुष्टिमाताके गर्भमें से अतएव मुझे बोलनेकी इच्छा एव अधिकार दोनों मिल गये हैं

जैसे पुष्टिमार्गकी माता श्रीयमुनाजी, मर्यादामार्गकी माता गायत्री, वैसे ही प्रवाहमार्गकी माता लक्ष्मी लक्ष्मी अर्थात् मेरी पत्नी नहीं समझ लेना वह भी एक लक्ष्मी है प्रवाहमार्गकी माता लक्ष्मी यह लक्ष्मी भगवान् विष्णुकी चरणसेवामें परायण लक्ष्मी नहीं लेकिन धनदौलतके अर्थमें इसकारण प्रवाहमार्ग सबही लक्ष्मीसे ही पैदा होता है **टका धर्म टकाधर्म टका हि परमेश्वरो यस्य हस्ते टका नास्ति हा! टका! टक्टकायते** टकासे प्रत्येक काम सिद्ध होता है यह प्रवाहमार्गकी लाक्षणिक विशिष्टता हैं प्रत्येक काम टकासे सिद्ध होता है और टका नहीं होता तो टकटक होती रहे कि पुष्टिमार्गके बारेमें श्यामुबाबाको बोलनेका अधिकार किसने दिया? इस कारण यह लक्ष्मी प्रवाहमार्गकी माता है निश्चित रूपमें ऐसा मातृत्व भी हमे इस अर्थमें स्वीकारना पडेगा इतना ही नहीं आत्ममीमांसा भी करनी पडेगी कि हम लक्ष्मीजीके बच्चे है कि गायत्रीके बच्चे हैं कि श्रीयमुनाजीके बच्चे हैं यह बात इस बारेमें समझनेकी बहुत जरूरत है क्योंकि तीन मार्गोंकी तीन प्रकारकी सृष्टि है और तीन प्रकारकी मातायें है और जिनमेंसे तीन प्रकारकी सन्तति पैदा होता है इसमें किसी प्रकारकी परेशानी नहीं होनी चाहिये सभी मार्गोंका सृजन प्रभुने किया है तो इस मार्गका भी प्रभुने ही सृजन किया है यह हमे समझना पडेगा क्योंकि लक्ष्मीनाथ भगवान

महाविष्णुने ही सभी मार्गोंका सृजन किया है तो यह भी एक मार्ग है ही और जो है उसे रिकॉग्नाइज् करना ही पडेगा।

## आधुनिक मनोवैज्ञानिक ऐरिक्सनकी दृष्टि एव नवरत्न ग्रन्थ समझनेमे उसकी उपयोगिता

खैर यह जो छ अवस्थाये हैं बाल्यावस्था, कुमारावस्था, किशोरावस्था, यौवनावस्था, प्रौढावस्था, एव वृद्धावस्था इन अवस्थाओमें अपनी बुद्धिका अपने शरीरका, अपने व्यवहारका अपने परिवारमें एव समाजमें किसी न किसी प्रकार विकास होता रहता है वह जो विकास होता है उसे अनुलक्षकरके इन सभी अवस्थाओंका भेद करनेमे आया है उस प्रकारकी भावनात्मक विकास अनुभूत होता है सक्षेपमें आज जो एक बात खुलासेके रूपमें तुम्हे समझाना चाहता हू वह यह है कि ऐरिक्सन् करके एक बहुत बडा साय्कोलोजिस्ट हुआ है, इसने इस विकासके अलग अलग माइल स्टोन्, आजकी पद्धति अनुसार किलोमीटरके पत्थर, कि अब कितना अन्तर पीछे गया और कितना बाकी है, ऐसे भावनात्मक माईलस्टोन्स्को नोट किया है क्लासीफिकेशन्/वर्गीकरण किया है वह हमें नवरत्नको समझनेमें अतिशय सहायक होंगे

## बालकके विकासकेलिये प्रथम सोपान विश्वास

ऐरिक्सन् एक बात कहता है कि बालकके जन्म लेनेके बाद उसकी सबसे पहली आवश्यकता विश्वासकी होती है सबसे पहली आवश्यकता जन्मे हूवे बालककी यह कि भूख किस प्रकार मिटानी? वहा मा दूध पिला पिला कर इसमे विश्वास पैदा करती है भूझे जब भूख लगे तो मेरी भूख यहींसे मिटेगी मच्छर काटनेकी तकलीफसे बच्चा जब माके आगे रोता है और मा इस तकलीफको दूर कर देती है तब बच्चेमें एक विश्वास प्रकट होता है इसे लगता है कि मैं किसी ऐसी दुनियामें नहीं आ गया कि

जहा सब उलटा सीधा हो रहा है तात्पर्यत पहला नियम अगर बालकको समझमें आता है तो वह यह कि मेरी जो कुछ तकलीफ हैं उन मेरी तकलीफोके कुछ समाधान भी यहा है और वह मेरी मामे रहे हुये है मेरी तकलीफका समाधान यह विश्वास जो बालकमें होता है तो उसकी बाल्यावस्था स्थिर हो गई जाननी अगर बालकमें यह विश्वास प्रकट नहीं होता उदाहरणके तौर पर एक बात कहु कि बहुत समृद्धि हो, जन्म किसीने दिया, पालन किसीने किया हो, सफाई कोई तीसरा ही करता हो, खिलानेके लिये कोई चौथा हो तो फिर बच्चेका दिमाग काम करना बद कर देता है कि कौनसी तकलीफ कौन दूर करेगा? इतने अधिक व्यक्तियोसे घिरे हुवे बच्चेको प्रारम्भमें किसके ऊपर किस तकलीफको दूर करनेका विश्वास रखना यह समझमें नहीं आता अतएव कोई भी नियम इसे समझमें नहीं आता किसी समय कुछ होता है और दूसरे समय कुछ और होता है तो जो कुछ भी घटना होती है तो उस घटनाके निराकरणके स्रोतकेलिये बालकमे विश्वास उत्पन्न नहीं होता शारीरिक रीतिसे इस वातावरणके कारण उसका निराकरण जब एकसे होता रहता है तब तो उसमें अनन्य विश्वास जागता है एक सामान्य उदाहरण देता हू कि जब हमारे पास हार्न बजा तब गाडी निकल रही है ऐसा प्रतीत होता है कि नहीं? कैसे पता चला? ऐसे जब पाच दस बार हम देख लेते है तो फिर हमे विश्वास हो जाता है कि होर्न बजा अर्थात् गाडी निकल रही है देखनेकी जरूरत नहीं पडती लेकिन सोचो कि किसी समय टी वी मे से गाडी निकलनेकी आवाज आ रही है और होर्नकी भी आवाज आ रही होती है और जब हम देखते है तो गाडी तो नहीं निकल रही होती दो तीन बार ऐसी घटना हो तो फिर अपना विश्वास डगमगा जाता है कि सुनाई तो दे रहा है पर गाडी जा रही है कि नहीं कैसे पता चले? क्योंकि जब जब ऐसी आवाज आती है तब तब गाडी निकल रही होती है और दो चार बार दिखे भी तो विश्वास प्रकट हो जाता है लेकिन कभी सुनाई

दे और देखने जाओ तो कुछ नहीं मिले तो अपना विश्वास डगमगा जाता है

अब एक सामान्य उदाहरण देता हू कि हमे कोई पूकार रहा हो और हमें कोई दिखाई नहीं देता हो, तो अपना विश्वास डगमगा जाता है कि नहीं कहीं भूत/प्रेतकी बाधा तो नहीं हो गई भागो भागो हो जाय कि नहीं? किस कारण हो जाती है? क्योंकि हमे विश्वास हो गया है कि मेरा नाम लेकर कोई अगर मुझे पूकार रहा है तो कोई मनुष्य आसपासमें होना चाहिये अब सोचो कि मेरा नाम लेकर कोई पुकारे कि श्याममनोहरजी मैं बाहर जाकर देखू कि कोई गधा खड़ा है तो मुझे चिंता हो जाय कि यह मैं हू कि तू? क्योंकि गधा कभी मेरा नाम लेकर पूकार नहीं सकता पुकारता हो तो फिर मुझे चिंता हो जाय अथवा तो मेरा विश्वास टूट जाय कि मैं गधा हू कि तू गधा है! तेरेमें से ऐसी आवाज मुझे कैसे सुनाई दे रही है? विश्वास टूट जाता है अर्थात् विश्वास प्रकट हो किस प्रकार? किसीभी घटनाके पुनरावर्तनके द्वारा

<u>श्रीयमुनाजी द्वारा पुष्टिमार्गीय विश्वासकी प्राप्ति</u>

**तवाष्टकम् इद मुदा पठति सूरसूते सदा, समस्त दुरित क्षयो भवति वै मुकुन्दे रति । तया सकल सिद्धयो मुररिपु च सन्तुष्यति, स्वभाव विजयो भवेद् वदति वल्लभ श्रीहरे ।।**

ऐसा कहकर महाप्रभुजी पुष्टिमार्गीय जीवोकेलिये यमुनाजीके मा होनेका सम्बन्ध दिखा रहे है इसकी रिपीटेशन् द्वारा श्रीमहाप्रभुजी हमारे भीतर वह विश्वास पैदा करना चाह रहे है कि **न जातु यम यातना भवति ते पय.पानत. मुररिपु च सन्तुष्यति** प्रत्येक प्रकारका विश्वास हमारे हृदयमे भर रहे है कि पुष्टिमार्गपर चलना हो तो घबरानेकी क्या जरूरत है जबकि

यमुनाजी जैसी हमारी मा है तो इससे एक नियम हमें समझमें आ रहा है **तव अष्टकम् इद मुदा पठति सूरसूते सदा समस्त दुरितक्षयो** सदा अर्थात् आवर्तन समझे! अगर माके साथ बच्चेके व्यवहारमें ऐसा आवर्तन हो कि जब जब भूखके कारण मैं रोता होऊ तब तब मेरी मा मुझे दूध पिलायेगी ऐसी सब तकलीफ दूर हो जाती हो क्योंकि कोई है मा नामका पदार्थ जो मेरे साथ है ऐसा विश्वास बालकमे प्रकट हो जाये तो वह है बालबोध बालबोधका ये पहला कदम इस विश्वासकी उपलब्धि कि जहा मैं आया हू वहा कुछ अविश्वास करने जैसा वातावरण नहीं है जिसमें विश्वास प्रकट नहीं होता, वह बालक किसी भी दिन बडे होकर चाहे कुमारावस्थामें हो, चाहे किशोरावस्थामे हो, चाहे यौवनावस्थामें हो, विश्वासहीन बालक समाजमें भली प्रकार जी नहीं सकता इसे हर जगह अविश्वास ही नजर आयेगा विश्वासका अनुभव नहीं किया तो विश्वास नहीं कर सकता जो विश्वास नहीं कर सकता तो वह किसीका विश्वास भी प्राप्त नहीं कर सकता यह बात समझ लेनी चाहिये अर्थात् पुष्टिमार्गमे हम विश्वसनीय हो महाप्रभुजीके जिससे कि महाप्रभुजी हमारे ऊपर विश्वास रख सकें हम पुष्टिमार्गपर विश्वास रख सकें उसकेलिये सबसे पहले अपना इटरऐक्शन् अर्थात् अपने भावोंका लेन देन करें और श्रीयमुनाजी द्वारा अपने भावोंके समाधानकी आवश्यकता है इस अर्थमे यमुनाष्टक अपना प्रथमजात बोध है बालबोध अर्थात् बालक भी इस जन्मे हुवे बालकका बोध है कि नहीं मेरी मा है जो मेरी हरेक प्रकारकी सावधानी ले रही है वैसा विश्वास प्रकट करना है

<u>विश्वासका उल्टा अविश्वास</u>

जिस विश्वासको तुम्हारे सामने ऐरिक्सन् कह रहा है कि एक फेक्टर अविश्वासका भी हो सकता है तो विश्वास और अविश्वास जैसे वर्तमानमें हमको, वैष्णवोंको, अविश्वास हो गया कि अगर हम सेवा करेंगे तो प्रभु हमारी सेवा अगीकार करेंगे कि

नहीं? सेवा तो गोबालकोंकी ही अंगीकार होती हैं सेवा तो बहुत नेग, भोग राग, अपरसका वैभव हो तो ही प्रभुसुख कहलाता है, मेरे घरमें तो नलका पानी उपयोगमें आता हैं तो प्रभु सेवा किस पकार अंगीकार करेंगे? हमें अविश्वास हो गया है, ऐसे अविश्वासके कारण हम पुष्टिमार्गपर भली पकार चल नहीं सकते उसमें भी गोस्वामी बालकोंके ठाकुरजी पुरुषोत्तम हैं, हमारे ठाकुरजी तो चालू खातेके रखडपट्टू (आवारा) हैं ऐसा अविश्वास हो गया है उस कारण वैष्णवोंके कोई स्वरूप मिश्रीके ठाकुरजी होते हैं तो कोई झारी भरवानेके ठाकुरजी होते हैं अब इन ठाकुरजीमें पुरुषोत्तमता कहासे आ सकती है! ऐसा अविश्वास ठाकुरजीके बारेमें हम लोगोंमें घुस गया हैं हम श्रीयमुनाजीको भूल गये है यमुनाजीको याद करो कि **तव अष्टकम् इद मुदा पठति सूरसूते सदा समस्त दुरित क्षयो भवति वै मुकुन्दे रतिः तथा सकलसिद्धयो मुररिपु च सन्तुष्यति** मुररिपु तुम्हारेसे सन्तुष्ट हैं तुम क्यो अविश्वास करते हो कि तुम्हारे घरमें बिराजते ठाकुरजी साक्षात् पुष्टिपुरुषोत्तम नहीं हैं ऐसा अविश्वास क्यो करते हो? यह तुम्हारेसे सन्तुष्ट हो गया अगर तुमने तुम्हारी माको ठीकसे पहचान लिया हो तो माको पहचाननेके बाद ही पिताके सामने जानेका अपना अधिकार बनता हैं माको नहीं पहचाना तो पिताके सामने क्या मुह लेकर जाओगे? माको पहचानना अर्थात् तुम्हारेमें विश्वासका जागना हमें अविश्वास है अपने प्रभुके ऊपर, उसका मूल कारण यह हैं कि हम अपनी माको नहीं पहचान रहे हम चूंदडीके मनोरथ कर रहे है लेकिन यमुनाष्टकके भावको नहीं समझ सके कि **तव अष्टकम् इद मुदा पठति सूरसूते सदा समस्त दुरित क्षयो भवति** हम जैसे हैं वैसे हैं ठाकुरजी भी यह विचारते होगे कि जैसे हैं वैसे हैं लेकिन अन्तमे हैं तो श्रीयमुनाजीके बच्चे ही हैं तो यमुनाजीकी सतति ही **निवेदितात्मभि. कदापीति भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम्** ऐसा अनोखा विश्वास तुम्हारेमें जाग जायेगा अगर तुम तुम्हारी माको पहचानोगे तो पुष्टिप्रभु

तुम्हारे ऊपर सतुष्ट हो गये हैं यह बात तुम्हें सबसे पहले समझनी पडेगी

<u>विकासका दूसरा सोपान आरम्भ</u>

इसके बाद ऐरिक्सन् एक बहुत सुन्दर बात कहता है अगर तुममे विश्वास पैदा हो गया तो अब तुम आरम्भ कर सकते हो अर्थात् अपने पुष्टिमार्गके सन्दर्भमें ऐसा अविश्वास कि तुम्हारे माथे बिराजते ठाकुरजी साक्षात् पुरुषोत्तम नहीं हैं ऐसा अविश्वास तुम्हारे भीतर न हो तो तुम आरम्भ कर सकते हो बालकके विकासकेलिये विश्वासके बाद दूसरा चरण ऐरिक्सन्के अनुसार आरम्भका हैं अर्थात किसी बातको बालक अपनी इच्छानुसार प्रयोगमें ला सके आरम्भ अर्थात् इनीशियेटिव जिसे कहा जाता है अर्थात् मुझे कुछ करना है तो किसी न किसी प्रकार इसे शुरु तो करना ही पडेगा! अब मुझे अगर विश्वास है तो मैं कुछ शुरु कर सकता हू उदाहरणके लिये सडक पार करनी हो तो हम इसका आरम्भ किस प्रकार करते हैं? सिग्नल हुवा कि नहीं, सडक पार करनेका सिग्नल हुआ तो मैं सडक पार करना आरम्भ करुगा सिग्नल नहीं हुवा तो मैं सडक पार नहीं करुगा खडा ही रहूगा तो आरम्भ या इनिशियेटिवका पहला टेस्ट स्वय लेना पडेगा यह इनिशियेटिव कौन ले सकता है? जिसमे विश्वास हो वह गावके आदमी मुम्बईमे अचानक आ जाते हैं और इनको सडकके ऊपर खडा करो तो इनमें विश्वास नहीं जागता कि इतनी सारी गाडिया आ जा रही है तो सडक पार करनी कि नहीं सिग्नलकी जानकारी न हो तो सडक पार करनेका जो आरम्भ है वह नहीं कर सकता

विश्वासके अभावके कारण क्या होता है वह भी ऐरिक्सन्ने बहुत अच्छी तरहसे विश्लेषण करके बताया है कि लज्जासे अनिश्चय हो जाता है जिसे बहुत शर्म आती हो उसे हम लोग लज्जालु कहते हैं जिसे विश्वास होता है उसे शरम

नहीं आती जिस बालककी मा उसमे विश्वास भर देती है, जैसे शिवाजीकी माताने शिवाजीमे विश्वास भर दिया था अरे! मुट्ठी भर सेना थी शिवाजीके पास, वह था क्या? वह एक क्षुद्र गढके कोतवालका लडका था लेकिन सारे मुगल साम्राज्यको इसने हिला कर रख दिया विश्वास भरने वाली कौन थी? शिवाजीकी मा जीजाबाई तो एक बात समझो कोई हमारे भीतर विश्वास भर दे तो हम इनिशियेटिव ले सकते हैं उस समय भी कितने सारे राजा थे, कोई शिवाजीने हिन्दुओको बचानेका एकाधिकार नहीं लिया था! दूसरे राजा किस कारण इनिशियेटिव नहीं ले सके? क्योंकि बहुत सारे मुगल दरबारमें **सलाम वालेकुम् वालेकुम अस्सलाम्** करते थे ऐसा कैसे बना? क्योंकि विश्वास नहीं भर सकी इनकी मातायें इनमें इनमें हिन्दुत्व नहीं था, ऐसी कोई बात तो नहीं थी हिन्दुत्व था शायद शिवाजीकी तुलनामे अच्छे हिन्दु थे लेकिन इनमे विश्वासकी कमी थी उस कारण लज्जा आती थी, पराजित हो गये तो बदनामी होगी! अतएव औरगजेबके सामने हम क्या कर सकते हैं? हम सब क्षुद्र जीव कलिकालके, हमारी सेवा प्रभू कैसे अगीकार कर सकते हैं? यह तो गोस्वामी बालक करें तो ही सेवाको अगीकार करें! कोई अधिक धनवान हो तो मनोरथ कर छप्पनभोगके, तो प्रभू अगीकार करें हम क्या धर सकते हैं, दो मिश्रीके कणिका अथवा नागरी, इन्हे क्या उत्तम वस्तुके भोक्ता पुरुषोत्तम अगीकार करेंगे! लज्जा आ गई ना तुम्हें? बोलो सगे पिताके सामने जाते लज्जा आ गई तुम्हें, अरे मूर्खों दो थप्पड नहीं सारे तुम्हें कि पिताके सामने जाते हुये शर्माते हो! लेकिन लज्जासे अनिश्चय हो जाता है हमारेसे जाया जाये कि नहीं जाया जाये? ऐसे अनिश्चयके कारण सगे पिताके पास जाना आरम्भ ही नहीं कर सकते लज्जा और अनिश्चय हुवा नहीं कि सारा खेल खत्म ऐसे तो मैं फिर पाठ करता होऊ, **चिन्ता कापि न कार्या निवेदितात्मभि कदापीति भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम्** लेकिन पुष्टि प्रभुके पास जानेकी हिम्मत

नहीं पडती! यह लौकिक गति न हुवी तो और दूसरा क्या हुवा? बात हो गई और सारी कथा समाप्त अनिश्चय हो गया तो ऐसी चिंता अनिश्चयके कारण होती है लज्जाके कारण होती है उसका उल्टा ऐरिक्सन्ने बहुत सुदर बताता है कि जिसमें विश्वास होगा वह आरम्भ कर सकेगा डेशिंग केरेक्टर् इसमें खिलेगा क्योंकि विश्वास आ गया ना! विश्वास नहीं आया तो अनिश्चय हो जायेगा

## लज्जा, अनिश्चय दूर करनेकेलिये बालबोध एव सिद्धान्तमुक्तावलीमे श्रीमहाप्रभुजीका उपदेश

यह विश्वास महाप्रभुजीने हमारे अनिश्चय एव लज्जाकी मनोवृत्तिको दूर करनेकेलिये बालबोध एव सिद्धान्तमुक्तावलीमे कितने सुदर तरीकेसे योजित किया है! **समर्पणेन आत्मनो हि तदीयत्व भवेद् ध्रुवम् अतदीयतया चापि केवल चेत् समाश्रित तदाश्रयतदीयत्वबुद्धयै किञ्चित् समाचरेत् स्वधर्मम् अनुतिष्ठन् वै भारदैगुण्यम् अन्यथा इत्येव कथित सर्व नैतज्ज्ञाने भ्रम पुन - नत्वा हरिं प्रवक्ष्यामि स्वसिद्धान्त विनिश्चय चेतस्तत्प्रवणं सेवा तत्सिद्धयै तनुवित्तजा तत ससार दुःखस्य निवृत्ति ब्रह्मबोधनम्** देखो सारा अनिश्चय दूर कर दिया है तुम्हारा किसी प्रकारका सशय मनमें मत रखो अपने घरमें बिराजती भगवत्सेवामे अनन्याश्रयी बनकर तुम तुम्हारे तन, तुम्हारे धन और तुम्हारे मनको समर्पण करो तो **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम्** किस कारण वह तुम्हारी लौकिक गति करेंगे? कैसे निश्चयसे भर दिया है तुम्हें तुम्हे आरम्भ बता दिया है कि भगवानकी ओर जाना हो तो किस प्रकार आगे बढना किस रीतिसे चलना? **तत्सिद्धयै तनुवित्तजा** तुम्हारेमें विश्वास ठूस ठूस कर भर दिया है **तत ससार दुःखस्य निवृत्ति ब्रह्मबोधनम्**

अरे! तुम्हारा दुर्गति कैसे हो सकती है? तुम्हारा ससार तब निवृत्त होगा जबकि तुम तुम्हारे तनुवित्तका विनियोग करोगे चित्त तुम्हारा भगवानमें पुर जायेगा, ऐसा निश्चय श्रीमहाप्रभुजी सिद्धान्तमुक्तावलीमे दे रहे हैं तो एक बात ध्यानसे समझो कि जो दूसरा कदम है आरम्भका वह बहुत ही ड्रास्टिक् स्टेप् है वह आरम्भ महाप्रभुजीने अपने पुष्टिसिद्धान्तके बालबोधसे नहीं किया है सिद्धान्तमुक्तावलीसे किया है क्योंकि बालबोध ग्रथके उपदेशसे विश्वास पैदा करना चाहते है कैसी खूबसूरती इस विश्वास और आरम्भके बातकी अपने यहा है! जो लज्जा अथवा जो अनिश्चय तुम्हे सता रहा है, उसे तुम प्रभुको समर्पो, तुम मर्यादी हो, अपरस पालते हो तो उस अपरसको तुम समर्पो अपरस नहीं पालते हो तो ताजबीबी जैसे होगे, अलीखान जैसे होगे लेकिन तुम्हारा तन, तुम्हारा वित्त, तुम प्रभुको समर्पित करो लज्जा नहीं करो इसके बारेमें कि इतने बडे भगवान मेरेसे कैसे प्रसन्न होंगे? यह तो छोलोंसे भी प्रसन्न हो जाते है और छप्पन भोगसे भी प्रसन्न हो जाते है प्रश्न छोले या छप्पनभोगका नहीं है, प्रश्न है तुम्हारा तन, तुम्हारा धन, तुम्हारा मन, तुम लज्जा अनिश्चय रहित होकर प्रभुको समर्पित करो **चेतस्तत्प्रवण सेवा तत्सिद्धयै तनुवित्तजा** (सिद्धान्तमुक्तावली-२) तुम्हारे तनुवित्तके निश्छल विनियोग उपरान्त तुम्हारी सेवा सिद्ध हो जायेगी ऐसा महाप्रभुजीने हमें आरम्भ करनेका इनिशियेटिव लेनेका उपदेश दिया है

## आरम्भका अपोजिट अपराधबोध

अब आरम्भकी जो विपरीत अवस्था है उस मानसिक दुरवस्थाको ऐरिक्सन अपराधबोध कहता है गिल्टीफीलिंग जब भी बालकमे लज्जा एव अनिश्चयकी स्थिति बढती है तो वह बडे लोगोंकी अच्छी तरहसे नकल नहीं कर सकता तब उसके भीतर अपराधकी भावना जाग जाती है हमारेसे अपरस किस प्रकार पल सकेगी? हमारे यहातो नलका पानी है तुम्हारे यहातो

कुवाका पानी है तुम्हारे यहा तो मुखिया भीतरीया हैं, जलघरिया है नहलानेकेलिये हमारे यहा यह सब कहा है? ऐसे हम प्रभुको क्या सुख दे सकते हैं? सेवा तो आपही करना जानते हैं हम क्या जानें सेवा करना? हम कितनी सेवा कर सकते है? हमे तो आफिस जाना होता है आजकल ऐसे सब अपराधोंसे वैष्णवोंको ग्रस्त कर देनेमें आ रहा है

## श्रीमहाप्रभुजीने अपनी सामर्थ्यसे हमे अपराधबोधरहित बनाया

एक महाप्रभुजी ही हमें ऐसे अपराधबोधसे उबार सकते हैं ऐसे कह कर सूर केके काहे घिघियात है, कछु भगवल्लीला गा! क्यों घिघिया रहे हो तुम पुष्टिमार्गीयों! तुम्हारेमें अगर आत्मनिर्भरताका विकास अच्छी तरहसे हुवा होता तो घबरानेकी कोई जरूरत नहीं पडती अपराधबोधकी कोई जरूरत नहीं थी महाप्रभुजी कहते हैं कि यह सब जो कुछ अपराधोंकी भावना तुम्हारे भीतर जागती है, किसलिये जागती है? देश, काल, कर्म, कर्ता, मन्त्र, स्वभावत यह सब फ्लोप हो गये हों तो भी मैं तुम्हे कह रहा हू कि कृष्णएव गतिर्मम, कृष्णएव गतिर्मम, कृष्णएव गतिर्मम. तुम अपराधबोधसे व्यर्थमें क्यों घबरा रहे हो? महाप्रभुजीके समयमे क्या देश-काल कम खराब था? जब देखो तब आकर मुसलमान हमारे स्वरूपोंको लूट लेते थे, खडित कर देते थे उस समय महाप्रभुजीने गृहसेवाका सिद्धान्त स्थापित करके कहा कि प्रत्येक व्यक्ति गृहसेवा करे और उनके घरोंमें से ही नहीं लूटते थे ऐसा भी नहीं था श्रीपद्मनाभदासजीके पासस लूट कर ले गये थे यह हमारी वार्ताओमें स्पष्ट उदाहरण मिलता है तो देश-काल तो आजकी तुलनामें उस समय अधिक खराब था आज कोई जबरदस्ती मुसलमान नहीं बनाता या तुम्हारे ठाकुरजीको लूट कर ले नहीं जाता या खडित कर देता इतनी सुविधा तो आजके समयमें है ही लेकिन उल्टी रीतिसे वर्तमानमें गोस्वामी बालकोने ही मुसलमानोंसे उत्तराधिकार ले

लिया दिखता है कि तुम तुम्हारे ठाकुरजीकी अपरस या नेगभोग बिना सेवा नहीं कर सकते, और ऐसा बहाना बनाकर वह लोग तुम्हारे ठाकुरजीको हथिया लेते हैं! यह बात अनोखी है प्रश्न यहा यह हैं कि हम अपराधबोधसे ग्रस्त हो रहे हैं हमने कृष्णबोधको, सिद्धान्तबोधको नहीं जगाया अपने भीतर यह उसका दुष्परिणाम है

महाप्रभूजी कहते हैं **विवेकधैर्यभक्त्यादिरहितस्य विशेषत पापासक्तस्य दीनस्य कृष्णएव गतिमम्** (कृष्णाश्रय ९) बिगड बिगड कर तुम्हारा कितना बिगड सकता है? यह तो औडिटेड् खाते है ध्यानमें रखना समझे तूम कितना घाटा दिखा सकते हो, सामने आओ खुला चैलेन्ज महाप्रभुजी दे रहे हैं कि तूम तुम्हारी भक्तिका खाता दिखाओ कितना घाटा है वह दिखाओ, कितना दिखाओगे? श्रीमहाप्रभुजी पूछ रहे हैं कि तुम्हारे अन्दर विवेक नहीं है? वह चलेगा! धैर्य नहीं हैं? वह भी चलेगा! क्या कहा भक्ति भी नहीं है? तो वहा भी कहते हैं चलेगा! महाप्रभुजी आज्ञा करते है कि सारे घाटेके खातेको मैं सिमटवानेको (राइटऑफ) तैयार हू, शर्त एक ही है कि तुम्हारे कृष्णाश्रयके लाभका खाता तुम्हारी किताबोंमे साफ सूथरा दीखना चाहिये जो बात माननेवाली नहीं है वह है यह कि कृष्णके आश्रयको तुम्हे छोडना नहीं है कृष्णके आश्रयको तुम नहीं छोडो तो हरेक बात चलेगी और कृष्णके आश्रयको छोडनेके बाद तुम्हारी किताबोंमें जमाखाता बोलता हरेक आंकडा वास्तवमें घाटेमे बदल जानेवाला है तुम्हे विवेक होगा, धैर्य होगा, आश्रय होगा, भक्ति होगी तुम्हारे मेड-मरजाद या नेग भोग रागके वैभव भी कृष्णाश्रय बिना बेकार! मेरे मार्गमें अन्य कुछ भी नहीं चलेगा **विवेकधैर्यभक्त्यादिरहितस्य विशेषत पापासक्तस्य दीनस्य कृष्णएव गतिमम्**

महाप्रभुजी कहते हैं सर्व सामर्थ्यवान् कृष्णको मैं तुम्हारे साथ एग्रीमेंटमे बाध रहा हू अतएव इसकी शरणागतिमें आओ और यह तुम्हारा उद्धार करेगा, करेगा और करेगा ही किस तरह अपराधबोधसे हमको रहित बना दिया है! एक बार अपराधबोधरहित बनानेकी महाप्रभूजीकी इस सामर्थ्यका हमें विचार करना चाहिये कि नहीं? तुम कर करके अपराध कितने अपराध करोगे? नलका पानी प्रयोगमें लाते हो, क्या होगा नलके पानीका प्रयोग करनेसे! पाप लगेगा ना? **पापासक्तस्य दीनस्य कृष्णएव गतिर्मम.** कृष्णाश्रय तुम्हारा दृढ है कि नहीं! यह सब कुछ जो तुम्हारी किताबोंमें डेबिट एकाउन्ट बोल रहा है उसमें यहा इस तरफ प्रोफिटका एकाउन्ट है कि नहीं कृष्णाश्रयका? **कृष्णएव गतिर्ममका** भाव दृढ है कि नहीं? यह हैं तो महाप्रभुजी कहते हैं सब चलेगा, कुछ चिता करनेकी जरूरत नहीं है अर्थात् दृढ मनोबल करके बैठो कि कृष्णाश्रयके पाठ कराकर श्रीमहाप्रभूजी हमें अपराधबोधरहित बना रहे हैं

<u>तीसरा सोपान. उद्योग/पुरुषार्थ</u>

अब एक बार अच्छी तरह समझलो किसी छोटे बच्चेसे कहा जाये नवरत्न बोल तो यदि इसे लज्जा आ जाये, या अनिश्चय हो जाये कि अगर गलत बोलू और कोई मुझे थप्पड मारे तो? सेवा करे और कोई अपराध हो जाये तो? और अपराध हो जाये अर्थात् ऐसे गलत काममें पडना ही नहीं सेवा करेंगे तो अपराध तो पडेंगे ही ना! अर्थात् ऐसे अपराध तो गोस्वामी बालकोंको ही करने दो अपन क्यों ऐसे गलत काममे पडें गोवालकोंको ही अपराध करने दो, ऐसे अनिश्चयसे तूम कभी भी पुष्टिमार्गपर आगे नहीं बढ सकते, यह बात हमें साफ तौर पर समझ लेनी चाहिये तो हमने विश्वास एव निश्चयके साथ कुछ आरम्भ किया, तो उसके बाद ऐरिक्सन जो बात कहता है वह है उद्योगकी

उद्योग अर्थात् क्या? आरम्भकी तुलनामें उद्योगका एक अलग अभिप्राय है उद्योग अर्थात् अपने एफर्ट्सका एप्लीकेशन् तो उद्योग अर्थात् किसी बारेमें प्रयास करना अर्थात् आरम्भ तो कर दिया संस्कृतभाषामें एक कहावत है **आरम्भशूरा खलु दाक्षिणात्या.** हरेक बातका आरम्भ कर दें परन्तु तत्पश्चात् भाईसाहब कहा गायब हो गये पता ही नहीं चलता ऐसा भी होता है तो ऐसा आरम्भ यह अलग तरहका है और उद्योग, अर्थात् **उद्योगिन पुरुषसिंहम् उपैति लक्ष्मी** ऐसा कहा जाता है आरम्भ करो और उद्योग न करो तो तुम्हारा कुछ भी विकास नहीं हो सकता विश्वास आरम्भ और इनके बाद तीसरा कदम है उद्योगका

<u>उद्योगका प्रतिबंधक लघुताग्रथि/इन्फीरियारीटि कॉम्प्लेक्स</u>

ऐरिक्सनने उद्योगका अपोजिट् बहुत सुंदर समझाया है कि जिसे उद्योग नहीं सूहाता उसमें इन्फीरियारीटि कॉम्प्लेक्स विकसित हो जाता है जिसमें हीनपना होता है वह क्या सेवा कर सकेगा, सेवा तो सब मरजादी लोग करते हैं, सेठ लोग करते हैं, अपने घरमें प्रभु क्या पधरायें? इस प्रकारकी हीनता, आत्मग्लानीकी जड मान्यता विकसित हो जाती है महाप्रभुजीने यह हीनता, तुम्हारा ये इन्फीरियारीटि कॉम्प्लेक्स सब दूर कर दिया है अतएव महाप्रभुजी निश्चयसे आज्ञा करते हैं **निवदिधि. समर्प्यैव सर्वं कुर्याद् इति स्थिति सेवकाना यथा लोके व्यवहार प्रसिद्धयति तथा कार्यं समर्प्यैव सर्वेषा ब्रह्मता तत. गगात्व सर्वदोषाणा गुणदोषादिवर्णना गगात्वेन निरूप्या स्यात् तद्वदत्रापि चैव हि** (सिद्धान्तरहस्य २,७,८)

तुम कैसी लघुग्रन्थि या हीनता रखते हो? तुमने प्रभुको समपर्ण किया कि नहीं? अगर पुष्टिप्रभुको समर्पण किया है तो प्रभु जैसे अलौकिक है वैसा तुम्हारा सारा प्रयास अलौकिक हो गया अब उद्योग शुरु कर दो समर्पण कर दो उद्योग करते ही

**गगात्व सर्वदोषाणा गुणदोषादिवर्णना गगात्वे न निरूप्या स्यात्** तम्हारी सारी हीनता धुल जायेगी गंदा पानी भी गगामें मिलकर गगा बन जाता है इस प्रकार अपनी अहता-ममताका गदा ससार भी प्रभुको समर्पित होनेके कारण भक्तिकी उत्तमोत्तम उपलब्धि बन जाता है मुझे मेरी अहन्ता ऐसे लगती है कि **दासो अह** मुझे **मेरी ममता** ऐसे लगती है **श्रीकृष्ण शरण मम** तो मेरी अहता-ममताका ऐसा जो विकास है, ऐसा जो उत्कर्ष है, यह मेरी सारी हीनभावनाको दूर कर देता है जीव दोषोंसे भरा हुवा है और रहेगा परन्तु निर्दोष पुष्टिप्रभु मेरी सेवा स्वीकारनेकेलिये बधे हुवे हो तो दोष बिचारे क्या कर पायेगे? श्रीगुसाईजी ने कहा है **बलिष्ठापि महोषा त्वत्क्षमाग्रे अतिदुर्बला तस्या. ईश्वरधर्मत्वाद् दोषाणा जीवधर्मत** (विज्ञप्ति ३-१९) इस कारण भय बिना ऐसा उद्योग हमें करना चाहिये हमे यह उद्योग श्रीमहाप्रभुजीने सिद्धान्तरहस्य ग्रन्थमें कितनी खूबसूरतीसे समझाया है!

## विकासका चौथा सोपान आत्मनिर्धार/सेल्फ आइडेन्टिफिकेशन

ऐरिक्सनने चाइल्ड डेवलपमेन्टके जो प्रोसेस दिखाये हैं उनकी रोशनीमे जरा देखो तो तुम्हें पता चलेगा कितना सिस्टमेटिक उपदेश हमारे श्रीमहाप्रभुजीने दिया है वह कितना मनोवैज्ञानिक है मनोविज्ञान तो अब उत्पन्न हवा है महाप्रभुजीने उस समय अपने उपदेशोमें यह सब सावधानिया ली थीं कि नहीं, यह निर्णय तुम खुद ही करो खैर, उद्योग करनेवालेको ऐरिक्सन एक बहुत सुदर बात कहता है आत्मनिर्धार आत्मनिर्धार होता है सेल्फ आइडेन्टिफिकेशन यह अपने बारेमें जान सकता है कि म हू कौन? किस प्रकार पता चले कि मैं कौन हू? खत्म हो गई ना बात, तुम्हें पता ही नहीं कि तुम कौन हो?

मेरा एक जान पहचान वाला था उसने बताया कि उसके यहा दो भाई काम करने आते थे एक दिन इसने अपने यहा काम करनेवाले एकसे पूछा कि तुम्हारे कितने बच्चे है? उसने अपने भाईसे पूछा क्यो भाई! कितने बच्चे हैं मेरे? दूसरे भाईने कहा कि चार वह पहला भाई बोला हा हा मेरे चार बच्चे है! अब विचारो कि स्वय स्वयके पिता होनेकी वास्तविकता कि तेरे कितने बच्चे हैं तो किसी दूसरेसे पूछकर कहना पड़ता है हैं भाई अपने कितने बच्चे और दूसरा कहे कि चार ही तो बादमें अपनेको ध्यानमे आये कि हा हा चार ही तो अतएव आत्मनिर्धारके विषयका अभाव जानना कि नहीं?

तो आत्मनिर्धार यह बहुत ड्रास्टिक स्टेप है कि तुम स्वयको पहचानो कि तुम पुष्टिजीव हो तुम अपने आपको तो पहचान नहीं सकते कि तुम पुष्टिजीव हो तो तुम्हें आत्म-अनिर्धार हो गया कहलायेगा अगर तुम अपने आपको पहचान नहीं सकते तो किस कारण नहीं पहचान सकते? उसका एक कारण समझो बहुत महत्वपूर्ण कारण है कि तुम जो काम करते हो उस रीतिसे तुम अपने आपको पहचानते हो कि नहीं? जो काम ही तुम नहीं करते तो तुम अपने आपको उस साधनसे किस प्रकार पहचान सकते हो? जैसे कपडे बेचने वाला हो तो कापडिया सुखड (चन्दन) बेचता हो तो सुखडिया, गायोका स्वामी हो तो गोस्वामी इस प्रकार जो जो व्यवसाय होगा वह उद्योग होगा उससे मनुष्य अपनी पहचान बनाता है, निर्धारण करता है गुजरातमें रहते हो तो गुजराती, महाराष्ट्रमें रहते हो तो मराठी, हिन्दुस्तानमे रहते हो तो हिन्दुस्तानी, यह अपना आत्मनिर्धार है कि मैं कौन हू? यह तो अपना उद्योग अपन करते हो तभी होगा ना! उद्योग अर्थात् धधेके अर्थमें यह नहीं है उद्योग अर्थात् पुरुषार्थ कोई पुरुषार्थ करता होगा तो हमे हमारी पहचानको उस पुरुषार्थके आधारपर पहचाननेका अवसर खडा होगा जब हम पुरुषार्थहीन हो जायेगे तब अपने आपकी

पहचानको पहचाननेकेलिये कोई पहचानपत्र टाग नहीं सकते कि मैं मेरी पहचान कैसे पहचानू? अतएव सबसे पहले अपने आपको पहचानना है जैसे **नो दाइसेल्फ** सोक्रेटिस कहता था वैसे ही अगर तुम्हे अपने आपको पहचानना है तो कुछ उद्योग तो करना पडेगा ऐसे ही पुष्टिमार्गमें भी तुम्हें अपने आपको पहचानना है तो कुछ उद्योग करना पडेगा वह उद्योग महाप्रभुजीने अच्छे शब्दोंमें आज्ञारूपमें अथवा और्डररूपमें नहीं किया वैसे तो हमारा उद्योग क्या है उसे तो महाप्रभुजी पुष्टिप्रवाहमर्यादा ग्रथमें हमें बता ही चूके हैं कि **भगवद्रूपसेवार्थ तत्सृष्टिः न अन्यथा भवेत्** (पुष्टिप्रवाहमर्यादा १२) इस प्रकार तुम्हे अपनी पहचानको पहचानना पडेगा कि मैं भगवदरूपसेवार्थ प्रकट हुवा हू और **तत्सृष्टि न अन्यथा भवेत्** इसके अतिरिक्त मेरी दूसरी कोई अन्य पहचान नहीं हो सकती मैं सेवा करता होऊ तो ही मेरी पहचान है सेवा नहीं करता होऊ तो भी मेरी बीमारीवाली पहचान तो यही है कि **स्वरूपेण अवतारेण निर्गेन च गुणेन च तारतम्य न स्वरूपे देहे वा तत्क्रियासु वा तथापि यावता कार्य तावत् तस्य करोति हि** (पुष्टिप्रवाहमर्यादा १३)

इस बातको जरा ध्यानसे समझो कि तुम्हारे पास अपने आपको पहचाननेका एक उद्योग होगा तो तुम तुम्हारी पहचानको पहचान सकते हो ऐसा आत्मनिर्धारक उद्योग अर्थात् पुष्टिजीवोंको अवश्य करनेका उद्योग और वह उद्योग तुम्हें समझानेमें आ रहा है **भगवद्रूपसेवार्थ तत्सृष्टि न अन्यथा भवेत्** यह तुम्हारा आत्मनिर्धारक उद्योग है

<u>आत्मनिर्धारका अभाव पालनकी कमीके कारण :</u>

जब तुम्हारा आत्मनिर्धार डगमगा जायेगा तो तुम्हें अनिर्धार होगा, तब कुछ न कुछ तुम्हारे पालनमें प्रोब्लम् होगी उसका अनुमान कर लो

तुम्हारे पुष्टिमार्गीय मा बापने या तो तुम्हे अच्छी तरहसे सिखाया पढाया नहीं या हम गोस्वामियोने तुमको इस मार्गपर अच्छी तरहसे चलाया नहीं पुष्टिमार्गमे आते हुवे अनुगामियोंमें पुष्टिमार्गीय शिक्षाकी खासी कमी है पुष्टिमार्गमे जन्मा बच्चा अपनी आत्माको उस रीतिसे पहचान ही नहीं सकता यह पहचान तो प्रत्येक पुष्टिमार्गीयमें होनी ही चाहिये एक बहुत ही मजे की बात बताता हू, ध्यान दोगे तो समझोगे प्रत्येक परिवारमें जो छोटे बच्चे होते हैं उनस पूछो कि तुम बडे होकर क्या बनना चाहोगे? लगभग साठ सत्तर प्रतिशत ऐसा अभिगम बतायेगे, पिता जो काम करता हो तदनुसार ये कहेंगे कि मैं बडा होकर डाक्टर, टीचर वगैरह बनूगा डाक्टरका बच्चा खेलमें ही स्टेथोस्कोप या थर्मामीटर लगाकर खेलता मिलेगा जिसका पिता ऑफिस जाता होगा तो वह बच्चेपनसे कहना शुरु करेगा कि मैं बडा होकर ऑफिस जाऊगा जो पढाता होगा उसका बच्चा बडा होकर मैं पढाऊगा ऐसा कहेगा

मुझे ठीकसे याद है कि द्रुमिलबाबा बहुत छोटे थे, सात या आठ सालके होंगे हमारे बडे मदिरमे आते और बैठ जात मथुरेशजीकी अदामें और फिर प्रवचन देना चालू करते कि पुष्टिमार्गीय भाइयो और बहनों अब मैं तुम्हे पुष्टिमार्ग समझाता हू ऐसे कहकर प्रवचन चालू कर देते थे आत्मबोध था कि मुझे क्या करना है इतने छोटे थे द्रुमिल तबकी बात कह रहा हू क्योंकि मथुरेशजीका देखा था प्रवचन करते हुवे इसका नाम आत्मनिर्धारिक उद्योग उद्योग आरम्भ ना करे तो आत्मनिर्धार ही नहीं हो सकता तुम्हे क्या करना है इसका पक्का निर्धारण नहीं हो सकता अतएव आत्मनिर्धार बहुत जरूरी है

<u>विकासका पाचवा सोपान घनिष्ठता/इन्टिमेसी</u> :

आत्मनिर्धारके बाद एक विकास ऐरिक्सन बहुत सुदर बताता है जिस व्यक्तिका आत्मनिर्धार हो गया उसे क्या मिलता है? उसे बहुत घनिष्ठता मिलती है इन्टिमेसी प्राप्त होती है

बहुत सुदर नाम दिया है कि जिसे अपनी पहचानके साथ पहचान हो जाती है वह अपने जैसे दूसरोंको खोजकर उनका इन्टिमेट हो सकता है जो अपनेको ही नहीं पहचानता कि मैं कौन हू, तो किसके साथ मैं मिलू यह पता ही नहीं चलेगा यह जो प्रोब्लम है उसका समाधान देखो **निवेदनम् तु स्मर्तव्य सर्वथा तादृशै: जनै** (नवरत्न २) हम तादृशीको किस प्रकार खोज सकेंगे? तादृशीको किस रीतिस खोजना? हाथमे गौमुखी ली हुई हो वह तादृशी? माथेपर मोटा तिलक लगाता हो वह तादृशी? प्रवचन करता हो वह तादृशी? नहीं नहीं, तो तादृशीको किस प्रकार खोजोगे? तादृशीको हम तबही खोज सकते हैं कि जब हमारी अपनी आत्माके भीतर तादृशी भाव भरा हुवा हो! अगर निज आत्माके भीतर तादृश भावकी भावना नहीं है तो तादृशी भगवदीयको खोज नहीं सकते अतएव आत्मनिवेदनके द्वारा सबसे पहले तुम्हे अपने आपको ही खोजना पडेगा अपनी पहचानको खोजना पडेगा अगर ये तुम्हें मिल गई तो तुम्हें पता चलेगा कि तुम कौन हो? तत्पश्चात् तुम्हें तादृशी मिलेंगे तुम्हारे अधिकारके अनुरूप इसकेलिये सस्कृतमें एक बहुत सुन्दर श्लोक है **मृगा मृगै सगम् अनुव्रजन्ति गावोश्च गोभि तुंरगास्तुरगै:। मूर्खाश्च मूर्खै. सुधियो सुधीभि समानशीलव्यसेनेषु सख्यम्।।**

घोडेको छोडो तो वह गायोंक बाडेमें नहीं घुसेगा घोडे जहा खडे होंगे वहा ही हिनहिनाता घुस जायेगा गायोंको छोडो तो ये घोडोंके तबेलोंमें नहीं घुसेगी, गायोंमें ही जाकर मिलेंगी **गावोश्च गोभि तुरगा तुरगै मूर्खा च मूर्खै** जो स्वयमें मूर्ख होगा वह तो खाज खोज कर मूर्खोंको ही खडा करेगा क्योंकि दोस्ती उन्हींके साथ निभेगी जो कोई समझदारीकी बात करेगा तो यह कहेगा, यह तो सब सिद्धान्तोकी बातें हैं और पुष्टिमार्ग तो प्रमेयका मार्ग है! लो हो गया न काम अब कहा जाना? यहा तो सब प्रमेयकी बात होनी चाहिय, सिद्धान्तकी चर्चा क्यों? पुष्टिमार्गमें सिद्धान्तका क्या लेना देना यह तो प्रमेय मार्ग है तब तो **मूर्खा च मूर्खै** समझ लेना चाहिय ऐसे तो बहुतसे भगवदीय

तुम्हे भारतमें मिल ही जायेंगे एक ढूढो तो दस मिलेंगे क्योंकि तुम मूर्ख हो तो तब ही ना! **सुधियो सुधीभि समानशीलव्यसनेषु** सख्यम् क्योंकि समानशील समानव्यसन होता है तबही सख्य होता और निभता है अतएव **निवेदनम् तु स्मर्तव्य सर्वथा तादृशै जनै** (नवरत्न २) तुम्हे तुरन्त इन्टिमेसी प्राप्त हो जायेगी तुम्हारे अधिकारानुरूप और यह बहुत बडी उपलब्धि कहलाती है

<u>घनिष्ठताके अभावमें अकेलेपनका दोष और उसे दूर करनेके उपाय</u>

ऐरिक्सनने इसका भी अपोजिट बहुत खूबसूरत दिया है जिनमें इन्टिमेसीकी कैपेसिटी नहीं होती, घनिष्ठताकी सामर्थ्य प्राप्त नहीं होती, उस बच्चेकी क्या दुर्गति होती है? यह कहता है कि वह अकेला पड जाता है उसे अकेलापन अच्छा लगता है वह कोनेमें बैठे रह कर दुनियाको देखता रहता है कि यह क्या है? यहा कौन अपना है! कौन अपना नहीं है? सब पाखडी हैं कोई सिद्धान्तकी चर्चा करता है, कुछ भी बिकता प्रसाद नहीं लेता कोई स्वाध्यायी है ठीक है परन्तु तू कौन है? यह तो बात बता **अन्यनु तो एक बाकु आपना अठार** है वह मनुष्य अकेला पड जाता है **ऊट कहे सभामें सभी** बाके अगवाले **भूडा भूतलमे पशुओने पक्षीयो अपार हैं.** यह अकेला पड जाता है, सब पशु पक्षीयोंसे अपनी पहचानको छोटा मान लो अकेला बैठा सबके गुणदोषोंका चिंतन करता रहता है यह अकेलापन ऐसा होता है जबकि जो अपना घनिष्ठ आत्मनिर्धार करता है तो उसे तत्काल अपने अनुरूप ग्रुप मिल ही जाता है तो नवरत्नमे हम देख चुके है कि **निवेदनम् तु स्मर्तव्य सर्वथा तादृशै जनै.** सन्यासनिर्णय ग्रथमें भी तुम देखोगे आगे जाकर तो इस बातका महाप्रभुजीने बहुत स्फुटतर प्रतिपादन किया है कि अन्य तादृशीयोका सग हमें करना पडेगा भक्तिवर्धिनीमें भी इस बारेमें उपदेश देनेमे आया है **अत स्थेय हरिस्थाने तदीये सह तत्परै..**

**सेवाया वा कथाया वा यस्य आसक्ति दृढा भवेत्** (भक्तिवर्धिनी - ९)

उसी प्रकार जलभेद पञ्चपद्यानि इत्यादि ग्रंथोंमें सग किसका करना? किस प्रकार करना? किसे अपना मानन? किसे अपना नहीं मानना? अर्थात् अकेलापन किस प्रकार दूर करना ये दिखलानेमें आया है भक्तिवर्धिनीमें भी महाप्रभुजीने इन प्रश्नोंका समाधान दिया है **बाधसम्भावनायान्तु नैकान्ते वास इष्यते. हरिस्तु सर्वतो रक्षा करिष्यति न संशय.** (भक्तिवर्धिनी - १०) एकान्तवासकी जल्दबाजी मत करो मिलजुल कर रहो

हम सब पुष्टिमार्गीय है किस कारण एकातमे चर्चा करनी चाहिये? सिद्धान्तचर्चा सार्वजनिक क्यों न हो? तो कहा जाता है कि यह तो एकान्तमें बद दरवाजोंमें ही होनी चाहिये अरे तुम साइकोलोजिकल् प्रोब्लमसे पीडित हो रहे हो क्योंकि तुम्हे अकेलापन खा रहा है पुष्टिमार्गमें सिद्धान्तचर्चा जो कोई भी पुष्टिमार्गीय हों वह सब मिलकर साथ साथ क्यो नहीं कर सकते? तुम्हारेमें घनिष्ठता नहीं है इसलिये नहीं कर सकते सोधा सादा इसका जबाब यह है डरनेकी क्या बात है? तुम वैष्णवोके सामने सिद्धान्तचर्चा किस कारण नहीं हो सकती? लेकिन अगर इन्टिमेसी न हो तो कुछ न कुछ गडबड है दूसरी सभी चर्चाएँ हम सार्वजनिक रूपमें करेंगे परन्तु यह करनेमें कुछ दिक्कत आ जाती है क्योंकि हम अकेले पड गये है सिद्धान्तचर्चा तो बद दरवाजोमें ही होती है सार्वजनिक रूपमें नहीं क्योकि अगर वैसे किया जायेगा तो वैष्णव कहीं सिद्धान्तोको समझ न जाये? फिर तो प्रलय, अर्थात् यह सब गडबड ही है समझे इस गडबडपर अपनेको काबू पाना पडेगा **चिन्ता कापि न कार्या निवेदितात्मभि: कदापीति भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च मतिम्** (नवरत्न १) इसलिये नवरत्न जैसे ग्रथको अच्छी तरहसे समझनेके लिये अकेलापन दूर करना पडेगा

विकासका छट्ठा सोपान सृजनशीलता/प्रोडक्टिविटी

अकेलेपनके बाद ऐरिक्सन अब एक बहुत सुदर बात कहता है कि जब तुम्हारा अकेलापन दूर हो जायेगा तब क्या होगा? तो वह कहता है कि तब तुम्हारेमें प्रोडक्टिविटी आयेगी अर्थात् तुम प्रोडक्टिव, सृजनशील, बनोगे मनुष्य कभी भी अकेला रह कर सृजन नहीं कर सकता सृजनकी पहली शर्त है कि हम अच्छी तरहसे हिलमिलकर रहें तो कुछ काम हो सकता ह अच्छी तरह हिलमिल कर काम नहीं करेंगे तो प्रोडक्टिविटी खत्म हो जायेगी कोइ भी पुरुष अकेला पिता नहीं बन सकता कोई भी स्त्री अकेली माता नहीं बन सकती कहीं तो इक्ट्ठा होना पडेगा, किसी न किसीके साथ तो सख्य अपने भीतर खिलाना पडेगा फिर अपनेमें सृजनशीलता आयेगी ऐरिक्सनने प्रोडक्टिविटीका अपोजिट भी बताया है श्रीमहाप्रभुजीने हमें यह बताया है कि प्रोडक्टिविटी वास्तवमें क्या है कि जिसे हम प्रोड्यूस कर सकते है?

क्या इस पुष्टिमार्गमें खाली मठडी, लड्डू, मोहनथाल ही प्रोड्यूस करने होते है? क्योंकि हम बहुत प्रोडक्टिव है, मनोरथी हैं, पैसा लेकर भीतरियाओंको, भडारीयोंको ऑर्डर दे दूगा कि आज मोहनथालकी चक्कीकी सामग्री आनी चाहिये बादमे उसका प्रोडक्शन करके उस मोहनथाल, बुदी, मठडीको बेच दूगा ऐसी प्रोडक्टिविटीकी बात नहीं चल रही भाईसाहब! यह तो लक्ष्मीके जो बच्चे हैं जो होटेल कि रेस्टोरेंटके व्यापारमे अटके हुवे हैं उनकी बात है यमुनाजीके बच्चे ऐसा प्रोडक्शन नहीं करते, यमुनाजीके बच्चोंका प्रोडक्शन कुछ दूसरे प्रकारका होना चाहिये तो इस प्रोडक्शनकी प्रकृति क्या है? प्रभुने हमें किस कारण प्रोड्यूस किया है? किस प्रकार प्रोड्यूस किया है? इसे समझोगे तो समझमे आयेगा कि प्रभुके हम किस प्रकारके प्रोडक्शन है सक्षेपमे पुष्टिमार्गीय प्रोडक्शनका स्वरूप समझना हो तो हम

इतना समझ सकते है कि पुष्टि अर्थात् जो सर्वमें आसक्त हो और सर्वासक्तिको भगवदासक्तिके रूपमें प्रोड्यूस कर सकता हो तो वह पुष्टिमार्गीय या पुष्टिका प्रोडक्शन है जिस जीवकी **या प्रीतिः अविवेकानां विषयेषु अनपायिनी त्वाम् अनुस्मरतः सा मे हृदयाद् मा अपसर्पतु** सर्व विषयोमें रही हुवी अर्थात् दारा आगार, पुत्र आप्त, इत्यादि विविध विषयोमें रही हुवी जो अपनी आसक्ति इसे पभ्की पुष्टिकी शक्तिसे, पुष्टिकी शक्तिका साक्षात् आधिदैविक स्वरूप श्रीयमुनाजी यह पुष्टिकी शक्तिसे प्रोड्यूस करती है भगवदासक्तिरूपमें **तया सकल सिद्धियो मुररिपु च सन्तुष्यति स्वभाव विजयो भवेद् वदति वल्लभ श्रीहरे** (यमुनाष्टक २) अब स्वभावविजय अर्थात् क्या? प्रत्येक विषयोमे हमारी जो आसक्तिका स्वभाव है उसके ऊपर हमारी विजय प्राप्त होनेकेलिये भगवदासक्ति हो वह आसक्ति छोडनेकी हमें जरूरत नहीं पडती, विषयोंमे रही हुवी आसक्तिको ही, श्रीमहाप्रभुजी विवेकधैर्याश्रय एव निरोधलक्षण ग्रन्थोंमें समझाते है **एव चित्ते सदा भाव्य वाचा च परिकीर्तयेत्** (विवेकधैर्याश्रय १३) **हरिमूर्ति सदा ध्येया सकल्पादपि तत्र हि दर्शन स्पर्शन स्पष्ट तथा कृतिगती सदा श्रवण कीर्तन स्पष्ट पुत्रे कृष्णप्रिये रति** (निरोधलक्षण १७-१८) तदानुसार पुष्टिप्रभुके साथ जोड देनेके लिये होता है

इस प्रकार प्रत्येक विषयमे रही हुई हमारी आसक्ति एक मिट्टी जैसी है विषयोंमें रही आसक्ति खानमें पडे सोने या चादी जैसी या हीरेके पत्थर जैसी है इसे परन्तु हमें खोदकर बाहर निकालना पडता है और साफ करके घड कर प्रोड्यूस करना पडता है जैसी मिट्टीका घडा बनाते है वैसे ही अपनी विषयासक्तिको अपनी भगवदासक्तिमें कौन घडेगा? भगवानकी पुष्टि या पुष्टिशक्ति और यह पुष्टिशक्ति जब हमारी विषयासक्तिको भगवदासक्तिमें घड देगी तब हम, पुष्टिभक्तके तौरपर क्या घडते है? जो सर्वोद्धारक परमात्मा है उसे अपने

भक्तोद्धारक तौरपर अथवा तो स्वात्माद्धारक तौरपर घडकर निकालते है होगा तू गामका या ब्रह्माण्डका भगवान मेरे लिये तो तू मेरा ही है मेरे माथेपर बिराजते हुवे मेरे ठाकुरजी हो ना कि पब्लिक ट्रस्टके या गामकेलिये बिराजते ठाकुरजी इस सर्वोद्धारकको स्वात्मोद्धारक तौरपर घडनेकी प्रोडक्टिविटी अपने यहा है

ये सृजनशक्ति या प्रोडक्टिव पावर् हमारी कब सफल होती कि जब हमारे ऊपर पुष्टिवृष्टि हुवी हो ऐसी कि जिससे अपनी विषयासक्ति भवदासक्तिमे बदल जाये

इससे सर्वोद्धारक परमात्मा हमारे माथे ऊपर ऐसी रीतिसे बिराज जाता है कि इसे हम भोग धरें तबतो खाता है, हम इस जगाये तब जागता है, हम इसे सुलायें तो सोता है, हम इसे शृगार धरायें तो यह शोभायमान होता है, ऐसा भगवान हम बना सकते है यह अपनी वास्तविक प्रोडक्टिविटी है यह अगर हम प्रोड्यूस नहीं कर सकते तो कहीं न कहीं कुछ गडबड है कहीं न कहीं तुम्हारे पालन पोषणमे प्रोब्लम हो गई लगती है या तो भगवानकी पुष्टि तुम्हारेमें काम नहीं करती, या फिर प्रभूकी पुष्टिशक्ति द्वारा तुम्हारी विषयाशक्ति भगवदासक्तिमें बदली नहीं, या फिर यहा वहा भटक कर तुम पाखड कर रहे हो भगवानने अपनी पुष्टिशक्ति प्रयोग करके तुम्हारी विषयासक्तिको भगवदासक्तिमें रिप्रोड्यूस किया हो तो तुम सर्वोद्धारकको भक्तोद्धारक अर्थात् तुम्हारे स्वयके उद्धारक स्वयके माथे बिराजते ठाकुरजी बना सकते हो यह ही पुष्टिमार्गमें सबसे बडी प्रोडक्शनकी रीतिभाति है यह बात अगर हम अच्छी तरहसे समझ जाये तो **बीजदार्ढ्यप्रकारस्तु गृहे स्थित्वा स्वधर्मतो अव्यावृत्तो भजेत् कृष्ण पूजया श्रवणादिभि.** (भक्तिवर्धिनी २) वचनमे कहे हुवे ये जगद्व्यापी परमात्माको, जो कण कणमें व्याप रहा है, उसे तुम अपने घरमें पधरा सकते हो उसे तुम कह सकते हो कि तू यहा आ जा और हमारे पास बैठ जा **दर**

खेलन जाओ ला रे वनमे बैठे हाउ बिलाउ. तुम उसे डरा सकते हो ऐसे कि वह डरके मारे कभी भी तुम्हारा घर छोडकर बाहर न भटके तुम उसे ऐसा बना सकते हो रिप्रोड्यूस कर सकते हो यह कहता हैं कि मैं सर्वव्यापक हू **नह्यस्यास्ति प्रिय कश्चित् नाप्रियो वास्त्यमानिनो . नात्मीयो न परश्चापि सम पश्यन् हि सर्वत्र समवस्थितम् ईश्वर न हिनस्ति आत्मना आत्मान** . हू तो तुम भी यह कह सकते हो कि जो कुछ घढने लायक आपने हमको घढा है वैसे ही हमने आपको घढा है तुम कहते हो वैसे तुम मिट्टीके रूपमें कदाचित होगे लेकिन गढेक रूपमें जैसे तुम्हें घडकर निकाला है कि अब आपको हमारे ही घरमें बिराजना पडेगा **रहिये मेरे ही महल अनत न जइये शैया सामिग्री वसन आभूषण सब विध कर रखोगी पहल.** किस कारण दूसरी जगह जाते हो? ऐसी रीतिसे हम अपने सेव्य प्रभुको घड सकते हैं इससे समझोगे कि अपने पुष्टिमार्गका प्रोडक्टिव कोर्स कैसा हैं यह जितनी है उतनी प्रोडक्शन लाइन बिल्कुल ठीक है जहा कुछ खराबी है वहा समझो कुछ न कुछ घोटाला हो गया या तो मैनेजमेन्टमे खराबी हैं, या मजदूर जो हैं वह कामचोर हो गये दीखते हैं, अथवा तो तुम्हारी पूजी समाप्त हो गई कहीं न कहीं नुक्सानमें जा रही है तुम्हारी कम्पनी इस बातको समझो, जब तुम ऐसा प्रोडक्शन कर नहीं सकते, तुम्हारी प्रोडक्शन लाईनको तुम जान नहीं सकते यह अपने पुष्टिमार्गकी बहुत महत्वपूर्ण बात है

## विकासका सातवा सोपान

## आत्मस्वरूपबोध/ईगो-आईडेन्टिफिकशन

इसके बाद आखिरी स्टेप् ऐरिक्सन बताता हैं कि जब तुम सृजनशील बन गये तब तुम्हारे लिये ईगो-आईडेन्टिफिकेशन, तुम्हारी आत्माका जो कुछ वास्तविक स्वरूप हैं उसे तुम पहचान सकते हो आत्मतादात्म्यका बोध, इसके अपोजिट रूपमें ऐरिक्सनके मत अनुसार तुम्हारा ईगो

स्प्लिट् हो जाता हैं ईगो स्प्लिट् होनेका ऐक्जेट उदाहरण हमें समझना हो तो वह इस प्रकार कि **सिद्धान्त तो सब ठीक है लेकिन व्यवहारमे कैसे लाये? इसमे थोडी व्यवहारिक परेशानी हैं।** ऐसे कहनेवालोंका ईगो स्प्लिट हो गया ना! **वास्तविक** सिद्धान्त व्यवहारमे ला सकते नहीं अर्थात् ईगो स्प्लिट हो गया वास्तविक सिद्धान्त कहेगे तो लोग हमे मानना ही छोड देंगे क्योंकि लोगोंकी श्रद्धा सिद्धान्तोंमें नहीं परम्परामें है ईगो स्प्लिट हो गया ऐसे ही जब हम प्रोडक्टिव नहीं हो सकते तब हमारी ईगो स्प्लिट हो जाती हैं आत्माका वास्तविक रूपके साथ तादात्म्य हम प्राप्त नहीं कर सकते सागर नामके एक शायरने कहा है **दश्ते-वहशतका सफर लगता है इश्क भी कारे हुनर लगता है एक अजब शख्श भरा है मुझमे आइना देखु तो डर लगता है आदमी खुदसे बिछुड जाये अगर अजनबी अपना ही घर लगता है** यह अक्षरश आज पुष्टिमार्गपर लागू पडता हैं सिद्धान्तोके शीशेमें अपना मुख देखनेसे मोटे तौरपर पुष्टिमार्गीयोंको आज डर लगता है क्योंकि आज हम वास्तविक पुष्टिमार्गीय सिद्धान्तोके घटादार वृक्षोंकी छायावाले पुष्टिमार्गसे बहुत दूर छिटक कर अपसिद्धान्तोके उजाड रेगिस्तानमें भटक रहे हैं वह अपसिद्धान्त अर्थात् पुष्टिभक्तिका व्यापारीकरण खूलेमें नौटकी अतएव पुष्टिप्रभुके इश्कको हमने पैसोंके खेलका, हुनरका कौशल तो बना दिया है लेकिन उसमेसे पुष्टिप्रभु तो नदारद हो गये यह भी जान लेना चाहिये इस कारण आत्मस्वरूपबोधके अभावमे होता ऐसा आत्मविभाजन बहुत ही भयकर होता है टु बी और नॉट टू बी!

<u>आत्मस्वरूपबोधका विरुद्ध आत्मविभाजन/ईगोस्प्लिट्</u>

जिसे अग्रेजीमे स्प्लिट् पर्सनालिटि कहते है एक बार बच्चेका लालन पोषन इस प्रकार करो कि इसकी पर्सनालिटि स्प्लिट हो जाये तो वह कभी भी कोई काम ठीकसे नहीं कर सकेगा वर्तमानमें हम पुष्टिमार्गीय भी समाजमे कोई उल्लेखनीय

रिजल्ट नहीं दे सकते इसका मुख्य कारण यह है कि हमारी (हमारे पूपा गोबा लोगोंकी और तुम्हारे पप्पा बापा-बापी लोगोंकी) पर्सनालिटि स्प्लिट हो गई है उसका कारण आत्मस्वरूपके साथ तादात्म्यबोध हम लोग नहीं करते कि हमारी ईगो आईडिन्टिटी कैसी? मैं कैसा इसका बोध होना चाहिये जो भी काम करू, दस काम करू लेकिन मेरी यह सेन्स् ऑफ ईगो सबके साथ मिलकर कहीं खंडित न हो जाये तुम्हारी ईगो तुम्हारे व्यक्तित्वका एक पहलू अगर तुम्हारे व्यक्तित्वके दूसरे पहलूसे अलग है तो आत्मविभाजन हो गया मोटे तौरपर क्या होता है कि जब ट्रैफिकमें हम आते जाते हो और अगर ज्यादा ट्रैफिकके कारण हमारी कार जाममे फस गई तो तुरन्त हमारी ईगो स्प्लिट हो जाती है हम कहते हैं देखो कितना ट्रैफिक बढ गया है? कार चलानेकी भी जगह नहीं है. अरे यार! तू भी तो ट्रैफिकको बढा रहा है यह भूल कैसे भूल गया? इसमें तुम्हें कष्ट हुवा तो तुम्हारा ईगो स्प्लिट हो गया अब तुम अपनेको ट्रैफिकका हिस्सा समझनेको तैयार नहीं हो तकलीफ तो होगी ही मनुष्यको तकलीफ न हो यह तो हो ही नहीं सकता लेकिन इन छोटो मोटी किसी भी तकलीफमे ईगो स्प्लिट नहीं होना चाहिये देश, काल बदल जाते हैं कानून बदल जाते हैं, ऐसे ही बहुत सारी वस्तुये बदल जाती है, इनमें कोई दिक्कत नहीं इस बदलावमें, बदले हुये देशकाल और कानूनमे या तो तुम्हारे ईगोको तुम पूर्णतासे निभा सकते हो अथवा तो देशकालके अनुसार अपने ईगोको ही बदल सकते हो तो ईगो स्प्लिट नहीं होगा लेकिन निरतर बदलते देशकालमें तुम भी निरतर गगा गये गगादास और जमुना गये जमुनादास, बनते रहो तो फिर तो हो गया तुम्हे पता ही नहीं चलेगा कि कब कौन आ जायेगा और उसके कारण तुम्हें क्या बनना पडेगा!

जैनोमें इस बातके बारेमे एक बहुत अच्छा प्रसग है हजार वर्ष पहले दो भाई जैन धर्मके थे इनको बौद्ध धर्म

समझनेके लिये बौद्धोंके मठमे एडमिशन लेना पडा अब एक समय बौद्ध मठमें बौद्ध गुरु कुछ जैन धर्मके बारेमें समझा रहे थे लेकिन इनको जैन धर्मकी बारीकी पता नहीं थी, इस कारण एक दो दिन पाठ बद हो गया पाठ कैसे आगे चले? खुद ही न समझ आ रहा हो तो पढाये कैसे? अतएव एक दो दिन पाठ बद रहा उन दिनों बौद्ध अपने मठोंमे जैनोंको एडमिशन देकर नहीं पढाते थे इस कारण जैन भाईयोंको बौद्ध बनकर एडमिशन लेना पडा उनमे एकका नाम अकलंक और दूसरेका नाम निष्कलंक था अब बौद्ध बनकर धर्म पढते थे तो तीन दिन पाठ नहीं चला अतएव अकलंकका धीरज टूट गया उस पाठमे जो कोई विसंगति थी वह उसने पुस्तक में सुधार दी इस प्रकार पढनेपर यह बात समझमें आ जायेगी अब बौद्ध गुरुको ऐसा लगा कि कोई दुष्ट जैन अपने मठमे घुस गया लगता है अब किस प्रकार उसको तलाशा जाये? जिसे जिसे पूछा गया कि तुम कौन? हरेक व्यक्ति बोला मैं बौद्ध सबने बुद्ध शरण गच्छामि, धम्म शरण गच्छामि, सघ शरण गच्छामि बोलनेके लिये कहा गया तो वह सब बोल ही गये अब पहचानना किस प्रकार? बहुत मजेदार प्रसग है सुनने लायक ईगोका ध्यानसे सुनना अब इनने कहा चलो एक काम करो, महावीरका चित्र भूमिपर धरा और सबसे कहा कि इसके ऊपर पैर रखो उस जमानेमें श्वेताबर बहुत थोडे थे, अधिकतर दिगम्बर ही थे बुद्ध और महावीर दोनोंकी बैठने की रीति तो एक जैसी ही ध्यानमुद्राकी लेकिन बुद्ध वस्त्रधारी और महावीर निर्वस्त्र अतएव अकलकने विचार किया कि पैर धरनेसे पहले एक झीना सूत्रका डोरा डाल दू तो वह अपने निर्वस्त्र भगवान महावीर मिटकर बुद्ध बन जायेंगे सूत्रका डोरा डाला अर्थात् रेखाचित्र अब सवस्त्र बुद्धका बन गया उसके ऊपर पैर रखनेमे अकलकको क्या परेशानी थी? उसने पैर रख दिया अर्थात् बौद्ध गुरुने जो टेस्ट लिया वह फिरसे फेल हो गया अब किस प्रकार पता लगाना कि वास्तवमें कौन जैन यहा घुस आया है? जैन बिना तो कोइ और इस

बातको जान नहीं सकता कोई कबूल करता नहीं कि मैंने पाठ सुधारा है अब गुरुने कहा कि अचानक रातको धूमधडाका करो सब सोते हो तो सबके ऊपर दृष्टि रखो ऐसे जोरका धमाका किया कि पहले जितने बौद्ध विद्यार्थी सो रहे थे वह तो वैसेके वैसे उठकर बैठ गये और अकलक जैन होनेके कारण नवकार मत्र बोले बिना उठा नहीं अतएव पकडा गया बौद्ध होकर बौद्ध मठमें पढ रहा था परन्तु जैन होनेका ईगो कितना कि **णमो अरिहंताण, णमो जिनाण/सिद्धाण, णमो आयरिआण, णमो उवज्झाण, णमो सव्व लोएसु साहूण** बोले बगर उठे तो उठे कैसे? अर्थात् नींदमें था इसलिये पकडाईमें आ गया बहुत दगे हूवे इस बात पर सातसौ आठसौ जैन बौद्ध आपसमें लडकर मर गये ऐसा दगा हो गया था इस घटनाके कारण खैर, एक बात समझो अब तो देशकाल बदल गये हैं उस जमानेमे अकलकका जो ईगो था कि मैं महावीरका अनुयायी हू नवकार मत्र बोले बिना मैं खडा नहीं होउगा इतना काम कर ही रहा था कि नहीं? ईगो उसकी स्लिट नहीं हूवी वेश बदल गया, दिनचर्या बदल गई, लेकिन ईगो वहाकी वहा ही रही

हमें लगता है कि सरकारने कानून बदल दिया तो अब हम ऐसे कैसे कहें कि ठाकुरजी हमारे माथे बिराजते हैं कहेंगे तो सरकार ठाकुरजीके कारण होती कमाईपर टैक्स लगा देगी इस डरके कारण पर्सनालिटि स्लिट हो गई सरकारने कानून बदला लेकिन तूम कैसे बदल गये? अतएव तुम्हारी पर्सनालिटि स्लिट हो गई तुम्हारा ईगो स्लिट हो गया अर्थात् सेल्फ/ईगो आईडेन्टिफिकेशनकी तुम्हारेमें कमी रही है यह भली प्रकार पालन पोषण न करनेकी कमी है

<u>आत्माके अविभाजनके लिये श्रीमहाप्रभुजी द्वारा ली गई सावधानी</u>

ऐरिक्सनने यह जो बात बताई है उसी प्रकार महाप्रभुजीने भी षोडशग्रंथोंमे अपनी ईगो कहीं स्प्लिट न हो जाये उसके लिये अच्छी सावधानी ली है यह तो बहुत विस्तारका विषय है लेकिन फिर भी जैसे तुम्हारे पुष्टिमार्गमें आनेके बाद तुमसे सेवा नहीं निभती तो कथा करो, कथा नहीं निभती तो तीर्थयात्रा करो, तीर्थयात्रा ठीक नहीं पडती तो मर्यादामार्गीय वैष्णव मन्दिरोंमें दर्शन-पूजापरायण होवो, शरणागति करो, शरणागति नहीं रुचती तो विवेक करो, अगर और कुछ नहीं होता तो श्रीकृष्ण शरणमम बोलते रहो यह बोलनेमें तुम्हारा क्या जाता है? बोलते रहो इसमें हेतु श्रीमहाप्रभुजीका एक ही कि तुम्हारी ईगो आईडेन्टिफिकेशन पर कहीं कभी चोट न लग जाये - तुम्हारा ईगो जागरूक रहे मैं कौन हू और मुझे क्या करना है और मुझसे क्या होना चाहिये?

बच्चोंके विकासमे यह मनोवैज्ञानिक पहलू है जो ऐरिक्सनने बताये हैं उनकी इतनी अतिशय सावधानी शायद ही किसी धर्मोपदेशकने ली है इतनी डीटेलवाइस् सावधानी शायद ही किसी धर्माचार्यने अपने धर्मोपदेशमे ली हो कि न ली हो लेकिन महाप्रभुजीने यह सब सावधानिया ले रखी है अपनी मानसिक जटिलताओंकी, इतनी अधिक सावधानी हमारे श्रीमहाप्रभुजी नहीं लेंगे तो कौन लेगा?

अतएव श्रीमहाप्रभुजी हमें नवरत्नमे भी इसी सावधानीका उपदेश दे रहे हैं कि क्या करो कि जिससे निवेदनके बाद तुम्हारा ईगो स्प्लिट नहीं हो क्या करो अगर तुम विनियोग नहीं कर सकते तो तुम्हारा ईगो स्प्लिट न हो, क्या करो कि जब तुम्हारे बच्चे बच्चिया बहू बेटे बेटिया तुम्हारी भक्तिकी रीति-भाति कि मेंड नहीं पालते मैं तो मरजाद लेकर सेवा करता हू लेकिन वह मासिक धर्म नहीं पालती कौन? जो नई बहू आई है न वह ऐसे क्षुद्र हेतुओसे तुम्हारा ईगो स्प्लिट हो

जाता है अतएव घरमें सेवा करनी ही नहीं व्यापारिक हेतुओंसे चलती हवेलियोंमें सेवाके ग्राहक बनकर पैसा चढा आओ इस प्रकारका ईगो स्प्लिट हो गया है एक बार नवरत्न जैसे जैसे तुम सुनोगे वैसे वैसे समझते जाओगे, पुष्टिमार्गमें प्रवृत्त होनेके बाद **पुष्टिमार्गे प्रवृत्तस्य दादर्यार्थम् उच्यते, अन्धस्य सूर्यदेव तद्विमुखस्य ने** अत्र अर्थिता ऐसा कहकर पुष्टिमार्गमें प्रवृत्त होनेके बाद तुम्हारी जो पुष्टिमार्गीय होनेकी अस्मिता है उसे प्रभुचरण दृढ करना चाह रहे है महाप्रभुजी नवरत्नमें तुम्हारी ईगो स्प्लिट न हो जाये ऐसी रीतिसे पुष्टिमार्गपर चलनेमें जैसा मौसम हो बरसात का कि तूफानका ठण्डीका कि गरमीका, कच्चा रास्ता हो कि पक्का, शेर चीते भी आ गये हो तो भी मार्ग परसे तुम्हारा ईगो कभी भी स्प्लिट न हो इस बातकी अतिशय सावधानी नवरत्नमें श्रीमहाप्रभूजीने रखी है

तुम अपने आपको किस प्रकार समझ रहे हो इसमे किसी भी दिन ऐसी टूटन, ऐसी दरार कि फाट नहीं आये कि सिद्धान्त तो ठीक हैं लेकिन खुलेमे चर्चाकरने जैसे नहीं हैं. मोटे तौरपर मानते हुवे भी कुछ हमे मान्य नहीं हैं ऐसे सब उद्गार आज ईगो स्प्लिट होनेके उदाहरण, हम गोस्वामी बालकोके मुखारविन्दोमें भर गये हैं नवरत्न पढो तुम्हारी समस्त चिताओका निराकरण हो जायेगा हम अपनी पुष्टिमार्गीय होनेकी अस्मिताको इस नवरत्न ग्रथके सहारे जान पायेंगे इस भावनासे प्रारम्भ करते हैं हम लोग और यह सावधानी श्रीमहाप्रभूजीने ली है

## उद्वेग और चिताके बीच रहे हुवे सबधका विचार

सेवाफलमें महाप्रभुजी हमें सेवाकी फलरूपताके साथ पुष्टिमार्गमे बाधक क्या है वह भी समझाते है भगवत्सेवा करनेपर भी भोग, उद्वेग और प्रतिबध बाधक होते है उनको

तुम किस तरहसे ओवरकम् करोगे? महाप्रभुजी कहते हैं **निवेदिभि. समर्प्यैव कुर्याद्** (सिद्धान्तरहस्य ४)

समर्पण करनेके बाद जो भोग तुम करते हो उसमें तुम घबराओ नहीं **अलौकिकस्तु भोग प्रथमे प्रविशति** यह तो तुम्हारी अलौकिक सामर्थ्य है कि तुम समर्पितका उपभोग कर रहे हो. यह तुम्हारे भोगकेलिये नहीं, यह तुम्हारे आत्मसमर्पणके आधारपर करे हुवे विनियोगका भगवत्प्रसाद है तुम्हारा अह=आत्मबोध घायल नहीं हो जाये उसके लिये भोगका निराकरण श्रीमहाप्रभुजीने सिद्धान्तरहस्य ग्रथमें किया है उद्वेगकेलिये महाप्रभुजी कहते हैं कि उद्वेग भी भगवत्सेवामें प्रतिबधकरूप होता है

उद्वेगको अच्छी तरहसे समझो उद्वेग अर्थात् क्या? उद्वेग अर्थात् किसी भी प्रकारका शारीरिक या मानसिक आवेग ही अपन भीतर उभरता रहता है जैसे अपनेको उल्टी होती हो तो यह एक प्रकारका पेटका उद्वेग है हमारी पाचनशक्तिका जो नोर्मल प्रोसेस है वह उद्विग्न हो गया है **ओवीजी=भय-सञ्चलनयो.** जो मानसिक या शारीरिक या बाह्य वेग तुम्हें डरायें अथवा जो तुम्हें चलायमान कर दे तुम्हारे रास्तेसे तुम्हे डिगा दे उसका नाम **वीजी=वेग** जो तुम्हें एकसे दूसरे रास्तेपर चला दे अब **उद्+वेग=उद्वेग** अर्थात् ऊपर उठता जो वेग जिसे हम काबूमें न ला सकते हो उसका नाम **उद्वेग.** श्रीपुरुषोत्तमजी बहुत अच्छी तरहसे समझाते हैं कि इस नवरत्नमें एक प्रकारकी चिंता नहीं है तीन प्रकारकी चिंताओंका निराकरण श्रीमहाप्रभुजीने किया है [१]उद्वेगसे उत्पन्न होती चिंता, [२] उद्वेगरूपा चिंता और [३]उद्वेग उत्पन्न करनेवाली चिंता ऐसे त्रिविध चिंताओंका यहा निराकरण करनेमें आया है

(१) <u>उद्वेगसे उत्पन्न होती चिंता</u>

कितनी चितायें अपनी ऐसी होती हैं कि जो उद्वेगके कारण उत्पन्न होती है हम लोग जब समाजमें रह रहे हैं तो किसी न किसी भयकी परिस्थिति उत्पन्न होगी ही, तब हमें उद्वेग हो जाता है उद्वेग होना यह बहुत ही स्वाभाविक वस्तु है प्रत्येक जीवित मनुष्यको, जिसे गालिब बहुत ही अच्छी तरहसे कहता है दिलही तो है ना संगोखिश्त दर्दसे भर न आये क्यों? यह दिल हैं कोई ईंट पत्थर तो नहीं है दिल है तो इसमें कुछ न कुछ दु ख तो अनुभव होगा ही लेकिन इस दु खको तान तान कर कितना तानोगे? चिताकी सीमा तक तानना? तो श्रीमहाप्रभुजी कहते हैं तानो नहीं भाईसाहब जो उद्वेग होता है तो उसे उद्वेग ही रहने दो इसे तानकर चिताके रूपमें मत पलटो

(२) उद्वेगरूपा चिता

किसीको उद्वेगरूपा चिता हो जाती है कि नित्य ही उद्वेग मेरे पास एक बहन आती है कमसे कम मेरे पास सौ-डेढसौ बार तो आई ही होगी लेकिन जब भी आये तब ही मुझे एक ही बात कहे कि गुरुजी बहुत उद्वेग है अब जब भी मेरे पास यह आये तो मैं कैसियो बजाने बैठ जाऊ, तबला बजाने लगू तो यह मेरेसे कहे कि आप सुनते क्यों नहीं कि मुझे बहुत ही उद्वेग है अतएव मुझे भी उद्वेग होने लगा! यह आये इसकी मैं चिता नहीं करता लेकिन उद्वेग तो हो ही जाये मैंने उसे एक दिन कहा उद्वेग है तो अब उसे सहो, मैं भी तो सह रहा हू कि नहीं? मनमें तो मैं सोच रहा था तुम जो पैदा करती हो वह अर्थात् जब भी आये तब एक ही रट कि बहुत उद्वेग है गुरुजी अरे कोई दिन तो मेरे घर इस प्रकार आवो और हस कर कहो आज कोई उद्वेग नहीं है. उससे मैं भी आश्वस्त होऊ यह आये अतएव मैं जो न करता होऊ तो भी कुछ न कुछ करना पडे जिससे कि उसका उद्वेग मेरी चितामें कहीं परिणत न हो जाये भूल हेतु इतना ही कुछ होगी उसकी भी तकलीफ

अतएव अपने उद्वेगको आउटलैट देती होगी मैं भी लाचार होकर कभी संगीत प्रोडक्टिव करने लगू लेकिन फिर भी न करने दे कैसियो बजाता हू तो रोक कर कहे **आप सुनते क्यों नहीं बहुत उद्वेग है.** अरे अच्छा फसा, क्या समुद्रमें डूब कर मर जाऊ? मुझे तब ऐसा लगे कि महाराज बहुत ही समझदार होते है कि एक द्वारपाल रखते है जो अवाछनीय व्यक्तिको घुसने ही न दे. लेकिन मैं क्या करू, मैं वैष्णवोको इतना अलग नहीं मानता इसे उद्वेग है तो हमें भी थोडा शेयर करना चाहिये तो थोडी अपनी सामर्थ्य अनुसार शेयर करता भी हू मेरी सामर्थ्य जब समाप्त हो जाती, तब कुछ न कुछ ऐसा उपद्रव भी करना पडता है तबला बजाऊ, कैसियो बजाऊ, पुस्तक पढने लगू, कौम्प्युटरपर बैठ जाऊ, किसी भी प्रकार यह उद्वेग चितामें न बदले अतएव कितनी ही चिंतायें स्वय उद्वेगरूपा होती हैं

(३) <u>उद्वेग उत्पन्न करनेवाली चिंता</u>

कितनी चिंतायें उद्वेगजनिका होती है अर्थात् उद्वेग उत्पन्न करने वाली होती है, चिंता पहले शुरु होती है और उसके कारण तुम्हारेमे उद्वेग होना प्रारम्भ हो जाता है उद्विग्न हो जाते हो

<u>चिंताके स्वरूपका विचार</u>

एक मुख्य प्रश्न यहा खडा होता है कि तब चिंता अर्थात् क्या? यह बात अपनेको अच्छी तरहसे समझनी पडेगी चिंता यह वास्तवमें जीवनमे एक समस्या है जबकि हम **समस्या** शब्दका अर्थ भी बहुत अच्छी तरहसे नहीं समझते है **समस्या** शब्द बहुत जगह प्रयोग करते हैं **समस्या** शब्द सस्कृतका बहुत मजेदार शब्द हैं **सम्+अस्या = समस्या** अर्थात् जो फैंक देनी जैसी बात हो वह **अस्या** कहलाती है **समस्या** अर्थात् सम्पूर्णतया या अच्छी तरह जो फैंक देने जैसी हो वह अब बौद्धिक रीतिसे, व्यवहारिक रीतिसे, भावना कि प्रेम रूपमें जिस प्रकारकी **समस्या** हो वह

अल्टिमेटली वह फैंक देनेकेलिये ही होती है सग्रह करनेकेलिये नहीं होती कितनेही राजनीतिके विद्वानोंका ऐसा स्पष्ट अभिप्राय है कि काग्रेसने प्रशासन तो बहुत अच्छी तरहसे किया लेकिन बहुत सी समस्याओंको सचित करके रखा समस्याओंको निबटा नहीं दिया उनका रोना हमको आज तक रोना पड रहा है समस्या बेसिकली सुलझा देनी चाहिये निबटा देनी चाहिये अस्या अर्थात् असु=क्षेपणे फैंकनेकी, निबटानेकी क्रिया जैसे हम कूडा घरमेंसे निकालकर बाहर फेक देते है उसे समस्या कहते है और इसका अपोजिट शब्द है **समाधान** समस्याका समाधान अर्थात् क्या? कि जिसे अच्छी तरहसे सचित करना चाहिये वह ऐसी रीतिसे रखो कि वह हमेशा सग्रहित रहे उसका नाम समाधान उद्वेगसे जनित चिंता यह एक समस्या है उद्वेग रूपा चिता यह भी एक हमारी समस्या है उद्वेगजनिका चिता यह फिर अपनी समस्या है और उसका समाधान रहा हुवा है चिताके चिंतनमे -

**चिन्ताकापि न कार्या निवेदितात्मभि कदापीति।**
**भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम्।।**

(नवरत्न १)

वास्तवमें तो यह चिता न करनेका उपदेश नहीं है बल्कि चिंतन करनेका उपदेश है चिंतन और चितामें एक ही मानसिक क्रिया होती है लेकिन जो मानसिक क्रिया, समस्या हो तो वह चिता बनती है और समाधान हो तो वह चिंतन बनता है एक उद्वेगजनिका है और दूसरी उद्वेगनिवारक एक उद्वेगरूपा है तो दूसरी अनुद्वेगरूपा एक तुम्हें अशात बनायेगी जबकि दूसरी शान्त अतएव चिंतन विचार विवेक कि धैर्य कि आश्रयसे जनित होता है चिंतन समाधानरूप होता है जैसे हम अपने छोटे बच्चेका वजन उठा सकते है अत वह सुखद रूप लगता है लेकिन जब उठा नहीं सकते तो वह दु ख कि समस्या बन जाता है अतएव श्रीमहाप्रभुजी चिंतनका उपदेश देते हैं कि कोई भी

चिंता तुम्हे होती हो तो उस समय किस प्रकारके चिंतनसे तुम्हारी समस्याका समाधान होगा यह समाधान फेंक देनेका नहीं होता हम **चिन्ताकापि न कार्याको** रट लें तोतेकी तरह और जब चिंता हो तब नवरत्नके नौ पाठ करो और बादमें नौ पाठोंसे चिंता दूर न होती हो तो ९० पाठ करो और ९० पाठोंसे चिंता निवृत्त न हो तो ९९० पाठ करो! क्योंकि नौ तो पूर्ण संख्या है और चिंता अपूर्णताके कारण होती है अतएव **चिन्ताकापि न कार्या** उपदेशका इस प्रकार ढिंढोरा पिटता है अरे! यह तो सबसे बडी चिंता हो गई इतने सारे पाठ क्यो कर रहे हो? इसके बजाय एक बार अच्छी तरहसे उपदेशका मर्म क्यों नहीं समझ लेते कि किस प्रकारके चिंतनका उपदेश इसमे देनेमें आ रहा है, तो तुम्हारी चिंता दूर हो जायेगी क्योंकि चिंतन यह समाधान है और चिंता यह समस्या है चिंतनको अच्छी तरहसे संभाल लेना चाहिये ऐसे तोतेकी तरह पाठ करके केवल समय बरबाद मत करो बरबाद करनेकेलिये नहीं है अतएव इस नवरत्नका विचार हम आगे जाकर करेंगे इन्ट्रोडक्शनमें अभी मुझे थोडा और अधिक बोलना है और बाकीके श्लोक भी कल लूंगा ऐसा मुझे विश्वास है

## नवरत्न, अन्तःकरणप्रबोध, विवेकधैर्याश्रय ग्रंथोमें वर्णित चिंताके विषयकी आन्तरिक संगति

नवरत्न, अन्तःकरणप्रबोध और विवेकधैर्याश्रय किशोरबोधके ग्रन्थ है एक बात ध्यानसे समझो इन तीनों ग्रंथोंमें मूलत चिंताके ऊपर काबू कैसे पाया जाये उसके ही उपाय उपदेशित किये गये हैं नवरत्न अगर सूत्र हो तो विवेकधैर्याश्रय उसका भाष्य है नवरत्न अगर एक नियम हो तो अन्तःकरणप्रबोध इसका उदाहरण है जैसे अपने कहने में आता है **यत्र यत्र धूम तत्र तत्र वह्नि** जहा जहा धुआ होता है वहा वहा आग होती है तो फिर अपनेको लगता है कि देखो तो जरा धुआ कहा है और उसके साथ अग्निका साहचर्य कहा होता है?

इसका कोई उदाहरण तो हमे बताओ फिर कोई हमे दो चार दृष्टात कि उदाहरण दे कि रसोईघरमे धुआ होता है वहा आग होती है अतएव जहा जहा धुआ होता है वहा आग होती है तदानुसार श्रीमहाप्रभुजीने **चित्तोद्वेग विधायापि हरि यद्यत् करिष्यति तथैव तस्य लीलेति मत्वा चिन्ता द्रुत त्यजेत** (नवरत्न ८) यह उपदेश दिया है

महाप्रभूजी ऐसी आज्ञा नहीं करते कि तुम पुष्टिमार्गीय हो गये इसलिये उद्वेग मत करो क्योंकि उद्वेग तुम नहीं करते हो परन्तु उद्वेग हो जाता है तुम जो करते हो उसकी मनाहीकी जा सकती है तुम बैठे हुवे हो तो मैं तुम्हें खडा होनेकी बात कह सकता हू तुम खडे हो तो तुम्हें बैठनेके लिये कहा जा सकता है लेकिन जो तुम कर ही नहीं सकते और उसे करनेका उपदेश तुम्हे दिया जाये तो उसका कोई अर्थ ही नहीं है जो स्वाभाविक रीतिसे हो सकता हो उसे करना हो कि न करना हो किसीको, किसी भी प्रकार विधि-निषेधात्मक उपदेश सार्थक नहीं होता अतएव उद्वेग जो हो रहा है वह तो होगा ही जो बात महाप्रभुजी इसमें कहना चाह रहे है वह यह कि उद्वेगसे प्रकट होती चिताओको छोड दो, अथवा उद्वेगको इतना मत तानो कि यह चिताका रूप धारण करले अथवा चिता इतनी अधिक भी मत करो जिससे कि तुम्हें अतमें उद्विग्न होना पडे यह बात महाप्रभुजी नवरत्नमे समझाना चाह रहे है तब उसका उदाहरण क्या? **चढ जा बेटा सूलीपे भली करेगे राम** ऐसा श्रीमहाप्रभुजीने नहीं किया महाप्रभुजी कहते हैं कि जिस कामको करनेके लिये मैं भूतलपर अवतीर्ण हुवा हू, जिस कामको करनेकी प्रभुने मुझे आज्ञा दी है उस कामको करनेकेलिये नहीं करनेके लिये प्रभु अगर मुझे ना करते है जिससे कि मेरे अवतारका सारा प्रयोजन फालतीफाई होता हो, बेकार होता हो, और प्रभु मुझे आज्ञा करें कि **देहदेशपरित्याग. तृतीयो लोकगोचर** (अन्त करणप्रबोध ६) तो मुझे चिता करनी अथवा

नहीं? कहते हैं कि नहीं **अन्तःकरण मद् वाक्य साधनतया शृणु। कृष्णात् परम् नास्ति दैव वस्तुतो दोषवर्जित समर्पणाद् अहं पूर्वम् उत्तम कि सदा स्थित। का ममाधमता भाव्या पश्चात्तापो यतो भवेत्** (अन्त करणप्रबोध १-३)

महाप्रभुजी डिमोन्स्ट्रेट् करके बता रहे हैं कि इस प्रकार चिंता छोड सकते हैं **लौकिकप्रभुवत् कृष्णो न द्रष्टव्य कदाचन आज्ञैव कार्या सतत स्वाभिद्रोहो अन्यथा भवेत्** (अन्त करणप्रबोध ४)

देखो फिरसे यही सिच्युअेशन् क्रियेट् हो रही है जो कुछ तुम्हारे अपराध हुवे **अज्ञानाद् अथवा ज्ञानात्** वे फिरसे न हों उसकी सावधानी रखना अच्छा या हुवे अपराधकी चिंता करते रहना अच्छा? अतएव श्रीमहाप्रभुजीके अपने सन्दर्भमें देखें तो आपश्री कहना चाह रहे हैं कि मैंने पुष्टिप्रभुकी आज्ञा मानी नहीं क्योंकि प्रभुने मुझे आज्ञा दी थी कि तुम भूतलपर स्वयंको प्रकट करो और भागवतका अर्थ प्रकट करो और इस अर्थको प्रकट करनेकेलिये मैं प्रकट होकर भागवतका वास्तविक अर्थ प्रकट कर रहा था तो वहा प्रभुने अचानक आज्ञा दी **अब बस करो, अब अधिक प्रकट मत करो, वापिस आ जाओ** मैंने आज्ञाका उल्लघन किया, सिद्धान्तकी दृष्टिसे प्रभुकी आज्ञाका उल्लघन कितना बडा दोष अब उल्लघन तो कर दिया अतएव अब प्रभुने अधिक स्ट्रोंग-वर्डेड् आज्ञा दी **लोकगोचरो देह-देश परित्याग** देह और देशका परित्याग करो अब जब लोकगोचर देह देशका परित्याग करना है तो उसकेलिये चिंता करनी कि नहीं ? प्रभु स्वय कभी तो एक आज्ञा करते हैं तो कभी दूसरी आज्ञा किस कारण करते हैं? अतएव किसी प्रकारकी चिंता अन्तर्द्वन्दवाणी इस परिस्थितिमें खडी हो रही है

ये ही प्रकार नवरत्नमे भी आगे आयेगा कि **सेवाकृतिर् गुरो आज्ञा बाधन वा हरीच्छया** सेवा करनी हैं तुम्हारे गुरुकी आज्ञानुसार और हरि जो इच्छा करें तो तूम गुरु आज्ञाका बाध भी कर सकते हो अब प्रभुने जब प्रथम आज्ञा दी कि तुम भागवतका अर्थ प्रकट करो तो ये गुरुभावसे दी गई आज्ञा थी उस गुरुभावसे आज्ञा प्राप्त करके भागवतका मुख्य तात्पर्य प्रभूसेवामें और भागवतका अर्थ मैं प्रकट कर रहा हू उसमे अचानक दूसरी आज्ञा आ पडी **नहीं, समेटो, सब बद करो.** अब यह गुरुभावकी आज्ञा कि प्रभुभावकी आज्ञा हैं? किस प्रकार निर्णय करना? कौनसी आज्ञा पालनी? कौनसी आज्ञा नहीं पालनी? अतएव **प्रारम्भमें** महाप्रभूजीने नहीं पाली अन्तमे महाप्रभूजीने निर्णय लिया **प्रौढापि दुहिता यद्वत् स्नेहाद् न प्रेष्यते वरे तथा देहे न कर्तव्य वर तुष्यति नान्यथा** (अन्त करणप्रबोध ८) प्रभु आज्ञा दे रहे हैं तो चलो देह **देश परित्याग तृतीयो लोकगोचर** भी मैं कर दूगा

अतएव नवरत्नमें नियम केवल उपदेश देनेके लिये कहे नियम नहीं हैं महाप्रभुजीने स्वय इन नियमोको जी कर एव पालकर दिखाया हैं अब तुमको किसकी चिता होती हैं? षोडशग्रथमें इनको जुडवानेका मुख्य हेतु यह है कि महाप्रभुजी इन नियमोको तुमको भी समझाना चाहते हैं

मेरे दिमागमें थोडी खराबी है अतएव फिरसे मुझे एक बात याद आ गई किसीके साथ मेरी चर्चा हो रही थी कि भाई! सिद्धान्त तो इतने सारे हैं तो उसने कहा कि सिद्धान्त इतने सारे हैं लेकिन अब सारी परिस्थिति बदल गई तो करना तो क्या करना? मैंने कहा करना कुछ नहीं लेकिन कमसेकम कह तो सकते हैं कि वास्तविक सिद्धान्त क्या हैं तो उन पृपागो बालकने मुझे कहा **अच्छा! अच्छा! अब मैं बिल्कुल ठीकसे समझा कि अपने सिद्धान्त केवल कहने भरकेलिये हैं मैं तो ऐसा समझ कर दुखी हो रहा था कि वास्तविक सिद्धान्त**

कबूल लेगे तो उन्हें पालनेकी जिम्मेदारी भी हमारे गले पडेगी. तो एक बात समझो सिद्धान्त महाप्रभुजीने खाली कहने भरकेलिये नहीं कहे परन्तु व्यवहारमे लानेकेलिये दिये हैं इससे अधिक विडम्बना जीवनमें और क्या हो सकती है कि जो काम लेकर कोई आये उसे कामकी आज्ञा देने वाला ना कर दे कि अब तुम्हे यह काम नहीं करना चलो बद करो यह सब और यहा वापिस आ जाओ ऐसी आज्ञाको भी झेलनेका माद्दा श्रीमहाप्रभुजीने करके दिखाया है जबकि आज हमलोग ऐसे कह रहे हैं कि बडे लोगोंके समयसे आती हुई जनतामें व्यापारिक हवेलीयोकी परम्परा हम लोग कैसे छोड सकते है? इसका अर्थ ऐसा कि चाहे तो ठाकुरजी परसे अपना हक जाता हो तो जाओ उसमें कोई कष्ट नही यह तो ऐसी बात हो गई कि जैसे कोई स्त्री ऐसा कहे कि जिस घरमे मुझे मेरे माता पिताने कन्यादान करके रहनेको कहा तो वह घर मैं क्यों छोडू? पति छूटता हो तो छूट जाये! लेकिन श्रीमहाप्रभुजी इससे विपरीत आदर्श प्रकट कर रहे हैं **प्रौढापि दुहिता यद्वत् स्नेहाद् न प्रेष्यते वरे तथा देहे न कर्तव्य** यह देह मुझ प्रभुने सौंपी है जिस कामकेलिये दी है, जितने समय काम लेना था लिया अब जब ना कर रहे हो कि नहीं चाहिये यह कामकाज उस कामको बद करनेकी भी तैयारी अपनी होनी चाहिये

महाप्रभुजीने इसके लिये कितनी स्ट्रगल करी है घरमे ठाकुरजी बिराजते हों तो सन्यास लेने जैसा हैं? गुसाईजीके प्रसगमे इसका बहुत सुदर मधुर प्रसग आता हैं ठाकुरजीकी सामिग्रीमें कुछ गडबड होनेके कारण श्रीगुसाईजीको इतनी अधिक ग्लानि हो गई कि आपश्रीको घरके प्रति वैराग्य उत्पन्न हो गया स्वय सन्यास लेनेको तैयार हो गये ऐसे गार्हस्थ्यको निभानेसे क्या फायदा जिसमे प्रभूका सुख न निभता हो गिरधरजीको आज्ञा दी **तुम मेरे कपडे भगवे रगमे रग दो और मैं सन्यास लेकर जाता हू** तब श्रीनवनीतप्रियाजीने कहा **लो मेरे तनिया भी**

भगवा रगमे रग दो. क्योकि तुम्हारे भरोसे तो मैं घरमे आकर रहा और तुम छोड कर जा रहे हो तो मैं कहा जाऊ? अतएव गिरधरजीने गुसाईजी के वस्त्र और श्रीनवनीतप्रियाजीकी तनिया दोनो भगवा रगमें रग कर सूखनेके लिये रख दी तब इसे देखकर श्रीगुसाईजी ने कहा नहीं! ऐसा त्याग मेरेसे नहीं हो सकता विदड्डा किया विचार नहीं! अब त्याग नहीं करना क्योंकि नवनीतप्रियाजीको मेरे कारण सन्यास लेना पड रहा है!

परमेश्वर सन्यास नहीं लेता अतएव यह सारी धाधलेबाजी चल रही हैं भूलेचूके यह अगर सन्यास ले ले तो **अच्युत केशव श्रीरामनारायण कृष्णदामोदरम्** हो जाये सब लिहाजा श्रीगुसाईजीको अपना निर्णय बदलना पड़ा महाप्रभुजीके चरित्रमें एक अलग सिच्युएशन खडी हुई है कि घरमें ठाकुरजी बिराज रहे हैं, एक नहीं पाच पाच ठाकुरजी बिराज रहे हैं, और सन्यासका कोई प्रसंग भी नहीं था वहा तो भी अचानक लोकत्यागकी आज्ञा हो गई गृहस्थको देहत्यागकी आज्ञा नहीं है और गृहस्थ देहत्याग करे तो आत्मघात कहलाता है देहत्याग बिना लोकत्याग भी कैसे सम्भव है? लेकिन सन्यासीको देहत्यागकी छूट शास्त्रने दी हैं सन्यासी देहत्याग कर सकता है इसकारण महाप्रभूजीने सबसे पहले सन्यास लिया सन्यास लेनेके बाद आपने अन्नजलका त्याग किया अन्नजलक त्यागके बादभी लोकगोचर देह नहीं छूटी तो गगाप्रवाहमें जाकर आपने जलसमाधि लेली दिखाकर बताया कि किस प्रकार आप नियमोका अनुसरण करते थे उदाहरणके द्वारा सिद्ध करनेकी आपकी निष्ठा, इसका एक बार विचार करोगे ना तो तुम्हारेमें भी हिम्मत आयेगी कि अपने आदर्श आचार्य कैसे है हमारे आदर्श आचार्यचरण कैसे हैं वह इन नियमोको समझा रहे हैं

इतनी कठोर आज्ञा प्रभु हमें कोई देनेवाले नहीं हैं भाई! घबराओ नहीं! यह तो महाप्रभुजीको ऐसी आज्ञा दी हैं प्रभुको

हमारी ऐसी गरज नहीं है कि हमे ऐसी आज्ञा दे और आज्ञा दे तो वास्तवमें हमतो निहाल हो जायें किसी दिन प्रभु हमे कहें कि इस देहको छोडकर मेरे पास आ जावो हम जाये कि न जायें वह अपनी विडम्बना होयगी कि **हे प्रभो! मैंने अपना सर्वस्व निवेदन आपको कर रखा है - सर्वस्व कृष्णसात् कृत्- लेकिन ऐसी आज्ञा हमे न दो तो ही अच्छा है. क्योकि इस घरमें बच्चोंकी सावधानी फिर कौन लेगा? आपको तो परिश्रम नहीं देना ना!** हम लोग ऐसे चालाक है यह बात तो प्रभु समझते ही हैं अतएव ऐसी आज्ञा देनेमें प्रभु भी कोई रिस्क् नहीं लेंगे अतएव **चिन्ताकापि न कार्या!**

हमे ऐसी कुछ आज्ञा प्रभु नहीं देंगे शातिसे रहो यह तो महाप्रभुजीने नियमको सिद्ध करनेकेलिये उस सीमा तक जाकर आज्ञा अनुसरी और तुम्हारे लिये आदर्श स्थापित कर दिया पश्चाताप. कथं तत्र (अन्तकरणप्रबोध ६) अतएव महाप्रभूजीका अन्त करण जो समझ रहा है उसे आप कह रहे है **चित्त प्रति यद् आकर्ण्य भक्तो निश्चिन्ता व्रजेत** (अन्तकरणप्रबोध १०) अन्त करण प्रबोध ग्रथमें भी अन्तत चिताका ही कोई प्रकरण चल रहा है विवेकधैर्याश्रयमें भी निरतर इस चिताका ही प्रकरण चल रहा है जो बात मैंने कल तुम्हें समझानेका प्रयास किया था कि जो टिपिकल टीनएजकी प्रोब्लम कि डायलेमा होता है क्या करें और क्या ना करें? मेरा क्या होगा कि नहीं होगा? क्योकि टीनएजमें यह डायलेमा प्रत्येकको फेस करना ही पडता है हमें निश्चय नहीं होता कि हमे क्या बनना है? मुझे क्या करना है? यह तीन ग्रथ इस कारण किशोरबोधरूप ग्रथ हैं यह किस रीतिसे गूथे गये हैं एक सिस्टमरूपमे नवरत्न सूत्र हैं अन्त करणप्रबोध इसका उदाहरण है नवरत्नमे जो कुछ सूत्रात्मक आज्ञायें देनेमे आई हैं उसका विस्तृत भाष्य विवेकधैर्याश्रयमे किया गया है इन किशोरबोधके तीन ग्रथोंकी आन्तरिक सगति हमे सबसे पहले समझनी लेनी चाहियें

## बालकके स्वस्थ मानसिक विकासका सोपान १विश्वास फिर २आत्मनिर्भरता और उसके बादमे ३आरम्भ

उसके बाद कल बालकके स्वस्थ मानसिक विकासमें किस रीतिसे उत्तरोत्तर विकास होता है, उसकेलिये ऐरिक्सन द्वारा वर्णित गुणधर्ममें एक महत्वपूर्ण मुद्दा मैं कहना भूल गया अब सच्ची बात कहू कि मैं पुरुषोत्तम नहीं हू अतएव मुझे लगा कि आज फिर कहीं भूल ना जाऊ इसलिये आज सब लिखकर लाया हू पुरुषोत्तम ना होनेके कारण कल अपूर्णता रह गई थी उसकेलिये एक बार थोडासा सक्षेपमें फिरसे देख लेते हैं इसमें थोडा समय लगेगा परन्तु लाचार हू क्योंकि कल छूट गया था ऐरिक्सनने जो बात बताई थी उसमेंसे कल एक बहुत मुख्य गुण कहना भूल गया था समयके कारण सबसे पहले था विश्वास या अविश्वास, उसके बारेमें कल तुम्हें अच्छी तरहसे समझाया था कि यमुनाष्टकमें अपनी माके साथ पहचान कराकर महाप्रभुजीने हमें जगतमे जीनेकेलिये जो कुछ अविश्वासका फेक्टर है वह सब दूर कर दिया है **यमोऽपि भगिनी सुतान् कथमुहन्ति दुष्टानपि प्रियो भवति सेवनात् तव हरे. यथा गोपिका.. तवाष्टकम् इद मुदा पठति सूरसूते सदा समस्तदुरितक्षयो भवति वै मुकुन्दे रति तया सकल सिद्धियो मुररिपुश्च सन्तुष्यति** (यमुनाष्टकम् ६-९) यह वचन, विश्वासके उद्बोधन द्वारा अविश्वासकी हमारी कमजोरीको दूर करनेके लिये है बालबोधमें भी फिरसे आप स्वयको पहचानना बताते है ऑब्जेक्टिवली उसके लिये कोई ऐसा स्वरूप दिखाया छोटा बच्चा जैसे ऑब्सर्व कर सकता है वैसे इसके बाद ऐरिक्सनने एक बहुत सुदर बात बताई है, जब बच्चेमें विश्वास पैदा हो जाता है तब विश्वासके बाद आत्मनिर्भरता प्राप्त करनेके लिये आगे बढता है आत्मनिर्भरताका अर्थ तुम समझो जैसे हरेक घरमें, हरेक परिवारने यह बात ऑब्सर्व करी होगी कि जन्मनेके बाद बच्चा सबसे पहली वस्तुके तौरपर अपनी माको पहचानने का प्रयास

करता है और वैसा विश्वास प्राप्त करनेके बाद दूसरा स्टेप आत्मनिर्भरताका कहा गया था अतएव बच्चा अपनी गरदन ऊची करके देखनेका प्रयास करता है उलटा होकर पलटनेका अभ्यास करता है, जब इसे पलटना आ जाता है तो फिर चलनेका, घिसटनेका अभ्यास करेगा, हरेक बातमें यह अपनी आत्मनिर्भरताका प्रयास और उपाय करेगा चलनेमें भी यह एकदम चल नहीं सकता लेकिन घुटनोंपर चलेगा और फिर किसी वस्तूका सहारा लेकर खडे होनेका प्रयास करेगा जो बात एक बच्चा अपने प्रयासपूर्वक निरतर डेवलप् करता है वह है उसकी आत्मनिर्भरता बोलनेकी प्रकिया भी बच्चा आत्मनिर्भरताके रूपमें ही प्रकट करता है तुम जैसे बोलते हो वैसा नहीं बोल सकता लेकिन आत्मनिर्भरताका प्रयास तोतला बोलकर अगड बगड शब्दोमें बोलकर बच्चा निरतर अपनी आत्मनिर्भरताका प्रयास करता है

## आत्मनिर्भरताका प्रयास सफल न होनेपर लज्जा और अनिश्चय

कल हमने इतना तो देख ही लिया था कि जो ऐरिक्सनने कहा कि जब कोई बच्चा विश्वास प्राप्त न कर सके तब आत्मनिर्भर भी नहीं हो सकता मैंने कल तुम्हें कहा था कि जिस बच्चेमें आत्मनिर्भरता नहीं होती वह बच्चा कहीं न कहीं लज्जा अथवा अनिश्चयकी स्थितिमें जीता होता है कैसे? उदाहरणके तौरपर एक बात समझो कोई बालक फिसीकली इतना कमजोर है कि शारीरिक दृष्टिसे यह गरदन नहीं उठा सकता अथवा पैरोंसे चल नहीं सकता, घुटनोंसे भी नहीं चल सकता अथवा बोल भी नहीं सकता तब इसमें आत्मनिर्भरता प्रकट नहीं होती किसी भी प्रकारकी शारीरिक या मानसिक खराबीके कारण कोई बच्चा आत्मनिर्भरता प्राप्त नहीं कर सकता तब यह किसी प्रकारकी लज्जा या किसी प्रकारका अनिश्चय अनुभव करता है सब तो ऐसे कर रहे हैं मैं ऐसा

क्यों नहीं कर सकता! स्वाभाविक रीतिसे बच्चेको लज्जा आ जाती है और स्वाभाविक रीतिसे जगतको देखनेकी इसकी दृष्टिमें भी अनिश्चय हो जाता है जिस बच्चेमे आत्मनिर्भरता नहीं खिलती वह बालक कोई भी शारीरिक मानसिक खराबी कि गलत ढगसे पनपनेके कारण ऐसी तकलीफ पाता है इस कारण लज्जा और अनिश्चय आत्मनिर्भरताके विपरीत है

मेरी बडी लडकी चि दिवाके दूसरे बाबाको बोलनेमें कोई तकलीफ है वह हमारे यहा आया घटी बजे और मैं पूछू **कौन?** तो इसे बोलनेमें अपनी आत्मनिर्भरताके प्रयासरूपमें बोलनेमें कुछ तकलीफ थी तो भी जब भी घटी बजे तब जोरसे बोले **तुम तौन?** मैंन दो तीन बार सूना कि तूम तौन? तुम तौन? करता है अतएव मैंने भी इसे चिढानेके लिये पूछा **तुम तौन?** तो इसने मुझसे पूछ ही लिया **तुम कोई बत्ते हो?** अब मूझे लज्जा आ गई मैंने कहा **यह तो लफडा हो गया** यह बोल नहीं सकता इसका इसे भान है लेकिन इसे आत्मनिश्चय ह कि मुझे बोलना है और दूसरेको ऐसी रीतिसे नहीं बोलना कोई ऐसी चू चा करे तो फिर पूछ लेनेकी हिम्मत भी है **तुम क्या बच्चे हो?** अतएव इसे पता है कि मैं बच्चा हू इसलिये बोल नहीं सकता तो कोई बात नहीं कभी बोल लूगा लेकिन तुम बडे होकर इस प्रकार कैसे बोल रहे हो? समझमें आई कि बच्चेमें आत्मविश्वासकी क्वालिटी कैसी होती है मैं तो उसे लज्जित करना चाह रहा था लेकिन मेरे दोहित्रने मुझे ही लज्जित कर दिया! इसका तात्पर्य यह गॉरन्टी कि इसमें आत्मविश्वास भरा पडा है इसे शब्दका उच्चारण ठीकसे पता है तूम कौन? इसका बिल्कूल निश्चय है निश्चय पक्का है कि जब भी घटी बजे तब तूम कौन? पूछना चाहिये यह खुद तूम कौन? बोल नहीं सकता, बच्चा होनेके कारण, लेकिन इसका इसे भली भाँति ज्ञान है अतएव यह अपने नानाको कह देनेकी हिम्मत भी रखता है कि तूम कोई बच्चे हो? मैंने कहा अब मैं समझ गया

## पुष्टिमार्गीयोंकी लज्जा और अनिश्चयको श्रीमहाप्रभुजीने सिद्धान्तमुक्तावलीमे दूर किया

यह दूसरी क्वालिटी है और यह क्वालिटी महाप्रभुजीने हमें सिद्धान्तमुक्तावली ग्रथमें दी है **तत्सिद्धयै तनुवित्तजा** तुम्हारा तन, तुम्हारा वित्त, तुम्हारा मन भी जैसे जैसे सरल प्रकारसे प्रयोगमें लाया जा सके वैसे वैसे, चाहे वह तोतली बोली ही क्यो न हो, जैसी हो वैसी निवेदन करते जाओ तुम तौन करने लगो और काम चालू हो गया कोई तुम्हें ऐसे लज्जित करना चाहता हो कि तुम अपरस नहीं पालते तो तुम्हारी सेवा पुष्टिप्रभु किस प्रकार अगीकार करेंगे? तुम्हारे पास इतने पैसे कहा है, तुम तुम्हारे ठाकुरजीको मठडी भोग धर सको, तो फिर तुम भी उनसे यह पूछलो कि तुम क्या बत्ते हो? फिर सब बात सुधर जायेगी और अपनेको भी समझमे आ जायेगी कि यह समझ गया कि मैं गोवा हू बालकको बालकतया मूर्ख होनकी वास्तविकता रियलाईज् करा देनी चाहिये कि तुम तोई बत्ते हो? अतएव ऐसे क्यो बोल रहे हो? फिर तुम्हारा लज्जाका भाव, अनिश्चयका भाव दूर हो जायेगा उसे सिद्धान्तमुक्तावली ग्रथमें श्रीमहाप्रभुजीने कैसे दूर किया है **तत्सिद्धयै तनुवित्तजा. . तत ससार दु खस्य निवृत्ति ब्रह्मबोधनम्** महाप्रभुजी यह नहीं कहते कि तुम तुम्हारे घरमें जिसकी सेवा करते हो वह परब्रह्म पुरुषोत्तम नहीं है यह तो हमारे ही घरमें विराज सकते हैं कि मेरे वशज केवल गोस्वामी बालकोंकी मोनोपोली है महाप्रभुजी जब **पर ब्रह्मतु कृष्णोहि** कह रहे है तो प्रत्यक सेवाकरने वालेकेलिये कह रहे है

## पुष्टिमार्गीयका स्वस्थ विकास (आत्मस्वरूपबोध) केलिये जरूरी ४उद्योग, ५आत्मनिर्धार, ६धनिष्ठता, ७सृजनशीलताका षोडशग्रथोमे विचार

(४) उद्योग

अब उसके बाद जो बात आई वह थी उद्योग या उद्यमकी उद्यम अर्थात् प्रयास करना जिस बातको हम शुरु ही नहीं करते उसकेलिये अपराधबोधसे ग्रस्त हो जाते है आज ध्यानसे समझो पुष्टिमार्गकी कोई समस्या है, अथवा हम पुष्टिमार्गीयोकी जो कुछ समस्या है वह है आरम्भ करनेकी जैसे गाडीको चलानेकेलिये पहले गियरमे डालना पडता है तो उस पहले गियरको ही ताड डाला है इसके दातोको ठीक तरहसे नहीं फसायेंगे तो गाड़ी आरम्भ ही नहीं हो सकेगी पहले गियरमे आयेगी तबही तो टौप् गियरमें जाकर भागेगी

कोई एक वैष्णव होगा पाखडी मैं ना नहीं कहता क्योंकि कोई भी मनुष्य पाखडी हो सकता है मैं भी पाखडी हो सकता हू पाखडी होना यह कोई बडी उपलब्धिकी बात नहीं है यह तो सहज बात है सास लेते हैं उस प्रकार मनुष्य भी पाखडी हो सकता है तो एक वैष्णवको ऐसी आदत थी कि प्रसग-अप्रसग, आवश्यक-अनावश्यक निरतर भगवद्चर्चा करता रहे तो कोई गोस्वामी बालक इसके घर पधारे इसने भगवद्चर्चा छेडी गोस्वामी बालकने तुरन्त यह मान लिया कि यह मनुष्य महान पाखडी है व्यर्थमें भगवद्चर्चा करता है अब पाखडीका पाखड निवृत्त कैसे करना तो किसीने कोई एक गेम इसके सामने रख दिया इसकी भगवदचर्चा छुडाकर अपने साथ खेलमें शामिल कर लिया अब एक बात समझो कि भगवदचर्चा आरम्भ करनेका जो माद्दा था वह कदाचित पाखडसे होगा लेकिन तोड तो दिया ही कि नहीं आज हम गोस्वामी बालक इस बारेमें गौरव समझते हैं कि फलाने भाईको भगवदचर्चासे छुडाकर खेलमें शामिल हमनें कर दिया हम इसमें गर्व ले रहे हैं और महाप्रभुजीके सूरदासजीकी वार्ता पढो तो तुम्हें ध्यान आयेगा कि जो ऐसी चर्चा कर रहे थे, उन्हें महाप्रभुजीने भगवदचर्चा करते हुवे किया कि नहीं? जो चौपडका गेम खेल रहे थे उन्हें, सूरदासजीने भगवत्सेवा करते हुवे किया कि नहीं? किया इसलिये

कि यह एक दूसरे प्रकारका आरम्भ था हम वैष्णवोंसे एक दूसरे प्रकारका अभिगम रखते है कोई कुछ करना चाहता है तो उसे तोड डालो प्रवचन करता हो तो उसे कहो कि यह पाखडी है, भगवदीय बनना चाहता है, पभ बनना चाहता है घरमें सेवा करता है तो ऐसे कह दो कि तू क्या अपने आपको दामोदरदासजी सभलवाले समझता है? दामोदरदासजी हरसानीने भी तो सेवा नहीं करी तो भाई तू सेवा क्यो करने लगा? बात हो गई न कि किसीको आरम्भ ही मत करने दो आरम्भ करेगा तो ही तो आखिर तक पहुचेगा! आरम्भमें ही तोड दो कुऐंके जल बिना सेवा हो ही नहीं सकती, कुऐंके जल बिना सेवा करो तो ऐसे ठाकुरजी पुरुषोत्तम ही नहीं कहलाते! तो अब आरम्भ करोगे ही कैसे? तुम आरम्भ नहीं करोगे अतएव सारी जिन्दगी तुम्हे अपराधबोधसे ग्रस्त रहना पडेगा **भगवद्सेवार्थं तत्सृष्टि नान्यथा भवेत्** यह सृष्टि तो भगवद्रूपसेवाके लिये है और मैं तो सेवा कर नहीं सकता क्योंकि कूआ तो खूदवा नहीं सकता कूआ खोदें तो भी इसमें गटरका पानी ही मिलता है अरे गटरका पानी क्या वैष्णवोंके घरमें ही फूटता है, हमारे व्यापारिक मदिरोंमे नहीं फूटते क्या? हमारे मदिरोंम भी गटर फूटते है गटर सब जगहोपर फूटते है कहा नहीं फूटते और उस गटरके पानीसे झारी भरते हैं लेकिन सेवा करते हुवे हम कभी पीनेके जलकी तरह झारीके जलका प्रयोग नहीं करते नलमे कमसे कम गटरका पानी तो नहीं फूटता लेकिन आरम्भ ही मत करने दो पहले गीयरम गाडी जाये ही नहीं कोई न कोई खराबी बता दो तुम्हारे घरमे बिराजते ठाकुरजी पुरुषोत्तम नहीं हैं इसलिये जो तुम सेवा कर रहे हो वह पुरुषोत्तमकी सेवा ही नहीं है पहले ही गीयरमें लफडा हो गया ना! अब किस प्रकार करोगे यह महाप्रभुजी तुम्हें आश्वासन देते हैं **तथा निवेदने चिन्ता त्याज्या श्रीपुरुषोत्तमे। विनियोगऽपि सा त्याज्या समर्थोहि हरि स्वत ।।** (नवरत्न ५)

हम लोगोंको सावधानीके तौर पर ऐसा कहना चाहते हैं कि पुरुषोत्तम तुम्हारे यहा हो तो चिंता त्याज्या! तुम्हारे यहा तो पुरुषोत्तम ही नहीं हैं तो फिर तम्हारे अर्थात् वैष्णवोंके यहा कौन है? पुतला हैं, पत्थरका, धातुका? एक बार बोलकर तो बताओ ना यह बात अब ऐसे बोल भी नहीं सकते कि तुम्हारे यहा क्या है कहते हैं ना, ना, वैष्णवोके घरमें पुरुषोत्तम नहीं बिराजते गुरुस्वरूप ठाकुरजी बिराजते है यह तो बहुत आनन्दकी बात हो गई क्योंकि सब वैष्णवोको ऐसा समझानेमे आता है कि गुरुको साक्षात् पुरुषोत्तम मानना चाहिये तो ऐ=बी, बी=सी, तो ऐ=सी हो गया ना फिर अर्थात् ऐ=तुम्हारे घर बिराजते स्वरूप, बी=पुरुषोत्तमरूप गुरु, और सी=साक्षात् पुरुषोत्तम तो बात समझमें आई कि नहीं? वैष्णवोको कह देनेमे आता हैं कि तुम्हारे यहा तो पुरुषोत्तम नहीं हैं पुतला कह सकते नहीं क्योंकि ऐसी बात कहनेके लिये हिम्मत चाहिये समझे! जैसे कबीरमें हिम्मत थी अतएव उसने कह दिया **पाथर पूजे हरि मिले तो हो पूजों पहार। ताते तो चाकी भली जो पीस खाये ससार।।**

अर्थात् पत्थर पूजनेसे अगर हरि मिलते हो तो मैं पहाडको जाकर पूजूगा लेकिन मैं तो यह समझता हूं कि युटिलिटिवाईस् अर्थात् उपयोगिताके सिद्धातकी तुलनामें पत्थरके बजाय गेहू पीसनेकी जो चक्की हैं वह अच्छी कुछ काम तो आती हैं यह पत्थरकी मूर्ति तो कुछ काम आती नहीं यह सिद्धान्त हो तो फिर समझमें आ जाता है कि पुरुषोत्तम घरमे नहीं हैं ऐसे कह नहीं सकते क्योंकि यह तो अपने ठाकुरजीके ऊपर भी लागू पडेगा अतएव एक बीचका मार्ग ढूढ निकाला गया कि वैष्णवोके घरमें पुरुषोत्तम नहीं बिराजते परन्तु गुरुभावसे ठाकुरजी बिराजते हैं मैं तो कहता हू कि वैष्णवों ! इस बातको ठीकसे पकड तो कि हा सच्ची बात कही परन्तु गुरु पुरुषोत्तम होता है कि नहीं! अतएव एक बात समझो, ग्रथोंको पढोगे तो तुम्हे हरेक बात समझमें आ जायेगी नहीं तो तुम्हें उल्टा ही

पढा दिया जायेगा और तुम इसे रट लोगे ग्रथ पढो. श्रीमहाप्रभुजीने क्या आज्ञा करी है उसे पढो हरेक वस्तु हाथमें धरी वस्तुके समान स्पष्ट हो जायेगी और जो गुरुभाव स्वीकार किया तो फिसल जाओगे क्योंकि हम गोबालकोंमे हम पुरुषोत्तम नहीं हैं यह माननेकी भी हिम्मत नहीं है स्वयको तो फिर पुरुषोत्तमके तौर पर खपाना है फिर चिताकी बात ही कहा रही?

बालकोको अपने घर पधरावनीका लालच देकर बुलाओ फिर पूछो कि आप हमारे यहा तो दूधघर तो आरोगोगे कि नहीं? आरोगानेके बाद धीरेसे उस बालकसे पूछो कि आप केवल दूधघर ही आरोगते हो तो आपको पुरुषोत्तम मानना कि नहीं? अगर नहीं, तो ऐसा कह सकते हो कि सखडी आरोगे वह ही पुरुषोत्तम और दूधघर आरोगे तो वह पुरुषोत्तम नहीं तो इनसे विनतीं करो कि कृपानाथ! आप सखडी आरोगो, आप तो साक्षात् पुरुषोत्तम हो कर्तुम् अकर्तुम् अन्यथा कर्तुम् समर्थ हो अरे आपको क्या बधन आ गया हमारे घरमें सखडी आरोगनेमें फिर तो सारी बात लाईन ऊपर आ जायेगी क्योंकि स्वय सखडी आरोगे तो स्वयकी हवेलीयोंमे बिराजते ठाकुरजीको सखडी आरोगवानेकी छूट वैष्णवोंको देनी पडेगी अर्थात् भीतर घुसने ही न दे केवल झाकी कराकर ही तुम्हें लतचाते रहते हैं उसका परदा खुल जायेगा

ठीक ट्रेकपर तुम्हें यात्रा आरम्भ ही नहीं करने देते इसलिये दिक्कत आती है आरम्भके बाद उद्यमका जो पहलू हैं वह तुम्हारेमें भरी हुई हरेक प्रकारकी लघुग्रथिताको दूर कर देगा

(५) <u>आत्मनिर्धार</u>

तुम्हारेमें आत्मनिर्धारका मतलब कि तुम कौन हो? जिस प्रकारका तुम उद्यम करोगे उस रूपमें तुम अपने व्यक्तित्वको पहचानोगे गावमें तुम्हारी कैसी पहचान है गरज उसकी नहीं है श्रीमहाप्रभुजीने पुष्टिप्रवाहमर्यादा ग्रथमें स्पष्ट आज्ञा करी है **लौकिकत्व वैदिकत्व कापट्यात् तेषु नान्यथा वैष्णवत्वहि सहजम् ततो अन्यत्र विपर्यय** (पुष्टिप्रवाहमर्यादा २०)

अतएव गावमें तुम कदाचित वैष्णवके तौर पर न पहचाने जाते हो तो इसमें कोई तकलीफ नहीं है कोई जरूरत नहीं है कि हम अपने गावमे अपनी पहचान वैष्णवके तौरपर ही करवावें लौकिक वैदिक हैं ना उनके द्वारा अपनी पहचान बनाओ लेकिन तुम तुम्हारी पहचान वैष्णवके तौरपर करवा रहे हो या नहीं यह मूख्य मुद्दा है **वैष्णवत्व हि सहज** तुम जो सास ले रहे हो ये विष्णुकी सास ले रहे हो कि नहीं? विष्णुकी व्यापकताका सांस ले रहे हो कि नहीं? **को ह्येव अन्यात् क प्राण्यात् यदेष आकाश आनन्दो न स्यात्** ऐसे विष्णुकी व्यापकतामे तुम सास ले रहे हो कि नहीं? ले रहे हो तो तुम सहज वैष्णव हो, हो और हो, ऐसा तुम्हें आत्मनिर्धार होगा यह आत्मनिर्धार महाप्रभूजीने पुष्टिप्रवाहमर्यादा ग्रथमे हमको उपदेशित किया है कल मैंने जो तुमको बताया था कि जब तुम्हारा आत्मनिर्धार होगा तब तुम्हें तुम्हारा आत्मीय कौन है उसे पहचाननेमें देर नहीं लगेगी कल मैंने एक श्लोक सुनाया था तुम्हे याद हो तो **मृगा. मृगै सगम् अनुव्रजन्ति गावोश्च गोभि** ऐसे तुम तुम्हारी पहचानको पहचानोगे तो तुम्हें अपने आत्मीयोंको पहचाननेमें जरा भी कष्ट नहीं होगा लेकिन अगर तुम अपने आपको ही नहीं पहचान सके तो तुम्हारा आत्मीय कौन है उसे कैसे पहचान पाओगे? फिर **निवेदनन्तु स्मर्तव्य सर्वथा तादृशी जने** जब तुम अपने आपको ही नहीं पहचान पा रहे तो कौन तादृशी भगवदीय है, उन्हें कैसे पहचान पाओगे?

(६) घनिष्ठता

पुष्टिप्रभुके साथ तुम्हारी घनिष्ठता करवानेकेलिये सिद्धान्तरहस्य कृष्णाश्रय और चतुश्लोकी जैसे ग्रथ हैं वैसे ही पुष्टिभक्तोंके साथ घनिष्ठता करनेकेलिये भक्तिवर्धिनी और सन्यास निर्णय ग्रथ हैं उस कारण उन ग्रथोंमें यह घनिष्ठता दिखानेमें आई है उसे देखो **बाधसम्भावनायन्तु नैकान्ते वास इष्यते हरिस्तु सर्वतो रक्षा करिष्यति न संशय** (भक्तिवर्धिनी) तुम्हारी घनिष्ठता करानेकेलिये सन्यासनिर्णयका उपदेश इस बातके ऊपर केन्द्रित हुवा है जब तलक भक्तिकी हन्ड्रेड टेन् पर्सेन्ट् तुम्हें गारण्टी न हो जाय तब तलक व्यक्तिको व्यसन दशामें पहुचनेसे पहले व्यर्थमें एकान्तसेवनकी, सन्यासकी, त्यागकी या वैराग्यकी गलत जल्दबाजी नहीं करनी चाहिये हेस्ट् इज् वेस्ट्! यह बात ध्यानसे समझ लो उतावला सो बाबरा, धीरा सो गभीर इस बातका सेन्ट्रल आइडिया महाप्रभुजीने समझाया है, भक्तिवर्धिनी और सन्यासनिर्णयमें घनिष्ठता और उसका विपरीत एकलता मनुष्यका अकेलापन, मुझे किसीके साथ क्या लेना देना है?

हमारे जिस भाईने मुझे पत्र लिखा है उसमें उसने मुझे ये ही लिखा है कितने चतुर भाई ह अपने पुष्टिमार्गमें पत्र आया है दिल्ली से, हालाकि भेजनेवाला मुबईसे मेरा पडोसी ही है मुझे वास्तवमे किसी समय विश्वास ही उड जाता है कि मैं बेवकूफ हू कि भेजने वाला? मैं क्यों नहीं इतना समझ सकता कि दिल्लीसे आनेवाला पत्र मेरे पडोसीका कैसे हो सकता है? पडोसीके नामसे दिल्लीसे पत्र भिजवा दिया **तुम कौन हो सिद्धान्त कहनेवाले? तुम्हे क्या अधिकार है सिद्धान्त कहनेका? तुम तुम्हारी रीतिसे एकान्तमे सेवा करो दूसरोंको सिद्धान्त कहनेकी गलत जल्दबाजी मत करो. तुम मानते हो कि नहीं कि यह सृष्टि भगवानने बनाई है. तो जिन्हे तम वचक या ठग कह रहे हो ये भी भगवानके ही बनाये हुये हैं. और ऐसे भगवानके द्वारा बनाये हुओको तुम ठग या वचककी जब तुम**

गाली दे रहे हो, तब तुम भगवानकी सृष्टिकी निंदा कर रहे हो, और जब तुम भगवानकी सृष्टिकी निंदा कर रहे हो तब तुम भगवानकी निंदा कर रह हो वाह भाई वाह! लेकिन भेजनेवाला, इसने मेरे पड़ोसीको बना दिया दिल्लीसे जहासे पत्र आया है उसमें भेजने वालेका पता होता तो मैं लिखता कि भाई मैं भी तो भगवानकी सृष्टिका हू कि नहीं, मेरी निंदा तुम क्यों कर रहे हो? तो तुम भी तो भगवानकी सृष्टिकी निंदा कर रहे हो कि नहीं? और जब तुम खुद भगवानकी सृष्टिकी निंदा कर रहे हो तो मुझे ना क्यों कह रहे हो? मेहरबानी करके तुम पहले बंद करो, फिर मैं भी बंद कर दूगा तुम बंद करते नहीं और मुझे कह रहे हो! क्योंकि हमें आज पुष्टिमार्गमें जो कोई आडे आ रहा है वह एक ही बात है लिख लेना सब, तुम्हारे घरमें जैसे सूक्ति टागते हैं ऐसे ही एक सूक्ति टाग लो कि पुष्टिमार्गीओंको सिद्धान्तके सिवाय दूसरी कोई चीज अब आडे नहीं आती जो कुछ आडे आ रहे हैं वह हैं खाली महाप्रभुजीके सिद्धान्त कदम कदमपर पुष्टिमार्गमे कोई न कोई सिद्धान्त आडे आ जाता है स्पीडब्रेकरकी तरह परिस्थिति हमारी ऐसी हो गई है किस कारण? क्योंकि हम लोग एकलताके पोकेटस् तैयार करना चाहते है घनिष्टाका माद्दा हमारे भीतर खत्म हो गया है

(७) सृजनशीलता

अब इसके बाद आती है सृजनशीलताकी बात सृजनशीलताका विपरीत ऐरिक्सनने कुंठा = फरस्ट्रेशन दिया है जो मनुष्य सृजन नहीं कर सकता वह फरस्ट्रेट हो जाता है एक बात ध्यानसे समझो, लगभग मैं अगर भूलता न होउ तो बीस या बाईस साल पहले मेरी आखमें कुछ समस्या हो गई अतएव आखके एक बडे डाक्टर अशोक श्राफके पास आखे दिखाने गया उसने मेरी दाईं आखको देखकर कहा ऐसे कहा तुमने आखका प्रयोग ही नहीं किया, इसलिये यह आख देखती ही नहीं, परन्तु आखमे कोई समस्या नहीं है. अब आज तक इस सूत्रका भाष्य मैं नहीं कर पाया कि किस कारण मैंने

आखका प्रयोग नहीं किया? लेकिन वास्तविकता यह है कि प्रभुने मुझे एक ही आख दी है, शुद्धाद्वैत देखनेकेलिये, दो आख नहीं दी अतएव इस आखसे मुझे दिखाई नहीं देता यह बात ठीक ही है डाक्टरने इसका कारण यह बताया कि तुमने इस आखका प्रयोग ही नहीं किया इस कारण पहली आखने फरस्ट्रेटेड होकर देखना ही बद कर दिया तब जो कोई सामने आता है तो आने दो ना चोर बनो कि मोर यहा सब चलता है तो जब हम सृजन नहीं कर सकते तब अपनेमें फरसट्रेशन आनी स्वाभाविक है एक साधारण बात समझो, दुकानमें बैठा मनुष्य जब अपना माल नहीं बेच पाता तो वह फरस्ट्रेटेड हो जाता है एक आर्टिस्ट जब चित्र नहीं बना सकता किसी भी कारणसे तो उसके भीतर फरस्ट्रेशन आ जाती है तुम सबने सुना ही होगा कि आजकल पिछले पाच दस सालोंमें इस फिनोमिनाके ऊपर डाक्टर लोग बहुत बडी चर्चा कर रहे हैं कि जब स्त्रीयोका मासिकधर्म बद होता है तब मेनोपोज् आता है मूलत क्या है यह? बायोलोजिकल फरस्ट्रेशन है यह मेनोपोजका मूल आतरिक रहस्य है यह बायोलोजिकल फिनोमिना किसी समय मन तलक पहुच गया तो चिन्ताका विकृत रूप ले लेता है, बीमार हो जाती हैं स्त्रिया जिनका मन तलक नहीं पहूचता उनको कोई अन्तर नहीं पडता जब भी हम सृजन नहीं कर सकते तब फरस्ट्रेशन आनी अत्यत स्वाभाविक बात है जो गाडी चलनेके लिये है वह चल नहीं सकती अतएव कहीं न कहीं फरस्ट्रेट हो जाती है, धूआ छोडती है गरम हो जाती है, पचास मुसीबते खडी हो जाती हैं फरस्ट्रेशनके कारण यह प्रिन्सिपल् मेकेनिकली भी इतना ही सच्चा है, बायोलोजिकली भी सच्चा है और सायकोलोजिकली भी सच्चा है

उसी प्रकार अपने भक्तिमार्गमे भी ऐसा ही सच है जब हम अपने पुष्टिप्रभुको या अपनी विषयासक्तिको अपनी भगवदासक्तिके सृजन करनेमे सक्षम नहीं होते, किसी भी

कारणसे, तब हम पहले सर्वोद्धारक परमात्माको अपना निज उद्धारक नहीं बना सकते तो उद्धारकके तौरपर इसका सृजन भी नहीं कर सकते अतएव हमारा मन फरस्ट्रेट हो जाता है कि अब हम क्या करे? इस प्रकार फरस्ट्रेशनमें हमारा भक्तिमार्गके प्रति जो अभिगम है वह बेकार हो जाता है जैसे हाथीके पैरके नीचे कोई खरगोश आ जाये इस प्रकारकी दुर्गति अथवा तो बसके नीचे किसी मनुष्यका सिर आ जाये इस प्रकारकी आज अपनी स्थिति हो गई है क्योंकि हमारा एक सर्वव्यापी परमात्मा जो सर्वत्र उपलब्ध हैं उसे भी हम अपना नहीं बना सके

<u>चिताकी अप्रासगिकता भजनीय या आश्रयणीय श्रीकृष्णके स्वरूपविचारके आधारपर</u>

कृष्ण अर्थात् कौन? कृष्ण अर्थात् निरवधि-सच्चिदानद तो निरवधि - सच्चिदानदका अर्थ तो बहुत अच्छा लेकिन इसका स्वरूप समझो निरवधि अर्थात् जिसकी कोई अवधि नहीं हो कोई अवधि नहीं अर्थात् खाली मदिरमे ही नहीं रहता, तीर्थमें ही नहीं रहता, किसी प भ के घरमे बध कर नहीं रहता, न ही वह किसी पू पा महाराजश्रीकी हवेलीमे भी बध कर रहता जिसकी सत्ता प्रत्येक स्थानपर अवेलेवल हो वह निरवधि सत् तो निरवधि चित् अर्थात् क्या? वह यह जो तुम्हारी बातको सुनने तुम्हारे भावोंको जाननेकेलिये किसी एक स्थानपर ही बधा हुवा नहीं रहता यह हरेक कोनेमें तुम्हारी बातको सुन सकता है, जहा तुम ऐसा कहना चाहते हो वहा यह सुन सकता है जो तुम विचारो, जो कुछ इसका चितन, ध्यान, कीर्तन, मनन करो वहा भगवान प्रकट कि अप्रकट बिराजते ही हैं **मदभक्ता. यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद** भगवान कहते हैं कि तुम मेरा गान शुरु करो तो सही मैं तुम्हारी बगलमे खडा हू क्योंकि इसका जो चित् या चैतन्य है वह निरवधि है अतएव निरवधि-आनन्द भी किसी ठिकाने केसरके हिंडोलेमें बधा हुवा नहीं और न ही छप्पनभोगके कुडाओंमे भरा हुवा भाईसाहब

तुम्हारे घरमें छोलोंमें भी इसका आनन्द प्रकट हो सकता है तुम्हारे घरके कोनेमें भी इसका इतना निरवधि आनन्द प्रकट हो सकता है अगर ये इस प्रकार प्रकट नहीं हो सकता तो फिर श्रीकृष्ण निरवधि-सच्चिदानद नहीं है और अगर श्रीकृष्ण निरवधि-सच्चिदानद नहीं है तो **कृष्णसेवा कदापि न कार्या** ऐसा श्रीमहाप्रभुजी कहते **कृष्णसेवा सदा कार्या** अगर महाप्रभुजी कह रहे हैं तो इसके पीछेका मुख्य हेतु महाप्रभूजीका यह ही है कि श्रीकृष्ण निरवधि सच्चिानद है हरेक जगहपर है, हरेकके साथ इन्टिमेट कम्यूनिकेशनमें इन्वोल्व हुवे हुये है और हरेकको अपनी पुष्टिका आनन्द प्रदान करके हरेकसे भक्तिका आनन्द लेनेमें समर्थ स्वरूप है इस अर्थमें निरवधि सच्चिदानद होनेके कारण श्रीकृष्णका सृजन करना है यह निरवधि है उस कारण अपने घरकी अवधिको यह स्वीकार सकता है

हमारी भक्ति अवधि या मर्यादासे उद्‌भवित नहीं है बल्कि अवधि स्वय पुष्टिभक्तिसे गढी अवधि है अवधि तो वह ही बना सकता है जो सर्वशक्ति कि निरवधि हो ध्यानसे समझो हमारी विषयासक्ति निरवधि है जैसे परमात्मा निरवधि है एक ऐसा दोहा है **मन मरे काया मरे, सब कछ मरि मरी जाय आशा तृष्णा न मरे**. तो यह हमारी विषयासक्ति निरवधि है किसी एक विषयसे सतोष पा जाये ऐसी नहीं है नित्य नया विषय चाहिये फिल्मी गीतकी तरह तीन महीनेसे अधिक कोई विषय चले ही नहीं, चौथे महीने नया गीत चाहिये ही कुछ भी अपनेको परमानेन्ट नहीं चाहिये, रोज नई नई मॉडल चाहिये मास्तीका, रोज नया नया टीवीका मॉडल चाहिये रोज नये नये कपडे चाहियें, नये नये खानेके आइटम, रोज नई नई जगह घूमनेको चाहिये निरवधि हमारी आसक्ति है विषयोमे उस निरवधि आसक्तिको प्रभू पुष्टिसे सावधि बनाते हैं अपने स्वरूपसे सावधि नहीं बनाते परन्तु अपनी पुष्टिसे सावधि बनाते हैं ऐसा निरवधि सच्चिदानद जब तुम्हारे यहा अवेलेबल है उसे

तुम तुम्हारी पुष्टिभक्तिसे सावधि बना सकते हो अतएव दूसरे किसीके लिये तुम कोई बधनकारी नहीं हो जाते एक सामान्य उदाहरणसे बात समझो जो हवा चारों ओर निरवधि प्रसरित है, इस भूतलपर, जिस वक्त तुम कोई गहरा सास लेते हो, वह तुम्हारे फेफडोंमें जाकर सावधि बन जाती है तुम सास लोगे तो वह निरवधि बाहर फैली हुई वायु तुम्हारे फेफडोंमे जाकर सावधि बनकर आयेगी यह तुम्हारेलिये इस कारण अवेलेबल है क्योंकि वह निरवधि है अब तुम अगर ऐसे कहो कि मेरे फेफडोमें आई है इस कारण अब सब मेरे फेफडोंमे भरी हुई हवाके आधार जीवें या सास लेवे अरे तुम कोई बल्ले हो? बस एक ही सवाल! तुम्हारे फेफडोंमे आकर सावधि हो गई अतएव तुम ऐसे कहा कि तुम्हारे फेफडोंमे से हमें सास लेनी तो फिर तो तुम कोई गोबा ही हो शुद्ध बालक बालक सब ब्रह्म जानिये, कोई दिक्कत नहीं आती, लेकिन कोई भी महाप्रभुजीके गभीर सिद्धान्तोंका जानकार ऐसा उपदेशक नहीं हो सकता

आखिरमें हम गोबालकोको श्रीकृष्ण किस कारण अवेलेबल होते हैं हमारे अपने घरोंमें? निरवधि सच्चिदानद होनेके कारण ही ना अब गो बालकोके घरोंमें निरवधि सच्चिदानद होनेके कारण होते हैं तो तुम्हारे घरमे भी पुरुषोत्तम होने ही चाहिये ना! ना हो तो कुछ न कुछ निरवधि सच्चिदानदमें गडबड है. यह बात अगर तुम जान जाओ तो तुम्हे फरस्ट्रेशन नहीं होगी तुम्हारी सृजनशीलतामें कि पुष्टिमार्गीय प्रभुको घडनेमें तुम्हे किसी प्रकारका फरस्ट्रेशन नहीं होगा तुम तुम्हारे घर, तुम्हारे तन, तुम्हारे धन, तुम्हारे परिजनके साथ एक छोटासा ब्रज तुम्हारे घरमें ऐसे घड सकते हो कि जिस ब्रजके कारण तुम भी ऐसे कह सको **ब्रज व्हालु रे, वैकुण्ठ नहीं आवु त्या नदनो कुवर क्यायी लावु?** अर्थात् तुम्हारेमे सृजनशीलता प्रकट होनी चाहिये जो सृजनशीलता श्रीमहाप्रभुजीने विवेकधैर्याश्रयमें प्रकट करी है विवेकधैर्याश्रय

सारा ग्रथ इस पुष्टिमार्गीयभक्तिको, पुष्टिमार्गीयनिष्ठाको, पुष्टिप्रभुको, पुष्टिभक्तको, पुष्टिभक्तोचित वातावरणको, पुष्टिभक्तोचित घनिष्ठताको किस प्रकारसे प्रोड्यूस करना उसका ही ग्रथ है

**भक्तद्रोहे भक्त्यभावे भक्तैश्चातिक्रमे कृते। अलौकिकमन. सिद्धौ सर्वथा शरण हरि।। एव चित्ते सदा भाव्य वाचा च परिकीर्तयेत्।** (विवेकधैर्याश्रय ११-१३)

इन श्लोकोंके ऊपर ध्यान दो सृजनशीलताका एक समस्त मसाला तुम्हारे भीतर विवेकधैर्याश्रय द्वारा भरनेमें आया है आज हम इस विवेकको भुलाकर, इस धैर्यको भुलाकर, इस आश्रयको भी भूलाकर, ऐसे बन गये हैं कि जिस जगहसे ले चला था राहबर, हम वहीं आये हैं फिर घूमके हमने जहासे पुष्टिमार्गकी यात्रा प्रारम्भ करी थी फिर वहीं लौटकर आ गये और पूछना चाह रहे हैं बताओ अब हम कहा जायें?

एक बहुत मजेदार बात बताऊ तुम्हे, मेरे जब दो तीन प्रवचन हुवे तो उसके बाद एक बहनने मुझे कहा ओहो हो कितने अच्छे तरीकेसे आप समझाते हो. यह सुनके मैं तो फूल ही गया इसने मुझे कहा आप हमें क्यो नहीं समझाने आते? तो मैं उन्हें एक बार समझाने गया इसने भी समझनेके बाद कहा ओहो हो आप कादीवली और पार्लामे ही पुष्टिजीव हैं ऐसे मानते लगते हो. लेकिन अब तो आपको विश्वास आया ना कि हम भी पुष्टिजीव हैं मैंने कहा मुझे तो पहलेसे ही विश्वास था मैं कादीवली या पार्लामे ही बधा हुवा नहीं हू जो लोग आयोजन करते हैं वहा पहुच जाता हू. हा इतनी सावधानी जरूर रखता हू कि हरेक जगह नहीं जाता जहा मुझे समझमें आता है वहा ही जाता हू तो ये बोली भले तो आप हमे भी अपना माना करो मैंने कहा ठीक है अबसे

ऐसे ही करूगा. हुवा क्या कि दस पद्रह दिन बाद मुझे एक फोन आया कि कहीं कोई व्यापारिक बडा मनोरथ हो रहा था, उसमें मेरी आज्ञा लेकर वह उसमें शामिल होना चाहती थी मैंने कहा मैं तो यह समझ रहा था कि आप समझ गयीं वह बोली आप आज्ञा नहीं दो तो किस प्रकार जाऊ? मैंने तो आपको अपना गुरु माना है. डूबे वश कबीरका उपजे पूत कमाल एक तो मैं समझाने जाऊ और फिर मेरी ही आज्ञा मागो, गुनाह तुम करो और साक्षी मुझे बनाओ साक्षिणो भवताखिला मैं घबरा गया मैंने अपने मनमें कहा कि मैं पुरुषोत्तम नहीं हू यह उसकी गडबड है उस समय वास्तवमें बहुत इच्छा हुई काश मैं भी पुरुषोत्तम होता और इसके मनमें कैसा शैतान बैठा है वह समझ गया होता तो ऐसी गडबडमें तो नहीं फसता लेकिन फस जायें अगर कोई हमे कहे कि आप बिना कौन समझावे? तो मेरा मन भी चलायमान हो जाता है कि चलो वहा समझाने लेकिन अगला समझना ही नहीं चाहता तो उसका क्या उपाय?

अतएव ऐसी सब कुछ दिक्कतें तो रहनी ही हैं, जीवनमे भी और पुष्टिमार्गमें भी लेकिन एक बात तो सच्ची है कि हम सब पुष्टिमार्गीय हैं स्वस्थ हो तो भी पुष्टिमार्गीय और बीमार हो तो भी पुष्टिमार्गीय एक दूसरेको अपना मानकर चलेंगे तो कुछ तो सृजन हो सकता है ऐसी मुश्किलें तो जैसे इनमें हैं वैसे ही मेरेमें भी होंगी ही न! मैं कोई ऐसा दावा तो कर नहीं रहा कि मैं तो पूरकस पुष्टिमार्गके हिसाबसे जी रहा हू ऐसी कठिनतायें तो सृजनशीलतामें किसी भी सृजनकी प्रक्रियामें अगर हम इन्वोल्व होते है तो उस समय ऐसी प्रोब्लम आती ही हैं अगर हम काबू पा सके तो हमें फरस्ट्रेशन नहीं होगा उस समय मुझे फरस्ट्रेशन हुवा कि मैं कहा फस गया, लेकिन एक बात समझो कि इस फरस्ट्रेशनके ऊपर काबू पाना चाहिये और फिरसे सृजनशीलतामें जुट जाना चाहिये जो कुछ हम सृजन कर सकते हैं वह करते रहना चाहिये भक्तिका

कमल खिलानेकेलिय भक्तिमार्गाब्जभार्तण्डके आश्वासनपर, अगर आपश्रीकी वाणीमें निष्ठा है तो जैसे बच्चनने कहा हैं

**मैं रखता हू हर पाव सुदृढ विश्वास लिये**
**ऊबड खाबड तमकी ठोकर खाते खाते.**
**इनमे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही.**

अर्थात् मैं हरेक कदम बहुत सुदृढ विश्वासको लेकर रखता हू जमीनके ऊपर पडे पत्थरोंसे ठोकर नहीं लगती ऐसा भी नहीं है, पैर मेरे भी लडखडा जाते है ऊबड खाबड तमकी ठोकर खाते खाते भी मेरी निष्ठा है कि कोई रक्ताभ अर्थात् लाल किरण मेरे मार्गमें प्रकट होगी जिससे कि रास्तो को मैं अच्छी तरहसे देख सकू, ऐसा बना ही देगी

**भक्तिमार्गाब्जमार्तण्ड. स्त्रीशूद्रादिउद्धृतिक्षम** (सर्वोत्तमस्तोत्र ९) भक्तिमार्गाब्जमार्तण्डकी कोई किरण, कोई वाणी, हमारे हृदयको कभी स्पर्श करेगी कि हम सिद्धान्त कहने लग जायें, सिद्धान्त विचारने लग जायें, इन सिद्धान्तोंको विचारनेका उत्सव मनाते रहे तो सभव है कि कभी **तम कहता है मुझ महानिशिकी दिशा नहीं तुम पाओगे. ज्यादा संभव है भूल भटक कर उसी जगह आ जाओगे थे चले जहा से मनमें तूफानी जोश लिये.** अधकार ऐसे मुझे डराता है कि तुम जहा जाना चाहते हो वहा पहुच नहीं सकते भटककर फिर वहीं पहुच जाओगे जहासे यात्रा शुरु करी थी **पर फिर भी मैं रखता हू हर पाव सुदृढ विश्वास लिये. ऊबड खाबड तमकी ठोकर खाते खाते. इनमे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही.** कितने प्रेरक वचन कविने कहे हैं

**भक्तिमार्गाब्जमार्तण्ड**की वाणीकी किरण फूटेगी यह हमें विश्वास है कि नहीं, हृदयको टटोलो और पुष्टिमार्गपर चलना प्रारम्भ करो शर्तिया तुम इस पुष्टिमार्गमे व्यापे हुवे अधकारपर विजय पा सकोगे क्योंकि **स्त्रीशूद्रादिउद्धृतिक्षम.** उस समय भी

स्त्रीशूद्रोका उद्धार करनेकेलिये महाप्रभुजी एक आचार्यके तौरपर हमारे सामने आये तो आज हम क्या हैं? बस ये ही तो है उस जमानेमे स्त्रीशूद्रोंकी जो स्थिति थी वैसी ही आज पुरुषोंकी, ब्राह्मणोंकी, बालकोंकी, महाराजाओंकी, क्षत्रियोंकी, सबकी स्त्रीशूद्रों जैसी स्थिति हो गई है **सबही भये इकसार अहो हरि होरी है खरन भये असवार अहो हरि होरी है** होलीका यही त्यौहार तो चल रहा है जो चलता हो उसमे कोई खराबी नहीं लेकिन महाप्रभुजीकी वाणीमे निष्ठा रखोगे तो शर्तिया तुम्हारे हृदयमें भक्तिका कमल खिलेगा, खिलेगा और खिलेगाही

**अलौकिकमन सिद्धौ सर्वथा शरण हरि।**
(विवेकधैर्याश्रय १३)

**तस्मात् सर्वात्मना नित्य श्रीकृष्ण शरण मम।**
**वदद्भिरेव सतत स्थेयम्. ।।** (नवरत्न ९)

महाप्रभुजीने हमें आश्वासन दिया है इसे कभी भी भूलना नहीं और उसे भूलोगे नहीं तो ही तुम्हें आत्माद्वैतका, आत्मतादात्म्यका बोध होगा इस आत्मतादात्म्यका बोध महाप्रभुजीने षोडशग्रंथोंसे लेकर अन्य बहुतसे ग्रंथोमें दिया है उदाहरणार्थ भक्तिवर्धिनीमें, जलभेदमें, पचपद्यानिमे, सेवाफलमें सन्यासनिर्णयमे यह सारे जो आठ अंग ऐरिक्सनने कहे हैं, एक मनुष्यको मनुष्यके तौरपर विकसित होनेकेलिये जो मानसिकता चाहिये, वैसी मानसिकताके सारे ही पहलूओंको महाप्रभुजीने कितनी सावधानीसे षोडशग्रंथोंमे लिया है यह तो हम अपने ग्रंथोंका अध्ययन करें तो ही हमें पता चलेगा, नहीं तो पता ही नहीं चलेगा

<u>प्रमेयबलकी अनुपलब्धिमे श्रीमहाप्रभुजीकी वाणीका प्रमाणबल ही मार्गपर चलनेके लिये प्रज्ज्वलित मशाल</u>

प्रमेयबल प्रभू प्रयोग करें तो कर्तुम् अकर्तुम् अन्यथा कर्तुम् सर्व समर्थ हैं परन्तु तुम्हारेसे प्रमेयबल प्रयोगमें नहीं आता

हो तो एटलीस्ट् तुम्हें प्रमाणबलका तो प्रयोग करना चाहिये ना! एक सामान्य बात बताऊ कि प्रमेयबलसे तो परमात्मा विश्वम्भर है चौंच दी है तो चुग्गा भी देगा. अर्थात् चोच दी है भगवानने तो चने भी देगा ही फिर भी चिडिया इतनी समझदार होती है, कबूतर भी इतना समझदार होता है कि उडाउड तो करता ही रहता है ऐसे ही बैठा नहीं रहता कि चौंच दी है तो चने आस्मानमें से गिरेंगे हम ऐसे कैसे प्रमेयवादी हो गय कि अपना चुग्गा भी ढूढने नहीं जाते और उसे ढूढनेका प्रयास भी नहीं करते महाप्रभूजीकी वाणी यह अपना चुग्गा है समझे अगर महाप्रभुजीने प्रमेयबलकी चौंच दी है लेकिन इसका चुग्गा खोजनेकेलिये थोडी तो उडाउड प्रमाणबलसे करो थोडा तो प्रयास करो गायको कि गधेको कि कूत्तेको भी गली में देखोगे तो पाओगे कि वो सब यहा वहा फिरते रहते है खुराक खोजनेकेलिये और हम इनसे भी गये गुजरे हैं कि महाप्रभुजीकी वाणीरूप खूराकको भी नहीं ढूढते चुग्गा ढूढो, चुग्गा ढूढोगे तो तुम्हे दी गई और प्रमेयबलसे मिली हुई चौंच सफल होगी तुम व्यापारमें ऐसा विश्वास नहीं रखते कि भगवानने जो देना था वह आसमानसे टपका देगा व्यापारमें तो प्रतिदिन जोरीवलीसे कालबादेवी और कालबादेवीसे कौन जाने कहा कहा पूना सूरत नाशिक तलक तुम जाते होगे कहा कहा नहीं जाते हो! इसमे तुम प्रमेयबल प्रयोग नहीं करते लडकी ढूढनी हो, लडका ढूढना हो तो प्रमेयबलका प्रयोग नहीं करते, सब प्रमाणबलका प्रयोग करते हो खाना हो तब भी कोई प्रमेयबल प्रयोगमें नहीं लाते कि थालीके सामने बैठ कर कहो हा प्रभुका प्रमेयबल होगा तो रोटीके टूकड मूहमे आ जायेगे बूदी मोहनथालके स्वाद लेने हो तो कोई प्रमेयबल प्रयोगमें नहीं लाता तुरन्त मदिरमें जाकर पैसा जमा करा देते हो हमारी ओरसे आज मोहनथालकी एक भेंट सामिग्री आरोगा दो जिससे कि समाधानमे मोहनथाल घरमें बैठे बिठाये आ जाये उसम प्रमेयबल प्रयोगमें नहीं लाते प्रत्येक जगह प्रमाणबल प्रयोगमें ला रहे हो एक भक्तिमे, एक सिद्धान्त

समझनेमें एक सिद्धान्तशुद्ध जीवन जीनेके अभिगममें केवल प्रमेयबल कि सिद्धान्तकी चर्चा मत करो! हमारा पुष्टिमार्ग प्रमेयबलका मार्ग अरे! क्या प्रमेयबलका मार्ग! कौनसा प्रमेय! क्या तुम्हे प्रमेयबल अवेलेबल है? नहीं है तुम्हें अवेलेबल होता तो तुम्हारी यह दुर्गति होती ही नहीं अवेलेबल नहीं है इसलिये तुम प्रमाणबलका प्रयोग करो और प्रमाण क्या? महाप्रभुजीके उपदेश हमारे लिये प्रमाण हैं इन उपदेशोंके मुताबिक जब तुम अपने जीवनमें भक्तिका स्वीकारोगे पुष्टिप्रभुको स्वीकारोगे पुष्टिप्रभुकी शरणागतिको स्वीकारोगे तब प्रमेयबल तुम्हारेमें प्रकट होगा तुम उलटा करते हो घोडेके पीछे गाडीको बाधा जाता है और तुम घोडेके आगे गाडी बाध रहे हो और कहते हो कि प्रमेयबल प्रकट हो अरे, पमाणको तो पहले प्रकट होने दो

**अन्धस्य सूर्यइव तद्विमुखस्य नात्र अर्थिता** प्रमेयबल सूर्यमें है जिससे वह प्रत्येक वस्तुको प्रकाशित कर देता है लेकिन यह प्रकाशित करा हुवा प्रमेयबल कब काम आयेगा कि जब तुम आखोंको खोल कर देखो लेकिन तुम्हारी आखकी पुतली मेरी आख जैसी ही हो कि देखते हुवे भी नहीं दिखता तो फरस्ट्रेशनके कारण सूर्य उदित हो तो भी क्या और न भी उगे तो क्या? सब एक जैसा ही रह जायेगा गलत भ्रमणामें मत जीयो थोडासा प्रमाणबल भी प्रयोगमे लाओ महाप्रभुजीके ग्रथ हमारेलिये प्रमाणबल हैं पुष्टिमार्गपर चलनेकेलिये एक प्रज्ज्वलित मशाल है कि जिससे मार्गमें आते प्रत्येक अंधकारको, प्रत्येक कोनेकुचालेमें आते जो खड्डे हैं, उनसे बचाकर तुम्हे ले जानेकेलिये एक समर्थ प्रमाणबल है कोई भी जगली जानवर, यह मशाल अगर तुम्हारे हाथमें है तो तुम्हारी ओर आनेका साहस नहीं करेगा इतना समर्थ प्रमाणबल है परन्तु इसे हाथमें तो अपने ही रखना पडेगा, बुद्धिमें अपनी इसे डालना पडेगा और फिर चलोगे तो पुष्टिमार्ग तुम्हारा है, तुम पुष्टिमार्गके हो

लेकिन जब तुम्हारेमे यह बल नहीं है तब कहीं न कहीं गडबड होगी ही

## उद्वेगकी धुनाई या जुगालीसे होती चिताकी मनाही

अब हम इस मुद्दे पर आते हैं कि जिसमें पुरुषोत्तमजीने तीन प्रकारकी चिन्ताका वर्णन किया है १ उद्वेगजनित २ उद्वेगरूपा और ३ उद्वेगजनिका जो चिन्ताऐ हैं, उनमें उद्वेग क्या? जैसे मैंने थोडी देर पहले तुम्हें कहा कि चिताको हम समस्यारूपमें लेते हैं, उद्वेग समस्या नहीं है वास्तवमें उद्वेगतो जीवनकी एक हकीकत है कल भी मैंने तुम्हें एक बात कहीं थी कि **दिल ही तो है ना सगोखिस्त, दर्दसे भर ना आये क्यु रोयेंगे हम हजार बार कोई हमे रुलाये क्यु?** जो हृदय है तो उसमें कभी न कभी कोई न कोई दु ख तो आयेगा ही जब दु ख आयेगा तो उसका अनुभव तो करना ही पडेगा, जिसे हम छोड नहीं सकते लेकिन जिस वस्तुको हम छोड सकते हैं वह यह कि दु ख आ ही गया तो उसकी धुनाई या जुगाली मत करो बस मुख्य मुद्दा यह है कि दु ख आ गया तो उसको अनुभवो थोडा रोना हो तो रो लो, अथवा इसका प्रतीकार करना हो तो कर लो विवेकधैर्याश्रयमें ऐसे बहुतसे उपाय समझाये गये हैं जिसका प्रतीकार कर सकते हो तो करो प्रतीकार नहीं कर सकते तो सहन कर लो सहन नहीं होता और न ही प्रतीकार कर सकते हो तो अष्टाक्षरका जप करो, वगैरे वगैरे बहुतसे ऐसे ऑल्टरनेटिव् हैं जिन्हे महाप्रभुजीने सजेस्ट् किया है जिससे कि तुम्हारी जो ईगोकी आइडेन्टिटी है वह टूट न जाये किसीने मुझसे प्रश्न पूछा था **ईगोके स्प्लिट होनेका तात्पर्य क्या?** अर्थात् हमारे अहम्का जो बोध है **मैं कौन?** इसमे किसी प्रकारकी टूट फूट हो जाये जैसे हम दीवार बनाते है इसमे कोई दरार पड जाये, टूट जाये, मकानकी नींवमें कोई दरार आ जाये क्रैक आ जाये इसी प्रकार अपनी पहचानका जो बोध है उसमें किसी प्रकारका क्रैक आ जाये उसका नाम आत्मद्वैत अपनेमें किसी भी

प्रकारका द्वैत विचारना कि खाली एकही सिद्धान्त सत्य हैं लेकिन महद्अंशमें व्यवहारमें लाने लायक नहीं है यह द्वैत दिमागमें आया ना! सिद्धान्त सिद्धान्तके तौरपर सच्चे हैं लेकिन जनतामें चर्चा करने लायक सच्चे नहीं है, यह द्वैत ऐसे सारे जो द्वैत आ जाते हो इन द्वैतोको ओवरकम करना पडेगा क्योंकि यह द्वैत किसी दिन हमें मार्गके ऊपर चलानेमे सक्षम नहीं बनाते उद्वेग अपने हृदयके कारण होता है हृदय न हो तो औपरेशन करा ले क्योंकि हम हृदयके बगैर जी नहीं सकते, तो फिर कोई उद्वेग नहीं आयेगा वैज्ञानिकोके अनुसार हमारे भीतर ऐसे ग्लेन्ड्स् हैं मस्तिष्कमें कि अगर जिनका औपरेशन कर दिया जाये अथवा मस्तिष्कके किसी हिस्सेको इलेक्ट्रिक शॉक देकर सुला दिया जाये तो वह काम करना बन्द कर देते हैं जैसे कि चूहेके मस्तिष्कके किसी ऐसे हिस्सेको इलेक्ट्रिक शॉक देकर इनऑपरेटिव बना देते हैं तो फिर बिल्ली आये तो चूहा भागता नहीं है बैठा ही रहता है. ऐसा कुछ हमारे भीतर भी हो जाये तो ऐसा हो सकता है जो नहीं हो सकता वह यह कि भयजनक ग्रंथियोंको लगे हुवे बिजलीके झटके जो हमें इनऑपरेटिव कर रहे है, उनसे बाहर आओ तो भय भी निवृत्त हो सकता है, उद्वेग भी निवृत्त हो सकता है परन्तु साधारणतया अपने शरीरकी, अपने मानसकी, अपने विचारकी, अपने व्यवहारकी जिस प्रकारसे बनावट है, उसमें भय होता ही है, काम उत्पन्न होता ही है, क्रोध उत्पन्न होता ही है काम उत्पन्न होना यह बनावटका विषय है लेकिन इस कामको तान तानकर इसकी धुनाई या जुगाली कर करके, हमें जिस वस्तुकी कामना है उसका लोभ रखना यह स्वाभाविक वस्तु नहीं है यह तो धुनाई या जुगालीके द्वारा उद्भूत वस्तु है क्रोध उत्पन्न होता है यह स्वाभाविक वस्तु है काम या क्रोधके बाद जब लोभ या मोह तुम्हारेमे उत्पन्न होता है यह तुम्हारेमें स्वाभाविक प्रकारसे उत्पन्न नहीं होता क्रोधकी तुमने बहुत धुनाई या जुगालीकी अर्थात् तुम इसका चिंतन करते रहो कि मैं ऐसे कर दूगा कि वैसे कर दूगा यह अस्वाभाविक होनेके कारण

किसी समय मोहमें परिणत होगा लेकिन तुम अगर क्रोधकी धुनाई या जुगाली ना करो तो यह क्रोध तुम्हारे मोहमें परिणत नहीं होगा इसी प्रकार काम धुनाई या जुगालीके कारण लोभमे परिणत होता है उस मोहको तुम सग्रहित करके रखोगे तब उसमेंसे मात्सर्य प्रकट हो जायेगा उसी प्रकार लोभकी धुनाई या जुगाली कर करके हम मदको डेवलप् कर लेते है यह तो मेरे ही पास है किसी और के पास नहीं मैं पुष्टिप्रभुकी मोनोपोली रखता हू लेकिन इसकी धुनाई या जुगाली मत करो अनावश्यक किस कारण पुष्टिप्रभुके बजाय इसके ऊपर मोनोपोली करते हो!

**काम क्रोधकी धुनाई या जुगाली करनेसे पापाचार**

दान, भोग, और नाश यह धनकी तीन गतिया है जो भोग नहीं सकते और दे भी नहीं सकते, उसके लिये शास्त्र कहते है कि उसकी तीसरी गति है नाशकी ऐसे ही धुनाई या जुगाली कर करके लोभसे तुम जो सग्रह करते हो, उसके कारण तुम्हे मद उत्पन्न होगा अगर लोभकी तुम धुनाई या जुगाली न करो तो मद कभी भी उत्पन्न नहीं हो सकता यह बात धनके बारेमे जितनी सच्ची है उतनी ही अधिकारके बारेमें भी सच्ची है ज्ञानके बारेमें जितनी सच्ची है उतनी ही परिवारके बारेमें भी, हरेकके बारेमे प्रेक्टिकली सच्ची है किसीके ऊपर तुम्हें क्रोध आये यह तो स्वाभाविक वस्तु है आता ही है क्रोध आना बहुत स्वाभाविक है लेकिन क्रोधकी जब धुनाई या जुगाली कर करके हम मोहमें विकसा लेते हैं या इस क्रोधके कारण बाकी सारी बातोका भान भूल जाते हैं खाली एक ही विचार बना रहे, तो तुमने क्रोधकी धुनाई या जुगालीकी ऐसा कहलायेगा ऐस क्रोधकी धुनाई या जुगाली कर करके तुमसे कुछ होता तो नहीं अतएव **देख लूगा, देख लूगा** हो जाता है अब देख लूगा किस कारण देख लेगा यार? देखना हैं तो अब ही देख ले, न देखना हो तो भूल जा लेकिन हम बहुत ही होशियार हैं, क्या कह रहे हो तुम, देख लूगा तुम्हें अरे लेकिन कब देखेगा हमे, इसका

नाम मात्सर्य मात्सर्य क्योकि हमने मोहकी धुनाई या जुगाली करी जिसके सामने हम क्रोध प्रकट नहीं कर सकते, अगर क्रोध प्रकट कर सकते तो देखनेकी जरूरत कहा रहेगी? देखलो ना हमे! हमे क्रोध प्रकट करनेमे डर और लगता है कि हमारे एक लप्पडके जवाबमें किसीने दो लप्पड मारे तो हम किस प्रकार उसे चार लप्पड मारे? हम ऐसा कुछ कहें और दूसरा सामनेसे जवाबदे तो क्या करना?

मुझे एक भाईने थोडे दिन पहले बहुत मजेदार चिट्ठी लिखी आजकल बहुत सारे लोगोको मुझे चिट्ठी लिखनेका बहुत उद्दीपनविभाव होता है मैं जाऊगा वहा तलक इनका सग्रह करके रखूगा इसने मुझे चिट्ठीमें लिखा कि **तुम जन्मे तब तुम्हारे पिताश्री दीक्षितजी महाराजने नदमहोत्सव किया था कि नहीं? वह समझदार थे कि बेवकूफ थे? तो ये अगर समझदार थे तो तुम पुरुषोत्तम सिद्ध हुवे कि नहीं?** सचमे इस आर्ग्युमेंटकी डीटेलमें मैं जाना नहीं चाहता लेकिन ठीकसे पूछना चाहता हू कि नदमहोत्सव तो टी.वी.मे भी बहुत बार कृष्णलीलामें भी होता है. नदमहोत्सव टी.वी.मे जिसका हुवा है तो वह पुरुषोत्तम था कि नहीं? कृष्णलीला हमारे यहा हुई थी ना! तो मैं यह पुरुषोत्तम हू और वो भी पुरुषोत्तम (वो टी.वी.की कृष्णलीलाका एक्टर) समझो कि नदमहोत्सव हुवा तो उससे क्या? यह होते हुये भी मेरे सामने यह आर्ग्युमेंट रख रहे हो? वैक्स् ए लौट! नीचे क्या लिखता है कि **ऐसे तो बहुत सारी युक्तिया और दलीलें मेरे पास ह कि जिसका मैं तुम्हारे सामने उपयोग करना चाहता हू लेकिन तुम्हारा डर लगता है इस कारण अपना नाम नहीं लिख रहा!** ये देऽऽऽऽखऽऽऽऽलूगा! यही तो बात है ना अरे यार! क्रोध आये तो मार मूझे सींग बैल (गोस्वामी) को क्रोध आये तो वह सींग मारता है! लेकिन उसे लगे कि सामनेवाला श्यामसनोहरजी हैं तो भाग जाता है क्योंकि ये ज्यादा सींग मारेगा, ज्यादा कडकपने से पेश आयेगा लेकिन ऐसा नहीं करेगा

कि देख लूगा- देख लूगा! और गुमनाम पत्र लिखे यह सब क्या है? अपने क्रोधको हमने मोहमे विकसित कर दिया है **आज तो खैर कोइ बात नहीं, कह ले तुझे जो कुछ कहना है लेकिन एक दिन देख लूगा** नाम नहीं लिखता लेकिन पत्र लिखे तो उसे किस प्रकार जवाब देना? तो ऐसे देखनेवालोंके लिये अपने पास कोई इलाज नहीं है धमकी दे जाये हमको कि देख लूगा लेकिन फिर देखे ही नहीं अरे देखता क्यो नहीं? यह सब जो अपनी अस्वाभाविक वृत्तिया होती हैं इनकी हम धुनाई या जुगाली करके बहुत कुछ गलत विकसा लेते है वह सब उद्वेग अर्थात् भय भयकी धुनाई या जुगाली करकरके अपनी चिन्ताके रूपमें विकसा लेते हैं उस चिन्ताकी मनाही है

## काम क्रोधकी धुनाई या जुगाली करनेसे नाश

भगवानसे भी अर्जुनने यही प्रश्न पूछा था अथ केन **प्रयुक्तोऽय पाप चरति पुरुष। अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजित।।** किस कारण मनुष्य पाप इस प्रकार करता है कि मानो कोई उससे उसकी इच्छाके विरुद्ध बलात पाप करवाता हो? अर्जुन पूछता है **अथ केन प्रयुक्तोऽय पाप चरति अनिच्छन्नपि** जबकि अच्छी प्रकारसे समझता है कि यह पाप मुझे नहीं करना चाहिये फिर भी किस कारणसे करता है? प्रभु आप मुझे समझाओ और भगवानने वहा कितना सुदर उत्तर दिया है **काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवो महाशनो महापाप्मा विध्येनमिह वैरिण** तुम्हारे भीतर बैठे हुवे काम और क्रोध तुम्हारे घरमें घुसे हुवे शत्रु हैं वह तुमसे पाप करा रहे है पाप कब होता है? जब क्रोधको तुम मोहमें विकसाते हो, जुगाली करकरके मोहको मात्सर्यमे विकसाते हो, कामको जब तुम लोभमें विकसाते हो, और लोभको जब तुम मदमे विकसा लेते हो तब तुम्हे पाप करनेकेलिये खुला अवसर मिल जाता है खुला मैदान मिल जाता है

<u>धुनाई या जुगाली रहित कामक्रोध अगर धर्माविरुद्ध हो तो हमारे भीतर शक्ति पैदा करता है</u>

भगवान गीतामें स्पष्ट आज्ञा करते हैं **धर्माविरुद्धो भूतेषु कामो अस्मि.** इस कामको जब तुम धर्मसे अविरुद्ध प्रयोग करनेकी कला प्राप्त कर लेते हो तब यह तुम्हारा शत्रु नहीं रह जाता तुम्हारे भीतर एक बहुत बडी शक्तिके रूपमे उभरता है इस क्रोधको जब तुम धर्मसे अविरुद्ध पद्धतिके द्वारा प्रयोग करनेकी कला प्राप्त कर लेते हो तब भगवान स्वय अर्जुनसे कह रहे ह कि **तेरे शत्रुओको तू मार.** बिना क्रोधके कोई किसीको मार नहीं सकता थोडा बहुत तो क्रोध प्रयोगमें लाना ही पडेगा लेकिन यह क्रोध धर्म अविरुद्ध होना चाहिये ऐसा क्रोध नहीं होना चाहिये कि तुम्हारे भीतर जो क्रोध है वह मोहमें परिणत हो जाये तुम्हारे भीतर मात्सर्यमें परिणत क्रोध नहीं **किम् कर्म किम् अकर्मेति कवयोपि अत्र मोहता** वैसा क्रोध नहीं होना चाहिये लेकिन **तस्मात् शास्त्र प्रमाण ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्त कर्म कर्तुम् इह अर्हसि** इस प्रकार काम और क्रोधको धर्मसे अविरुद्ध बनाकर जिस समय तुम उनका प्रयोग करते हो तब यही काम और क्रोध तुम्हारे भीतर एक शत्रुके रूपमें नहीं बल्कि एक बहुत बडे मित्रके रूपमे तुम्हारे भीतर एक टिमेन्डस् एनर्जीके रूपमे काम करने लायक बन जाते हैं एक बात समझो कि अगर क्रोध खराब ही होता हो तो **मायावादाख्यतूलाग्नि.** महाप्रभुजीको किस प्रकार कहेगे? **मायावादाख्यतूलाग्नि.** महाप्रभुजीको अपन कहते हैं कि नहीं? अतएव मायावादके ऊपर क्रोध तो आता ही होगा कि नहीं? महाप्रभुजीको कभी किसीने ऐसी सलाह नहीं दी कि आप अपने अडेलके घरमें बिराजकर सेवा करते रहो काहेको मायावादके खडनकी मूसीबतमे पड रहे हो? आजके भगत तो ऐसा कहदे शायद महाप्रभुजीको भी! भरोसा नहीं! लेकिन महाप्रभुजीको इसकी परवाह नहीं थी क्योकि जो वस्तु गलत लगती है उसे कहना ही चाहिये **मायावादाख्यतूलाग्नि** और ब्रह्मवाद ठीक लग रहा है

अतएव वह **ब्रह्मवादनिरूपक** भी है जो बात ठीक ह उसे ठीक कहना ही चाहिये जो बात गलत है उसके बारेमे क्रोधका प्रयोग करना ही चाहिये लेकिन **मायावादिनो तूलाग्नि** कहनेमें नहीं आया जब भी मायावादी दिखें तो उन्हे तुम छुरा मार दो कि इनकी गरदन उडादो अथवा तो मायावादीओंके मठोंको डायनामाइट् लगाकर उडा ही दो ऐसा महाप्रभुजीने कहीं भी कभी भी नहीं कहा मायावादियोके पास जाकर कहा कि तुम मेरे साथ विचार करो मैं तैयार हू **डिण्डिस्तु वादितो द्वारि विश्वेशस्य मया अत्रहि विद्वभि सर्वथा श्राव्य ते हि सन्मार्गरक्षका** मायावादियोको विद्वान कह कर बुलाया है कि तुम विद्वान हो अतएव तुम्हें बात सुनानी है एक बात समझो क्रोधका प्रयोग कर रहे हैं, महाप्रभुजी लेकिन, यह क्रोध प्रयोग करते हुवे भी धर्म विरुद्ध प्रकारसे प्रयोग नहीं कर रहे, धर्मकी अविरुद्ध रीतिसे प्रयोग कर रहे है **न भय तेन कर्तव्य ब्राह्मणानाम् इयं गति.** भय करनेकी क्या बात है, तुम गलत बात कर रहे हो यह मुझे लग रहा है और अगर मैं गलत बात कर रहा हू ऐसा तुम्हे लगता हो तो आओ हम साथ बैठकर विचार करे अब बद दरवाजोंमें चर्चा करना चाहिये क्योंकि सिद्धान्त तो ठीक है लेकिन खुलेमें चर्चा नहीं हो सकती ऐसी महाप्रभुजीकी नीति नहीं थी **डिण्डिस्तु वादितो द्वारि विश्वेशस्य मया अत्र हि** विश्वनाथजीके दरवाजेपर जाकर नगाडा बजाकर घोषित किया कि आओ चर्चा करो मेरे साथ अतएव क्रोध तो महाप्रभुजीने भी प्रयोग किया है लेकिन मायावादियोंके विरुद्ध नहीं बल्कि मायावादके विरुद्ध यह है धर्मअविरुद्धता है क्रोधकी तो धर्मअविरुद्ध काम, धर्मअविरुद्ध क्रोध, तुम्हारे भीतर बहुत बडी शक्ति पैदा कर सकता है और धर्मविरुद्ध काम एव धर्मविरुद्ध क्रोध तुम्हारा नाशक भी बन सकता है उसका निरूपण भगवान गीतामें करते है **विद्धि एनम् इह वैरिण** कहकर अर्जुनने सवाल किया कि **अथ केन प्रयुक्तो अय पाप चरति पुरुष** तो

भगवानने कहा **काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवो महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिण.**

<u>उद्वेगके मुख्य दो कारण. इष्टवियोग और अनिष्टसयोग</u>

अतएव जो उद्वेग उत्पन्न होता है, इसका सघन अभ्यास कि सघन स्वाध्यायका यह कार्यक्रम है यह प्रवचनका कार्यक्रम नहीं है इस कारण मैं इतनी डीटेल्समे जा रहा हू अतएव उद्वेगका मूल अर्थ हमें समझना पडेगा

सब उद्वेगोंका मूल दो बातोंमे ही रहा हुवा है इष्टका वियोग और अनिष्टका सयोग जो तुम्हें अच्छा लगता है वह अगर तुमसे छूट रहा है अलग हो रहा है तो उससे तुम्हें उद्वेग होगा, होगा और होगाही ऐसे समझो, तुम्हारे फेफडोंको सास लेना अच्छा लगता है, नाक दबाकर देखो तत्काल उद्वेग हो जायेगा एक दो चार मिनट तुमको आख मींचनेंकेलिये कहू तो तुम आख मींच लोगे लेकिन ऐसे कहू कि आधा घटा आख मींचकर बैठे रहो तो सबको उद्वेग हो जायेगा

अहमदाबादवाले रणछोडलालजीमहाराजको वैष्णवोंने प्रवचन करनेके लिये बुलाया **गावमें महाराज प्रवचनका फैशन चल रहा है आप प्रवचन क्यों नहीं करते?** महाराजश्रीने कहा **चलो आऊगा प्रवचन करने लेकिन मेरी एक शर्त यह है कि जो मैं पवचन करू तुम उसका पालन करोगे** वैष्णवोंने कहा **हा कृपानाथ आप प्रवचन करो. हम प्रवचनका पालन क्यो नहीं करेंगे?** इन्होने जाकर इतना ही कहा **प्रत्येक व्यक्ति एक एक गाय पालना शुरु करे,** अब तो सब श्रोताओमें से कोई तो इधर भागा और कोई उधर भागा सब भाग गये गायका पालन कौन करे आजके समयमें? एक बात समझो गाय पालने जैसी हल्की बात भी उद्वेग पैदा करनेवाली हो जाती है भला महाराजने गजबका विवेक प्रयोग किया इन्होने कहा **मैं प्रवचन**

तो करुगा लेकिन तुम आश्वासन दो कि तुम उसके मुताबिक करोगे. तो वैष्णवोंने कहा हां करेंगे. इनको यह लगा कि महाराज कहेंगे मनोरथ कराओ, छप्पनभोग करावो. ऐसा ही कुछ कहेगे महाराज. और दूसरा कुछ क्या कहेगे? हिंडोरेका मनोरथ कराओ, फूलमडलीका मनोरथ कराओ. इन्होंने यह न कहकर कुछ और अनपेक्षितही कहा जो जो वैष्णव हैं यह अपने गोपालके वैष्णव हैं. गोपालको गाय बहुत अच्छी लगती हैं अतएव प्रत्येक वैष्णवको एक एक गायका पालन करना फिर तो सब वैष्णव भाग गये बोले हम उत्तम कोटीके वैष्णव होंय तो ही तो पालेंगे ना महाराज! हम तो प्रवाही जीव है भागने दो चर्षणीशब्दवाच्यास्ते स्थिति. तेषा न कुत्रचित् भूल हो गई महाराज आपको प्रवचनकेलिये बूलाया अतएव कोई कुछ करनेको कहे तो उद्वेग हो जाये मैं तुम्हें कह रहा हू लेकिन मुझे ही कोई कहे कि गोपालन करो तो मेरे फलेटमें गायको कैसे पालना? मुझे भी उद्वेग हो जायेगा इसमें कोई घबराने जैसी बात नहीं है स्वाभाविक है क्योंकि जो इष्ट है उसका सयोग अच्छा लगता है और जो अनिष्ट है उसका वियोग अच्छा लगता है

हमें अगर इष्टका वियोग होता है अतएव उद्वेग तो होना ही है अनिष्ट जो मुझे अच्छा नहीं लगता उसके साथ मेरा सयोग हुवा तो उद्वेग तो होना ही है उद्वेग होना इसे हम स्वाभाविक गिनते हैं, क्योंकि मनुष्यकी सरचना ही कुछ ऐसी है कि कुछ इष्ट और कुछ अनिष्ट तो होता ही है दुनिया फिर ऐसी है कि जो इष्ट होता है उसके साथ अपना वियोग करा देती है जो अनिष्ट होता है उसके साथ अपना सयोग करा देती है अतएव उद्वेग स्वाभाविक घटना है इस ससारमे जितनी स्वाभाविक घटना हम देख रहे हैं, हिल रहे है चल रहे हैं, उतनी स्वाभाविक घटना उद्वेग है लेकिन उद्वेगकी धुनाई या जुगाली करके इसे चिताके रूपमे एक समस्या बनाना वह स्वाभाविक घटना नहीं है वह तो कमजोरीके कारण हो जाती

है उसके ऊपर तो चिंतनके द्वारा काबू पाना चाहिये वह नवरत्नके मुख्य मुद्दे हैं कि ऐसे उद्वेगकी धुनाई या जुगाली कर करके अथवा चिंताकी धुनाई या जुगाली कर करके तुम उद्वेगको गलत बढा रहे हो जो उद्वेग अनावश्यक है तो उस उद्वेगके ऊपर काबू पाया जा सकता है अतएव इष्टवियोग और अनिष्ट सयोग यह उद्वेगकी पैदा करने वाले दो कारण है

<u>इष्टानिष्टके वियोग-सयोगकी प्राथमिक अवस्था समझनेपर चिंताके फिनोमिनाको समझोगे</u>

इस इष्टसयोग और इष्टवियोगकी जो प्राथमिक अवस्था है वह किस प्रकार होती है, इसे अगर हम समझ लेंगे तो चिंताका फिनोमिना भी समझमें आ जायेगा हम अच्छी तरहसे जानते हैं पैरोंकी हड्डीको, दिमागको, दिलको कि फेफडोको डॉक्टरने जो कुछ काटना होता है वह काट सकता है हमें इसमें कोई तकलीफ नहीं होती क्योंकि हमे एनेस्थेसिया लगा दिया जाता है यह सब अग हमारे इष्ट होते हुये भी जब इन्हें काटा जाता है तो हमे पता ही नहीं चलता काट दिया जाता हैं उसमें कोई तकलीफ नहीं होती लेकिन जब पता चलता है कि कोई इष्ट काटा जा रहा है मैं मेरे अनुभवकी बात बताता हू कि मुझे टोन्सिलस्की बहुत तकलीफ हो गई इसलिये दमेकी प्रोब्लम् जब तब हो जाती थी इस कारण मैं टोन्सिलस् कटाने गया हमारा डॉक्टर बहुत महापुरुष उसने ऑपरेशन करनेसे पहले मुझसे पूछा डर तो नहीं लगता ना? मैंने कहा नहीं डरता. तो बोला चलो तुम्हे एक इन्जेक्शन् लगा देता हू. बात बहुत साधारण थी कि इन्जेक्शन लगे बिना तो ऑपरेशन होता नहीं और लोकल एनेस्थेसिया था इसलिये मुझे पूरा बेहोश तो किया नहीं था वह ऑपरेशन करते करते मुझसे बोलता जाता, फिर मुझे घबराहट होने लगी कि टोन्सिल कटा कि नहीं? क्या हुवा? किस तरह हुवा? पता कुछ चलता नहीं था, बस कुछ गरम गरम लगता था एक बात समझो कि टोन्सिल कटवानेमें

दर्द नहीं था कटा रहा हू, कटा रहा हू, कटा रहा हू ऐसे उद्वेगकी धुनाई या जुगाली करके मैं खुद इतना घबरा गया कि डॉक्टरको मुझसे कहना पडा पहले तो कह रहे थे कि डर नहीं लगता. अब क्यों इतना घबरा रहे हो? मैंने कहा क्या करू? पता नहीं चलता, इतनी देरसे मेरे मुहमे हाथ डालकर तुम क्या कर रहे हो? मुझे इसकी घबराहट हो रही है.

<u>उद्वेगकी पहली शर्त, सभानता. निद्राधीन या बेहोश व्यक्तिको कभी उद्वेग नहीं होता</u>

सबसे पहले उद्वेगकी पहली शर्त है सभानता जो मनुष्य सुषुप्त हो या जो बहोश हो उसे कभी उद्वेग नहीं होता बल्कि ध्यानसे एक बात समझ तो कि प्रभुने कितनी सुदर इस सृष्टिकी रचना करी है कि दिनभरके तमाम उद्वेगोंको लेकर जब हमें रातमे अच्छी तरहसे नींद आ जाती है तो दूसरे दिन नये उद्वेगोंकेलिये हम फिरसे पहलवान बन जाते हैं कि आ जाओ कि अब क्या है? अतएव जो कुछ उद्वेग आया है इसकी भरपाई करनेकी व्यवस्था निद्राके रूपमे प्रभुने साइक्लीकली बना रखी है जो कोई उद्वेग आया हो वह चितामें परिणत नहीं होता दिनभरका उद्वेग जोड लो अथवा प्रतीकार कर लो और रातको शान्तिसे सो जाओ तो सूबह फिरसे तुम उद्वेगोंके साथ भिडनेको तैयार मिलोगे क्योंकि निद्राका ऐसा मेकेन्जिम् प्रोवाइड करनेमें आया है कि हमारे शरीरके भीतरके प्रत्येक उद्वेगका समस्त जमाखर्चका हिसाब बराबर हो जाता है लेकिन अगर हमे नींद ठीकसे नहीं आती तो फिर उद्वेग स्वप्नमें भी होने लगता है

राजकोटके एक वैद्य लाभशकर हैं उनका भाटिया महाजनवाडीमे दतयज्ञ हुवा मैंने इससे पहले कभी दतयज्ञ देखा नहीं था वहा जाकर मैंने देखा कि किसीका यह दात तो दूसरेका वह दात वृक्षकी डाल परसे जैसे फूल तोडते हैं वैसे दात निकाल रहा था उसे देखकर मेरा अपने दातो परसे विश्वास उठ गया कि हम दातको इतना मजबूत समझकर सुपारी खाते हैं उन

दातोंको कोई फूलकी तरह तोडता हो तो दात है कि कुछ और? तुम मानोगे नहीं कि कितना उद्वेग हो गया जबकि मुझे वहा दतयज्ञके अध्यक्षके तौर पर बुलाया गया था लेकिन अध्यक्षका हाडपजर हिल गया ऐसे कामकाजको देखकर अतएव रातको मुझे स्वप्न आया कि मेरा दात हिल रहा है और उसे उसने बाहर निकाल दिया अब दूसरा दातभी हिलने लगा और उसे भी उसने निकाल दिया जब चार पाच छ दात निकाल दिये तो उद्वेग इतना बढ गया कि मेरी नींद ही खुल गई डरके मारे क्या हो गया अचानक कि जो दात पकडू वही हिले आखिर हो क्या गया! एक्च्युअली लाभशकरभाईका लाभ मुझे मिल गया! मुझे आज दिन तक वह स्वप्न याद है कि हरेक दात जिसे हिलाकर देखू वही हाथमे आ जाये मैंने कहा कि अब इस दृश्यको अधिक देखनेकी सामर्थ्य मेरेमें नहीं है क्या हो रहा है क्यों अचानक ऐसा हो गया? जागकर बैठ गया सासभी जोरसे चलने लगी थी आखिरमें नौर्मल हो गया अतएव एक बात समझो कि उद्वेग होता है उद्वेग हमें कभी स्वप्नमें भी तकलीफ देता है बाकी नौर्मल ठीकसे नींद आती हो तो उद्वेग तकलीफ नही देता इसलिये उद्वेगकी पहली शर्त है जागृति या सभानता

<u>व्यवसायात्मक ज्ञान यह मूल है जहा उद्वेग उत्पन्न होता है</u>

जागृतिमे हम आत्मव्यवसाय करते हैं कि मैं. सबसे पहले कौन जागता है अपने जागने पर? अपना मैं जागता है सो जाता है अर्थात् कौन सो जाता है? हमारा मैं सा जाता है मैं जागनेके बाद तत्काल विषयोके साथ अपनी चेतनाका जो सम्पर्क है शास्त्रमें उसे व्यवसाय कहते है बुद्धिके व्यवसायमें हमारा कुछ इष्टके साथ सयोग होता है कुछ अनिष्टके साथ सयोग होता है कुछ इष्टका हमारा वियोगात्मक व्यवसाय होता है अनिष्टका सयोगात्मक व्यवसाय होता है यह मूल स्थान है जहासे उद्वेग उत्पन्न हो रहा है

## चिंताको समझनेकेलिये क्लिफ्फ्ईमोर्गनके व्यवसायात्मक ज्ञानकी विवेचना

अब इसके साथोंसाथ एक दूसरा मानसशास्त्रका विद्वान हुवा है क्लिफ्फ्ई मोर्गन करके इसने भी व्यवसायात्मक ज्ञानकी बहुत अच्छी विवेचना करी है चिंताको समझनेकेलिये इन्सिडेन्ट्ली हमें यह विवेचना भी बहुत सहायक है उसे भी हम समझेंगे यह क्लिफ्फ्ईमोर्गन कहता है कि व्यवसायात्मक ज्ञान सबसे पहले दो प्रकारसे होता है विषयके आकर्षणरूपमें अथवा विषयके अपकर्षणके रूपमें जैसेकि फिझिक्स्का लॉ ऑफ ग्रेविटीका नियम है कि एक द्रव्यपिंड दूसरे द्रव्यपिंडको अपनी ओर खींचता है वह आकर्षण, और अगर ध्रुव समान हो तो अपकर्षण होता है बिल्कुल ऐसा ही नियम अपनी अनुभूतियोंमे भी काम कर रहा है किन्हीं विषयोंकी ओर हमारी इन्द्रियोका आकर्षण होता है और किन्हींमे अपकर्षण उदाहरणके तौरपर एक अनुपातसे प्रकाश तुम्हारे सामने आयेगा तो जिस वस्तुपर प्रकाश पडता होगा उन वस्तुओंपर तुम्हारी आखे आकृष्ट होंगी लेकिन एक अनुपातसे अधिक अनुपातमें अगर प्रकाश पडने लगे तो उस वस्तुपरसे हमारी आखोंका अपकर्षण हो जाता है जैसे अचानक सूर्य तुम्हारी आखोंके सामने आ जाये अथवा कैमरेकी फ्लेश लाईट अचानक आख ऊपर आ जाये तो आख अपने आप मिच जाती हैं अपकर्षण सिद्धान्तके कारण औडिबल रेन्जके भीतर कोई भी ध्वनि उत्पन्न हो तो कानका आकर्षण होता है और इस रेन्जके बाहर जा कोई ध्वनि होने लगे तो कानका स्वाभाविक रीतिसे अपकर्षण हो जाता है अर्थात् कान उससे विरक्त हो जाता है यही बात आखमें, कानमें, नाकमें, जीभमें कि स्पर्शमें सब जगह ही लागू होती है जैसे कोई सुकोमल वस्तु हो, समशीतोष्ण हो तो स्पर्श होनेपर हमें स्पर्शका आकर्षण होता है और तीखी हो, आग जैसी होय, बर्फ जैसी होय, सुई जैसी होय, तो स्पर्श होते ही हमारी इन्द्रियोका अपकर्षण होता है

क्लिफ्र्डमोर्गनकी दृष्टिसे व्यवसायात्मक ज्ञानसे तीन प्रकारकी अनुभूति

(क) [1]उद्दीपनसे [2]स्नेह, स्नेहसे [3]आशा

(ख) [4]उदासीनतासे [5]भय, भयसे [6]निराशा

क्लिफ्र्डमोर्गन कहता है कि मूलत इन इन्द्रियोमें होते विषयोके प्रति आकर्षण और अपकर्षण तुम्हारे भीतर तीन प्रकारकी अनुभूतियोंको उत्पन्न कर सकते है उन अनुभूतियोंमें सबसे पहले तो उद्दीपन, जिसका तुम्हे आकर्षण हो रहा है उसकी ओर आखमें उद्दीपन होगा अर्थात् कोई भी वस्तु दिखाई दे तो उसे देखकर हम तुरन्त आख फेर नहीं लेते, उसे देखते रहना ही चाहते है कोई सगीत हमारे कानोंको अच्छा लगता है तो उसे एक बार सुननेके बाद हम कान बद नहीं कर लेते उसे सुनते रहना ही अच्छा लगता है यह उद्दीपन कहलाता है इस उद्दीपनका उल्टा है उदासीनता जब अपकर्षण होता है तो विषय वहा ही होता है तो भी हमारी इन्द्रियोको उदासीनता आयेगी अर्थात् कहीं अधिक रोशनी आ रही हो तो फिर अपनी आख उस तरफसे उदासीन हो जाती है और उस तरफ देखना नहीं चाहतीं बल्कि दूसरी ओर ही देखना पसद करती हैं क्योंकि अधिक रोशनी आ रही है आख उस तरफसे उदासीन हो जाती हैं

अब एक बात ध्यानसे समझो कि जिस विषयकी ओर तुम्हारी ज्ञानेन्द्रियोंका उद्दीपन भाव जागता है उनसे तुम्हारा स्नेह बधता है जिन विषयोंकी ओर तुम्हारी ज्ञानेन्द्रियोकी उदासीनता प्रकट होती है उनसे तुम्हें किसी न किसी प्रकारका भय जागता है क्योंकि उदासीनता उत्पन्न होनेके बाद तुम चुपचाप नहीं बैठ जाते परन्तु तुम उदासीनताकी जुगाली या धुनाई कर करके इसे भयके रूपमें देखने लगते हो जैसे बॉम्बका धडाका होता है, उससे हमारा कुछ भी बिगडता नहीं है

तो भी हमारे दिलकी धडकन बढ जाती है किस कारण बढ जाती हैं? क्योंकि उस तरफ उदासीनता है कि आवाज नहीं सुननी, सुने तो किसलिये? जैसे महाप्रभुजीके सिद्धान्त हम सुनना पसद नहीं करते तो हमें उदासीनता आ जायेगा कि महाप्रभुजीके सिद्धान्त अगर कोई कह रहा है तो तुरन्त अपनी कर्णेन्द्रियोंको अपकर्षण हो जायेगा उदासीन हो जाती हैं इन सब प्रमाणोंकी बातोंकी तुम क्यों धुनाई या जुगाली कर रहे हो? कुछ प्रमेयकी चर्चा करो ना कि ठाकुरजीने कैसी बासुरी बजाई और कैसे गोपियोंको वृदावनमें बूलाया आऽहाऽऽहाऽ आनन्द आनन्द आ गया! आज हमें यह सब अच्छा लगता है, सिद्धान्तकी चर्चामें आनन्द नहीं आता क्योंकि कोई सिद्धान्त गले पड गया तो? इस बासुरीके बजनेमें कुछ गले नहीं पडता क्योंकि वह तो कथामें आता ही है गोपियोको उनके पति और कोई भाई वगैरह रोक नहीं सके जोकि आज तो रोक लेते हैं भला! आज कोई ऐसे नहीं जाने देता पुलिसमें शिकायत कर देते हैं किडनेपिंगका चार्ज लगाकर पकडा देगे यह एक दूसरी कथा है, लेकिन इस कथाको भूल जाओ सिद्धान्तकी कथामें हमें ऐसी ही उदासीनता आ गई है, और इस उदासीनताके कारण फिर भय होने लगता है कि कोई सिद्धान्त कहीं न बोल जाये कितने ही वैष्णव ऐसे भी कहते है कि हम सत्सग करनेको तैयार हैं लेकिन मेहरबानी करके सिद्धान्त मत कहना तो सत्सग किसका करोगे? एक दिलके टुकडे हजार हुवे, एक यहा गिरा एक वहा गिराका सत्सग करना? स्प्लिट् पर्सनालिटि ऐसी ही होती है समझे! तो जब स्नेह या अप्रीतिके कारण उद्दीपन और उदासीनता होती है तो उसके बाद तीसरा स्टेप् क्लिफ्ड् मोर्गन बहुत अच्छा समझाता है कि हमे आशा या निराशा आ जाती है जिसमें अपना स्नेह हुवा उसमें एक बार स्नेह होनेके बाद हम निराश नहीं हो जाते क्योंकि **आशा बलवती राजन् शल्यो जेष्यति पाण्डवान्**

जो कुछ भी अच्छा लगता है उसकी आशा उत्पन्न हो जाती है जिससे हमें भय लगता है उसकी हमें निराशा हो जाती है भगवान न करे कि तुम्हें किसी दिन सिद्धान्त सुननेसे कष्ट हो! ऐसी शुभकामना हम प्रेषित करने बैठें तो ऐसी निराशा हमें आ जाती है और इस बारेमें क्लिफ्र्ड मोर्गन कहता है कि यह सारा जो मैकेनिज्म् है वह जागृतिमे होता व्यवसायका मैकेनिज्म् है जिसके कारण मनुष्य कहीं तो सुख अनुभव करता है और कहीं क्लेशका अनुभव करता है सुख अनुभव करता है वहा उद्वेग नहीं है समझ लो क्लेश अनुभव करता है तो उसे महाप्रभुजी उद्वेग कह रहे है यह क्लेश स्वाभाविक है, क्योंकि विषयोंके साथ हमारी ज्ञानेन्द्रियोंका जो लेन देन है उनमेंसे उद्भवित यह स्वाभाविक परिणाम है

## व्यवसायात्मक ज्ञान और अनुव्यवसायात्मक ज्ञान

महाप्रभुजी इसे ना नहीं कहते, महाप्रभुजी ऐसे नहीं कहते कि तुम पुष्टिमार्गीय हो गये तो तुम्हें कोई छडी मारे तो तुम उसे ऐसा मानो कि यह तो फूलका स्पर्श हो रहा है ऐसी वाहियात बात श्रीमहाप्रभुजी नहीं कह रहे वार्ता पढो तो तुम्हें पता चलेगा कि एक वैष्णव हाकिमने दूसरे वैष्णवको कोडे लगवाये थे तो श्रीगुसाईजीने पूछा एक वैष्णव होकर इतने अधिक कोडे क्यो लगवाये? हाकिमने कहा यह वैष्णव था मुझे मालूम नहीं था तो गुसाईजी ने उस समय कहा वैष्णव था यह शायद तुम्हे पता नहीं था लेकिन जीव है यह तो पता था कि नहीं? अतएव एक बात समझो सुखदु ख सहन ही करने कि सुखदु खके अनुभवको भ्रान्ति मानना ऐसी अस्वाभाविक बात महाप्रभुजी नहीं कह रहे वह तो केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि तुम्हारे सुखदु ख जो लगे है उनकी धुनाई या जुगाली कर करके इतना अधिक मत बढा लो कि तुम्हारेमें लोभ मोह, मद, मात्सर्य जैसे दुर्गुणोंका विकास हो जाये जिसके कारण आखिरमे तुम्हे चिताके प्रोसेस्में शामिल होना पडे, उस चिताकी मनाई

कर रहे है क्लिफर्डमोर्गनने, यह चिंता कहासे पैदा होती है, उसके स्रोतका जो विश्लेषण किया वह भी ध्यानमें लेने लायक है इस बारेमें चिंताके स्वरूपके विवेचनकी हमारी जो पद्धति है उसमें हमारे यहा ऐसा भी कहा जाता है कि जो व्यवसायात्मक ज्ञान होता है उसके बहुतसे प्रकार आखिरमें एक अनुव्यवसाय ज्ञान प्रकट करते है अनुव्यवसाय ज्ञान अर्थात् हम जो पर्दा दिखाई दे रहा है वह व्यवसाय, और जब तुम मनमें ऐसा विचारो कि मुझे परदा दिखाई देता है वह अनुव्यवसाय परदा दिखाई दे रहा है वह व्यवसाय, और जब तुम मनमें अपने यह विचार लाओगे कि मुझे परदा दिखाई दे रहा है वह अनुव्यवसाय

<u>चिंताके कारण अनुव्यवसायात्मक ज्ञानके साथ नवरत्नग्रथकी सगति</u>

अनुव्यवसाय रूपी ज्ञानके स्तर ऊपर एक बात ध्यानसे समझने लायक है जब हमें अनुव्यवसाय ज्ञान होता है तो उसमेंसे हमारेमें चिंता कि चिंतन दोनो उदभव होता है ज्ञान अनुभवित होता है यह कामात्मक कि क्रोधात्मक होगा लेकिन इस काम और क्रोधका जब तुम अनुव्यवसाय करोगे उदाहरणके तौर पर तुम लाल परदा देख रहे हो वह व्यवसाय है लेकिन जब तुम इस स्तर पर जाओगे कि मुझे लाल परदा दीख रहा है तो वह है अनुव्यवसाय फिर तुम ऐसे भी कहोगे कि मुझे लाल परदा देखना है, फिर तुम ऐसे भी कहोगे कि मुझे लाल परदा ही देखते रहना है और बात आगे बढी तो तुम ऐसे भी कहोगे कि लाल परदा मुझे नहीं दिखता तो मुझे तकलीफ होती है फिर तुम ऐसे भी कहोगे कि अरे! वैष्णव तो अपने घरमें लाल परदा नहीं लगा सकते क्योंकि पुरुषोत्तम तो हम गो बालकोके घर ही बिराजते है ऐसा लफडा हो जायेगा अर्थात् इस अनुव्यवसायके स्तरपर जाकर सब नौटकी चालू हो जाती है चिंताकी व्यवसायके स्तरपर इतनी नौटकी चिंताकी नहीं होती अनुव्यवसायात्मक ज्ञानको तुम चिंतामें जिस रीतिसे विकृत कर सकते हो उसी प्रकार

विचारो तो चिंतनमे भी बदल सकते हो अर्थात् उद्दात्तीकरण कर सकते हो सारे नवरत्न ग्रथका उपदेश इस अनुव्यवसायके स्तरपर उत्पन्न होती चिंताके ऐन्टीडोस् तरीके तुम्हें चिंतनका ऐसा उपदेश देनेके लिये है कि जिसके चिंतनके कारण तुम चिंता पर काबू पा सको

शारीरिकमानसशास्त्रानुसार चिंता और चिंतनकी समझ

इस चिंता और चिंतनकी मैकेनिज्म्के साथ साथ एक बात अभी और समझो शारीरिकमानस शास्त्रानुसार आजका जो आधुनिक शारीरिक मानसशास्त्र है इसमे तीन सिस्टम् कहनेमें आते है तीन अर्थात् पहले सिस्टम्को शारीरिक मानसशास्त्र औटोनोमस् सिस्टम् कहता है दूसरेको सिम्पैथैटिक् सिस्टम् और तीसरे सिस्टम्को शरीरमें रहे हुवे पेरासिम्पथैटिक सिस्टम् कहता है

(१) ओटोनोमस् सिस्टम्

किसी भी विषयका बिना प्रयास जो ज्ञान होता है वह सब ओटोनोमस् सिस्टम् द्वारा होता है प्रकाश तुम्हारी आखोके सामने आया आख ओटोनोमस् सिस्टम्से प्रकाशकी ओर जा सकती है प्रकाश अगर अधिक पड रहा है तो ओटोनोमस् नर्वस सिस्टम्के द्वारा आख प्रकाशके दूसरी ओर चली जायेगी यह सब ओटोनोमस् नर्वस् सिस्टमके स्तरपर शरीरमें होता रहता है कोई सुमधुर ध्वनि सुनाई देगी तो कान अपने आप उस ओर आकृष्ट हो जायेंगे कोई कठोर ध्वनि सुनाई देगी तो कान अपने आप वहासे अपकृष्ट हो जायेगे यह सब ओटोनोमस् सिस्टम् है

(२) सिम्पथैटिक सिस्टम्

शरीरमें रही हुई ज्ञानेन्द्रियोंके, कर्मेन्द्रियोंके वैसे सिस्टम्के कारण हमारे शरीरमें एक सिम्पथैटिक सिस्टम भी है सिम्पथैटिक सिस्टम् जैसे धूमधडाका हुवा हो अब वह बौम्बका है

कि सिनेमाका हैं या किसका हैं? सिम्पथैटिक सिस्टम् तुमको सिग्नल् दे देगा कि भागो यहा हिन्दु मुसलमानोका दगा हुवा था तो उस समय मैंने ऐसा सुना कि कालबादेवीमें लोगोंमे भगदड मच गई थी किसीको पता ही नहीं चला कि किस कारण भाग रहे हैं? किसीने किसीसे पूछा भाई क्या हुवा क्यो भाग रहे हो? तो वह बोला कि गाय भागो तो उसकी चपेटमें न आ जाऊ इसलिये भागा एक आदमीने भागना शुरु किया तो दूसरेने भी भागना शुरु किया और रस्ते चलते सब आदमी भागने लगे, दुकानें बद होना शुरु हो गई, दगा हो गया! अब कौन किससे पूछे कि पहले गाय कैसे भागी? जो भागनेकी प्रक्रिया शुरु हुई सिम्पथैटिक सिस्टम्से कि लोग भाग रहे हैं तो हमें भी ऐसा लगे कि सारे लोग क्या बेवकूफ हैं जो भाग रहे हैं? एसे ही हम सबने सिद्धान्तोंसे भागना शुरु किया, कि बडे बडे बालक लोग भी सिद्धान्तोसे भाग रहे हैं तो हम क्या बेवकूफ हैं जो हम वहा खडे रहे? भागो, भागो, भागो मच गया बादमें पता चला कि हिन्दू मूसलमानोका दगा नहीं हूवा था, खाली गाय भागी थी गाय भागे तो मनुष्यको रस्ता देनेकेलिये भागना तो पडेगा ही ना! हमको सिग्नल मिले तो तदानुसार काम हम विचार विवेकके बिना ही करते हैं इसका नाम सिम्पथैटिक सिस्टम् यह सिम्पथैटिक सिस्टम् जब ओवरएक्ट होता हैं तो उस समय चिताके सभी कारण खडे हो जाते हैं

## (३) पैरासिम्पथैटिक सिस्टम्

इस सिम्पथैटिक सिस्टम्पर काबू पाना हो तो किसी न किसी पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्को देखना पडेगा जिसके लिये तुम्हे थोडा रुकना पडेगा, अरे भाई जरा विचार तो करो कि आखिरमें हूवा क्या है? किस कारण लोग भाग रहे हैं? मैं जब बनारस पढने गया था वहा मुझे जब तब ऐसी गडबडीओंका सामना करना पडता था बनारसकी गलिया बहुत सकरी और वहा बारात आवे और वरराजा बिचारा घोडेके ऊपर बैठा हो,

आगे बैंडवाले धमधमाधम बैंड बजाकर चलते हो, पीछे वरराजा घोडेके ऊपर बैठकर आ रहा हो ऐसेम कोई भैंस आ जाये! तो पहले तो बैंडवाले भागकर दुकानोंके ऊपर चढ जाये लेकिन वरराजा तो घोडेके ऊपर बैठा है वह उतरे तो वरराजा की शानमे बट्टा लगे, और भैंसको तो समझमें आती नहीं कि यह वरराजा है यह भैंसका वरराजा हो तो भैंस पहचाने लेकिन मनुष्यके वरराजाको भैंस कैसे पहचाने? अतएव गलीओमे भागमभाग चालू हो जाती, इस दौडादौडमे मैं भी बहुत बार भागा हू कि भैंस आ गई कोई दुकानमें चढ जाये, कोई मकानमें घुस जाये, क्योंकि पहले तो भैंस बैंडवालोंसे भडके, भैंसको पता ही नहीं चलता कि यह क्या बज रहा है मेरी आवाजमें क्या खराबी थी कि तुम यह बैंड बजा रहे हो? उसे इसकी शायद चिंता होती होगी अतएव इसे अजीबसा लगे और यह भागे बाराती लोग दुकानमें चढें, बैंडवाले चढ जाये और फिर हमे पता ही नहीं चले कि किस चीजकी यह भगदड है ऐसे समय मैंने भी पच्चीसो समय भागमभाग करी है लेकिन एक बार शांतिसे विचारो कि भैंस बिचारी सींग मारनेके लिये नहीं भागी वह तो हमसे खुद डर कर भाग रही थी तो हमें वहा रुक जाना चाहिये ऐसे समय हमें क्यो भागना चाहिये? भैंस सींग मारे ऐसी भैंस नहा होती भैंस बहुत स्थितप्रज्ञ प्राणी होती है अतएव थोडा बहुत पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम् हमे इनवोक करना चाहिये चिंतनकी प्रणालीसे, तो फिर हम सिम्पथैटिक सिस्टम्के ऊपर काबू पा सकते है जैसे कोई तुम्हे एक तमाचा मारे, तो तुम्हारा हाथ उठता है कि नहीं, यह सिम्पथैटिक सिस्टम् है किसीने तमाचा किस कारण मारा, थोडा पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्को इनवोक करोगे तो काबू आयेगा और समझोगे तब तुम अपने आपको तमाचा मारनेसे रोक सकते हो अथवा तो अन्य दूसरे उपाय कर सकते हो ऐसे किसी प्रकारका सिस्टम् पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम होता है निद्रा भी किसी प्रकारका बिल्ट् इन पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम है योगशास्त्रमें जो समाधि

वर्णन करनेमें आती है वह भी अपने शरीरमें रही हुयी पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्को मजबूत बनानेकी साधना हैं रूक्ष और मृदु विषयोके इन्द्रियोके साथ होते जो सघर्ष है इसमे किसी प्रकारके एक ऐसे पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्को हम खोज लेते हैं कि जिससे **शीतोष्ण सुखदु खेषु तथा मानापमानयो.** सबको हम झेलनेकेलिये समर्थ बन जाते हैं इन्हे सिम्पथैटिक सिस्टम्के लेवलपर नहीं झेल सकते पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्को अगर हम डेवलप् करेंगे तो झेल सकेंगे

<u>पेरासिम्पथैटिक सिस्टम्को जगानेपर चितापर काबू पाया जा सकना</u>

महाप्रभूजी नवरत्नमें सिम्पथैटिक सिस्टम्को इन्वोक नहीं कर रहे तुम्हारे अन्दर रही हुई पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम् जो है उसे इन्वोक कर रहे हैं **चिन्ता कापि न कार्या निवेदितात्मभि. कदापीति। भगवानापि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्।।** यह बात तूम सिम्पथैटिक सिस्टमसे समझने जाओगे तो बहुत कठिनता होगी लेकिन पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्से समझोगे तो धीरे धीरे सिम्पथैटिक सिस्टम्में भी यह बात आ सकती है यहा महाप्रभुजी क्या उपदेश देना चाह रहे हैं कि **चिन्ता कापि न कार्या, विनियोगेऽपि त्याज्या, निवेदने त्याज्या, चित्तोद्वेग विधायापि यद् यद् करिष्यति तथैव तस्य लीलेति मत्वा त्याज्या** यह त्याज्या, त्याज्या, त्याज्या जो इतनी बार कहा है यह तुम्हारी पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्को इन्वोक करनेकेलिये **त्याज्या-त्याज्या** कह रहे हैं, किसी प्रकार सिम्पथैटिक सिस्टम्से जो इतना उपद्रव कर रहे हो दौडभाग कर रहे हो, भैंस आ गई तो भागो, भागो भागो! लेकिन सींग मारने आई कि खुद घबडाकर भागी? मोटे तौरपर शहरमें रहने वालोको एक लफडा होता है कि हमें साप दिखाई दे अतएव सिम्पथैटिक सिस्टम् इतना अधिक उत्तेजित हो जाता हैं कि साप जहरी हो या न हो, मारो! मारो! मारो! ऐसी मार मार मच जाती है कि बेचारा साप जहरी न भी हो तो भी उसे मार ही डालते

हैं यह क्या हैं? यह सिम्पथैटिक सिस्टम्का लफडा है क्योंकि सिम्पथैटिक सिस्टम्को हर समय चौकन्ना रहना पडता है जरा भी चौकन्ने रहनेमें सिम्पथैटिक सिस्टम् चूका तो क्या होता हैं? तुम रोड पार कर रहे हो और सोचो कि गाडी आ रही है, तब तुम्हे आगे जानेमें या पीछे जानेमें कौन हैल्प करता है? पेरा-सिम्पथैटिक नहीं और औटोनोमस् भी नहीं सिम्पथैटिक सिस्टम् तुरन्त तुम्हारे पैरमें कोई ऐसी गति लायेगा कि तुम इस पार या उस पार हो जाओगे एक बात समझो मैंने कई बार कुत्तोको रोड पार करते समय पहले इस ओर और फिर दूसरी ओर देखते हुवे देखा है तुम भी औब्सर्व करोगे तो तुम्हे भी मजा आयगा कुत्तोको इतनी खबर तो है कि रोडको अचानक ही पार नहीं करना जिस ओरसे गाडी आ रही है उस तरफ देखकर फिर कुत्ते रोड पार करते है इस बीचमे इसे अगर ऐसा लगता है कि कुछ गडबड है तो पीछे भी लौट जाता है यह तो मैंने भी देखा है अतएव इसमें तीन सिस्टम् काम कर रहे हैं सिम्पथैटिक सिस्टम्, ओटोनोमस् सिस्टम्, पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम् यह तीनों सिस्टम् एक साथ ही शरीरमें काम करते है प्रभुने ऐसा सिस्टम् इस शरीरके अन्दर खडा किया अतएव उद्वेग तो होगा ही सूख दु ख भी होंगे ही लेकिन यह इस औटोनोमस सिस्टमसे होगा, और इस उद्वेगके कारण कहीं हम ऐसी दौडधूप शुरु कर देंगे लेकिन वह सिम्पथैटिक सिस्टम्से होगा और पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम् से होगा लेकिन महाप्रभुजी पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्पर जाकर तुम्हें कह रहे हैं **विवेकस्तु हरि. सर्व निजेच्छात. करिष्यति, त्रिदःख सहन धैर्यम् आमृते सर्वत. सदा, अशक्ये वा सुशक्ये वा सर्वथा शरण हरि** (विवेकधैर्याश्रय १,६,११)

यह सब जो उपदेश हैं वह तुम्हारे
पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्के स्वीचको ऑन करनेके
उपदेश हैं

चितन कि चिंता/निर्विषय अथवा सविषय

चिंता अथवा तो चिंतन, दोनो दो प्रकारके हो सकते हैं एक निर्विषय चिंता भी हो सकती है, और इसी प्रकार सविषय चिंता भी हो सकती है उसी प्रकार निर्विषय चितन भी हो सकता है और एक सविषय चिंतन भी हो सकता है

निर्विषय चितन

निर्विषय चितनका एक बहुत सरल उदाहरण देता हू तो तुम्हे जल्दी समझमें आ जायेगा हालाकि इसे आजकी तारीखमे देनेका मैं अधिकारी नहीं हू फिर भी उदाहरण है जो कि दे रहा हू ऐसे मत समझना कि मैं इसे कहनेका अधिकारी हू इसलिये दे रहा हू मैं मेरा अपराध कबूल करके इस बातको कह रहा हू सोचो कि तुम्हें नींद नहीं आती हो तो पुस्तक पढना शुरु करदो नींद आ जायेगी इसके बाद भी नहीं आती हो तो माला फेरनी चालू करो **श्रीकृष्ण शरणमम, श्रीकृष्ण शरणमम्** अब कब शरणमम हुवा और कब श्रीकृष्ण गये पता ही नहीं चलेगा! ऐसी नींद आती है

यह क्या है? चितनकी पक्रिया द्वारा निद्रामें जानेका एक प्रकार है बहुत सारी प्रक्रियायें योगनिद्राकी जो बतानेमें आती है वैसीकी वैसी यही प्रक्रिया बतानेमें आती है कि तुम्हे नींद नहीं आती हो तो क्या करना? पहले अगूठेका ध्यान धरो, फिर एडीका ध्यान धरो, फिर घुटनोंका ध्यान धरो, पेटका ध्यान

धरो, छातीका ध्यान धरो, माथेका ध्यान धरो, माथेके अन्दरका ध्यान धरो, फिर भीतर जाओ, फिर बाहर आओ चार पांच बार तुमने अन्दर बाहर किया तो नींद आ जायेगी क्योंकि चिंतन करनेकी शक्ति तो है नहीं इसलिये नींद आ ही जाती है, चिंतनकी प्रक्रियासे भगवानका नाम लो, नाम लेते लेते नींद आ जायेगी कोई बहुत परेशान हो गया हो तो गोलीसे ही नींद आती हो तो यह एक अलग कथा है तो यह एक प्रक्रिया है पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टमकी समाधि लगानेकी जिसे शुद्ध सात्त्विकी निद्रा कह सकते है यह निर्विषय चिंतन है चिंतनको निर्विषय किस प्रकार बना सकते है? कोई भी एक विषय पकड लो जब भी तुम दस विषयोंका ध्यान करते हो तब तुम्हें जागृत रहना पडता है लेकिन एक विषयका ध्यान धरो बस ठाकुरजीके चरणारविन्दका ध्यान धरो चरणारविन्दही जरूरी नहीं हैं अपने लडकेका ध्यान धरो, थोडी ही देरमे नींदका झोका आने लगेगा क्योंकि मनका स्वभाव ऐसा नहीं है कि एक विषयका ध्यान धरे एक विषयका ध्यान जब हम धरते हैं तो मनको ऐसा सिग्नल मिलता है कि अब कुछ आशा नहीं है केस निराशासे भरा है अर्थात् मनको नींद आ जाती है अतएव हमको भी नींद आ जाती है, क्योकि मनकी बनावट ऐसी चचल है कि यह देखू कि वह देखू, यह करू कि वह करू, यह सब फेसिलिटी देनेके बाद नींद आनेका प्रश्न ही नहीं रहता जबकि एक विषयमें तुम मनको केन्द्रित करना चाहते हो और मन कहता है कि यह सब होपलेस सिच्यूऐशन बन गई है किसीकी भी जब ऐसी स्थिति आती है तो तुरत चिंतन तुम्हें समाधिकी ओर धकेल देगा प्रभुने यह सामर्थ्य प्रत्येकको दी है प्रवाहमार्गमे भी यह सामर्थ्य है अतएव पुष्टि प्रवाह मर्यादा इन तीनोमें यह सामर्थ्य समानरूपसे उपलब्ध है लेकिन मर्यादामे योगसमाधिकी प्रक्रिया है जाग्रत रहकर निद्रा अर्थात् इन्वोलेन्टरी स्लीपसे अलग एक वोलन्टरी स्लीप वोलन्टरी अर्थात् इच्छापूर्वक लायी गई नींद और अनिच्छासे आती नींद वह सामान्य नींद लेकिन योगने ऐसी

ऐसी प्रक्रियायें खोज ली हैं कि जिन प्रक्रियायोंके कारण तुम इच्छासे नींद को ला सकते हो और इस इच्छा द्वारा लाई गई नींदको योग **निर्विकल्प समाधि** कहता है तुम जाग्रत रहकर नींदको ला सकते हो इच्छासे यह मर्यादामार्गीय पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम् है चितनमें से एकदम निश्चित होनेके लिये

**सविषय चिंतन**

उसके अतिरिक्त सविषय चिंतनकी भी एक प्रक्रिया है यह भी ध्यान देने लायक है कोई ऐसा विषय कि जिसमें किसीको कोई उपदेश या आदेश नहीं है हरेककी अपनी अपनी रुचि इसमें काम करती है, उदाहरणार्थ तुम गाओ, तुम नाचो, पेन्टिंग करो, क्रिकेट खेलो तो उसमें एक प्रकारकी समाधि लग जाती है जिस विषयमे हमारा अतिशय रुचिवाला अभिगम होता है. जिस विषयसे हमारे सिप्पथैटिक सिस्टम् और औटोनोमस सिस्टम्को कोई लाभ मिलता नहीं है हम पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्के ऊपर जाकर ऐसा डिसाईड कर लेते है कि अब मुझे क्रिकेट खेलनी है तो फिर एक प्रकारकी समाधी लग जाती है चाहे कोई भी धूमधडाका होता हो, बंदूके चलती हो लेकिन अगर मनुष्य खेलता हो तो खेलता रह सकता है कोई पेन्टिंगमें मस्त हो तो पेन्टिगमें मस्त रह सकता है

पिकासो नाम आप लोगोंने सुना होगा फ्रान्सकी राजधानी पेरिसके ऊपर जब बोम्बार्डमेन्ट हो रहा था तब उस समय पिकासो चित्र बना रहा था, एकदम अपनी मस्तीमें और जब बोम्बार्डमेन्ट पूरा हो गया और पेरिस जर्मनीके आधीन हो

गया तब वहा जर्मन सैनिक हाउस टू हाउस सर्च करते हुवे आये पिकासोके घर भी आये और पूछा **तुम कौन हो?** इसने कहा **मैं चित्रकार हू** सैनिको ने पूछा **यह चित्र किसने बनाया है?** पिकासो ने कहा **यह चित्र तुमने बनाया!** वास्तवमें अगर आप चित्रको देखो तो ही ध्यानमें आयेगा मेरे कहनेसे आपको ध्यानमें नहीं आयेगा कि बोम्बार्डमेन्टकी जो क्रूरता पिकासोने समाधीमें अनुभूतकर चित्रके रूपमे पेश की है गुआर्निका नामका चित्र देखोगे तो इतना क्रूर लगेगा जैसे कि सारे शहरमें बोम्बार्डमेन्ट हो रहा है चित्र निर्माण भी एक प्रकारकी समाधि सिद्ध करा सकती है पिकासोने ना कर दिया कि मैंने नहीं बनाया, तुमने बनाया है क्योंकि शहरके ऊपर अत्याचार पिकासो नहीं बल्कि जर्मन सेना बोम्बार्डमेन्टके द्वारा कर रही थी जैसे दर्पण अपने सामने हो और प्रकाश आता हो तो वह रिफ्लेक्शन प्रकट कर देता है ऐसे ही जर्मन सेना बोम्बार्डमेन्ट कर रही थी तब चित्रकार पिकासो केवल एक दर्पणका काम कर रहा था जो कि गुआर्निका पेन्टिगमें रिफ्लेक्ट हुवा

इसमें सहज समाधि जैसी सिद्धि हो जाती है ऐसे ही खेलमें, कलामे, सामान्य रीतिसे प्रत्येकमे समाधि खिलती है कितने खेलनेवाले इस बातको अच्छी तरहसे समझ सकते हैं कि हड्डी टूट जाय, फट जाये लेकिन चाहे खेलनेवाले हों या युद्ध करनेवाला हो वह तो खेल या युद्ध चालू ही रखता है सौ सौ पचास पचास साठ साठ घाव शरीरपर लगे हो तो भी लडनेका अगर मौका आया तो शूरवीर तो लडता ही रहेगा यह भी एक प्रकारकी समाधि ही है लेकिन यह सविषय समाधि है सक्रिय सविषय समाधि है ऐसी समाधि फिर प्रवाह मर्यादा कि पुष्टि तीनोंमें हो सकती है इस बातको भूलना नहीं चाहिये

इनके अतिरिक्त इस प्रकारकी समाधि शास्त्रमें जो साधनायें दिखानेमें आई हैं जप, तप, उपासना, ज्ञान, योग,

वैराग्य, सन्यास इत्यादिमें भी, ऐसी क्रीडात्मिका समाधिमें कोई भी मनुष्य तन्मय हो सकता है

जैसे महावीरकी जीवनीमें आपने पढा होगा या सुना होगा कि महावीर समाधि लगाकर बैठे थे तो ग्वालेने आकर इन्हें कहा **मेरी गायोको सम्हालना.** महावीरने तो सुना नहीं और ग्वाला चला गया बादमें गायें कहीं चली गई, और ग्वाला आया, और इसने देखा कि मेरी गायें कहा चली गई? महावीर तो सुन नहीं रहे थे समाधिके कारण अतएव इसे ऐसा लगा कि यह तो महान पाखण्डी आदमी है, गाय चुरा ली अतएव इसने महावीरके कानमें काटे भर दीये लेकिन महावीर स्वामी फिर भी ऐसे ही बैठे रहे क्योंकि एक तपकी समाधि इनको लग गई थी ये बेखबर नहीं थे, बेहोश नहीं थे, लेकिन अपने तपकी समाधिमें इतना अधिक होशमें थे कि दूसरा और कोई होश इन्हें नहीं था जैसे खेलनेवाला मनुष्य, एक युद्ध करने वाला योद्धा, युद्धमे कि खेलमें इतना अधिक होश प्राप्त कर लेता है, जैसे पिकासोने इतना अधिक होश अपनी पेन्टिगके क्रियेशनमें प्राप्त कर लिया था कि उसे पता ही नहीं चला कि यह साराका सारा पेरिस कब ध्वस्त हो गया पेरिस सरेन्डर हो गया और अन्दर वह कमरेमें बैठा बैठा पेन्टिग कर रहा था इसे भागनेकी इच्छा नहीं हुई कोई घबराहट भी नहीं हुई इसे बोम्बाईमेटकी आवाजे सुनाई दे रही थी और इसकी पेन्टिग चालू थी बहुत महान पेन्टिग है वैसे ही कभी शास्त्रीय कर्मकी भी समाधि लग सकती है जिसे हम कर्म समाधि कहते है ज्ञानसमाधि कहते हैं, तप समाधि कहते हैं वैराग्यसमाधि कहते है, यह सब समाधि सविषय होती हैं

## <u>नवरत्नके उपदेश द्वारा पुष्टिमार्गीय सविषय समाधिसे चिंताका उद्वान्तीकरण</u>

उसके ही समानान्तर अपनी पुष्टिमार्गीय समाधिके स्वरूपको समझो हमारे यहा सेवा, कथा, यात्रा शरणागतिकी

प्रक्रियामें ऐसी समाधि हम भी प्राप्त कर सकते हैं कि हमें पता ही न चले कि बाहर क्या हो रहा है कौन आ रहा है? कौन जा रहा है? उनका विचार हमें नहीं आये तो यह अपनी कथा सेवा, यात्रा, शरणागतिमें प्राप्त हुई एकाग्रता भी एक सविषय समाधि बन जाती है यह सविषय समाधि जिसको प्राप्त होती है वह चिंताको तुरन्त समाप्त कर देती है क्योंकि यह समस्त वस्तुये पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्के स्तरपर होती हैं सिम्पथैटिक सिस्टम्में यह नीचे उतर सकती हैं सिम्पथैटिक सिस्टम्से शुरु नहीं हो सकती प्रभु चाहें तो करा सकते हैं लेकिन जीवकी सामर्थ्यमें यह बात नहीं है अतएव चिंतारूप व्यवसायज्ञानको अपनेको समझना हो तो - **रुशयोऽथ विपर्यासो निश्चय स्मृतिरेव च। स्वाप इत्युच्यते बुद्धेर्लक्षण वृत्तित पृथग्।।**

अतएव सशयात्मक चिंता, निश्चयात्मक चिंता, स्मृतिरूप चिंता, भ्रमणात्मिका चिंता, स्वाप्निक चिंता, ऐसी बहुतसी चिंताओका स्वरूप हमारे यहा हो सकता है वे कितनी कितनी चिंतायें है वह अपने पुष्टिमार्गीय सदर्भमें जब चिंताओंका इस प्रकार वर्गीकरण एवं विश्लेषण करे तो हम पता चलेगा कि किन किन चिंताओंका इलाज किस किस चिंतनसे हो सकता है यह जो चार्ट मैंने तैयार करके आप सबको दिया है, मुझे लगता है कि आज तो अब चान्स नहीं मिलेगा लेकिन कल हम जरूर इस विषयपर बात करेंगे स्मृतिसे प्रकट हुई चिंता अथवा स्मृतिसे प्रकट हुवा इसका चिंतन, सशयसे प्रकट हुई चिंता अथवा तुम्हारे भीतर एक ऐसी पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम् खड़ा कर देगी कि जिससे ऐसा सशय होने लग जाये कि **चिंतोद्वेग विधायापि हरि. यद्यत् करिष्यति तत्तैव तस्य लीलेति मत्वा चिंता द्रुत त्यजेत** (नवरत्न - ८)

पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्पर महाप्रभूजी तुम्हारे अन्दर एक सशय उत्पन्न कर रहे हैं कि तुम कोई निर्णय ले क्यो लेते

हो! प्रत्येक समय एक संशय रखो कि भगवान् क्या करना चाह रहे हैं? हमे क्या पता चलेगा? अतएव तुम चिंताके ऊपर काबू पा सकते हो अतएव कभी स्मृतिसे उत्पन्न होती चिंता, कभी निश्चयसे उत्पन्न होती चिंता, कभी भ्रमसे उत्पन्न होती चिंता, कभी स्वप्नसे होती चिंता, इनका कभी स्वप्नसे इलाज है, कभी संशयसे इलाज है **निवेदनम् तु स्मर्तव्यम्**में स्मृतिके उपायसे चिंताका इलाज है चिंतनमे पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्के स्तरपर ले जानेका सारा अभिगम महाप्रभुजीने स्वीकारा है अतएव एक केवल मानसशास्त्रकी दृष्टिसे महाप्रभुजीके उपदेशकी प्रणालीका तुम विश्लेषण करो तो हैरान रह जाओगे कि अपना आचार्य कैसा है! इसने मनुष्योंके मानसकी कितनी सावधानी रखी है! एक एक माइन्यूट् विदरणके साथ हमे इसकी खबर कब पड़ेगी कि जब हम इस चार्टको देखेंगे अतएव चिंताका यह सारा प्रकरण आखिरमें किस कारण खड़ा हुवा? इस कारण कि हमने समर्पण किया है समर्पण किया है किसलिये? तो भोगके ऊपर काबू पानेकेलिये भोगके ऊपर काबू पानेकी प्रक्रियामें चिंतन प्रकट न होकर चिंता प्रकट हो सकती है चिंता प्रकट हो सकती है तो उसके कारण हम कहीं टूट न जाये, उसके कारण हम खत्म न हो जाये महाप्रभुजीने चिंताका चिंतनमें उद्गतीकरण करनेकेलिये नवरत्नका उपदेश दिया है

समर्पणके बाद भगवत्सेवा करते हुये प्रकट होती प्रतिक्रिया चिंता अथवा चिंतनके दोनोंके रूपमें हो सकती है अगर हमने समर्पण नहीं किया हो तो जो हमारी भक्ति है वह पुष्टिभक्तिके रूपमे फलित नहीं होती भगवत्सेवामें पुष्टिमार्गीयता लानेकेलिये प्रभुकी सेवा समर्पणपूर्विका होनी आवश्यक है जैसे सिद्धान्तरहस्य ग्रन्थमें समझानेमें आया है कि **निवेदिभि. समर्प्यैव कुर्यादिति स्थिति.** तो यह समर्पणपूर्विका सेवा जो हम अगर अच्छी तरहसे निभा नहीं सकते तो महाप्रभुजी, सेवाया वा कथाया वा ऐसे एक अनुकल्पके तौरपर कथाको बादमे लाते है

जो समर्पणपूर्विका सेवा नहीं करता तो उसकी भक्तिको पुष्टिभक्तिके तौरपर खिलनेकेलिये एक कठिन कोर्स बन जाता है अतएव महाप्रभुजीने **गृहेस्थित्वा स्वधर्मत: अव्यावृत्तो भजेत् कृष्णम् पूजया श्रवणादिभि** के ऊपर भार दिया है क्योंकि तुम समर्पणपूर्वक सेवा करोगे पुष्टिभक्तिको खिलानेके लिये तो तुम्हारे अन्दर रही हुवी सृजनात्मकशक्तिको तुम्हारा पूरा पूरा लाभ मिलेगा नहीं तो कदाचित तुम्हारे अन्दर किसी प्रकारका फ्रस्ट्रेशन है क्योंकि तुम्हारी सृजनशक्ति सेवाकी प्रक्रियाके बिना कुठित हुई तो कथाकी प्रक्रियामे सृजनशक्तिको फिरसे प्रकट करना बहुत मुश्किल काम है ऐसा कठिन कार्य होनेके कारण महाप्रभुजी सेवाको इतनी प्राधान्यता देते हैं अतएव समर्पणपूर्विका सेवा जो नहीं करता उसे पुष्टिभक्तिको खिलानेमें किसी प्रकार की कठिनाई होती है थोडासा कोर्स मुश्किल हो जाता है

<u>समर्पणपूर्वक सेवा करनेवाले भक्तको निश्चिंत होना जरूरी</u>

जो निश्चिंत होकर भक्ति नहीं करता उसे भक्ति सिद्ध ही नहीं होती भक्तिकी पहली शर्त है निश्चिंतता समर्पणसे भी किसी अर्थमें नैश्चिंत्य बहुत बढकर महत्वपूर्ण कदम है पुष्टिमार्गमें अगर तुम निश्चिंत नहीं हो तो फिर तुम भक्त बन ही नहीं सकते क्योंकि चिंता आखिरमें तुम्हारी किस वस्तुको हानि पहुचायेगी? सेवाको हानि नहीं पहुचाती, चिंतामें परायण रहकर तुम सेवा कर सकते हो लेकिन जो तुम्हारा चित्त चिंतामें परायण है तो यह भक्तिमय चित्त नहीं होगा चिंतामे तल्लीन चित्त भक्तिमय नहीं होता, सेवा तो शरीरसे होती है, कर सकते हैं लेकिन जैसे बैलगाडीमे हम बैलको जोड देते हैं तो यह चलता है ता उसी प्रकार तुम भी बैलकी तरह सेवामें चल सकते हो लेकिन जो सेवाको भक्तिके स्तरके ऊपर खिलाना हो तो पहली शर्त है निश्चिंतता

चिन्ता कापि न कार्या निवेदितात्मभि कदापीति।

भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्।।

अतएव निश्चित होना तुम्हारी सेवाको, तुम्हारी कथाको, तुम्हारी शरणागतिको, तुम्हारी यात्राको, पुष्टिभक्तिके रूपमे खिलानेकेलिये पहली शर्त और आखिरी शर्त है निश्चित हैं तो यह सब हो सकता है और चिंता सहित इसमेंसे कुछ भी किया तो कुछ न कुछ गडबड खडी रहनेवाली ही है और रहेगी ही इस संसारको हम भवसागर कहते है हमारे यहां जब बरसात पडी थी तो तुमने अखबारमें पढा होगा कि मरीनड्राईवके किनारेपर से एक लडकी जा रही थी तो समुद्रमें से एक ऐसी लहर आई कि उसे उठाकर समुद्रमें ले गई किनारेसे एक डेढ किलोमीटर दूर उसे हेलीकॉप्टरसे उठाना पडा इसी प्रकार हम इस संसारसागरके बीचमे अगर हो तो भी निश्चित अगर होंगे तो कोई एक लहर हमें पुष्टिभक्तिके किनारेपर पहुचा सकती है जैसे हेलीकॉप्टरने उसे फिरसे किनारे पहुचा दिया और अगर हम पुष्टिभक्तिके किनारेपर भी चिंता करते बैठे रहेंगे तो जैसे पहले किनारेपर से लडकीको जिस प्रकार लहर समुद्रके भीतर खींच ले गई थी उसी प्रकार हम फिरसे भवसागरमें डूब सकते हैं इसी कारण सिद्धान्तरहस्यके बाद नवरत्न ग्रंथ चेतावनीके रूप में है भक्ति करते करते भी कोई लहर ऐसी आ सकती है कि भवसागरमेंसे, अर्थात् तुम्हारी कामकी मनोवृत्तिमेंसे तुम्हारे क्रोधमेसे तुम्हारे उद्वेगमेंसे, कोई एक ऐसी लहर आ सकती है

वार्ता साहित्य ऐसी बातोसे भरा पडा है नंददासजीको किसी सुन्दरीके प्रति कामभावनाकी जो लहर जागी तो उसको गुसाईजी तलक घिसटा कर ले गई अतएव भवसागरमें उभरती लहर भी कभी कबाद जीवात्माको, पुष्टिबीजभाव हो तो,

पुष्टिभक्तिके किनारे फैंक देती हैं शर्त केवल इतनी कि तुम निश्चित रहो

चिन्ता कापि न कार्या निवेदितात्मभिः कदापीति।

भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्।।

सुखदुःखादिके आवर्तनसे जीवनकी जीवतता

हम सब अच्छी तरहसे जानते हैं कि पृथ्वी सूर्यके चारो ओर घूमती हैं उसके कारण गरमी और बरसातके ऋतुचक्रका आवर्तन चलता रहता हैं दिन और रातका, निद्रा और जागरणका आवर्तन चलता ही रहता हैं जब हम जागते हैं तब विषयोंके साथ हमारी इन्द्रियोका आकर्षण अथवा अपकर्षण होता है अर्थात् किन्हीं विषयोंके प्रति इन्द्रिया आकृष्ट होती हैं और किन्हीं विषयोके साथ इन्द्रिया अपकृष्ट हो जाती हैं और उन विषयोंके प्रति हमारी इन्द्रियोमें रहे हुवे आकर्षण या अपकर्षणके कारण हमारी इन्द्रियोंमें कभी उत्तेजना अथवा उदासीनताका चक्र चलता रहता है उस उत्तेजना अथवा उदासीनताके कारण जो विषय हमे उत्तेजित करता है उसमें हमारा किसी प्रकारका स्नेह बध जाता हैं जिस विषयसे हम उदासीन होते हैं तो उस विषयसे हमे किसी प्रकारका डर लगने लगता है उसके कारण आशा निराशाका चक्र चलता है इन विषयोके सम्पर्कके कारण हमे अन्तमें कोई न कोई सुख अथवा क्लेश होता रहता है जब क्लेश होता है तो उसे हम दुःख, उद्वेग ऐसे नाम देते हैं उसीके अनुसधानमें कल मैंने यह बात समझाई थी कि काम और क्रोध यह हमारे विषयोंको देखनेके मूल हैं उदाहरणतया कोई छोटी वस्तु देखनी हो तो हम आईग्लास प्रयोग करते हैं दूरकी वस्तु देखनी हो तो हम दूरबीनका प्रयोग करते हैं उसी प्रकार किसी भी विषयको देखनेकी हमारी जो दृष्टि हैं उसमें काम, क्रोध रहा हुवा है यह जो मैंने व्यवस्था समझाई है आकर्षण, अपकर्षण,

उत्तेजना, उदासीनता, स्नेह, डर, आशा-निराशा, इन सबके कारण हमको सुख दुख होता है और उस प्रकार उनका आवर्तन चलता रहता है एक बात समझो, गणितके हिसाबसे कौम्बिनेशन और पर्म्युटेशन करने हो तो कितने ही उदाहरण बनते हैं उन्हें हम देख सकते हैं भाग और गुणा करके यह जो साइकल है, यह जो आवर्तन है, यह बहुत ही कौम्प्लिकेटेड रूप बन जाता है यह होते हुये भी वह आवर्तन ऐसा नहीं है कि इसके सारे पहलू हम देख न सकें भाग गुणा करके जितनी सम्भव वेरायटिस् बन सकती हैं उन सबको हम गिन सकते है उसी प्रकार जो चक्र चलता रहे तो सारा जगत अंतमें इस निद्रा और जागरणके चलते आवर्तनों, सुखदुखके आवर्तनोंके किसी न किसी यन्त्रकी प्रक्रिया बन जाते है मैकेनिकल प्रोसेस बन जाते हैं और जो मैकेनिकल प्रोसेस बन जाते है, यत्रवत यह सब आवर्तन चलते रहें तो हम अच्छी तरहसे समझ सकते हैं कि ऐसे चलते आवर्तनमें जीवन कहा है? यह खोजना बहुत ही मुश्किल हो जाता है

एक सामान्य उदाहरण तुम्हें देता हू कोई अमेरिका जाता हो ग्रीन कार्ड लेकर वहा बसनेके लिये अथवा कोई मर ही जाता हो, तब हमें पता नहीं चलता कि अब फिर मुलाकात कब होगी अतएव साधारणतया हमें रोना आ जाता है दिलकी लगन छलक जाती है गला भरभरा जाता हैं ऐसी बहुतसी तकलीफ होती है छोटे बच्चेको स्कूलमें भेजना हो, तो सबसे पहले हम उसे स्कूल ले जाते हैं उसके बाद किंडरगार्डन हो कि नर्सरी हो बच्चा बहुत ही रोता पीटता है किस कारण? क्योंकि इसे पता ही नहीं चलता कि उस वातावरणमेंसे उसे अलग क्यों किया जा रहा है? लेकिन महीना, बीस दिन ऐसा चक्र जब बराबर चलता है तो बच्चेको एक ऐसा आश्वासन मिल जाता है कि स्कूल तो जाना ही है और शामको घर वापिस भी आना है और इसमें रोने जैसी कोई बात नहीं है

हमें जब नींद आती है तब कोई हमें विदा दे कि हमें भूल नहीं जाना तुम सोने जा रहे हो हमारी याद भुला नहीं देना ऐसे कोई रोता है! गुड नाईट कहते समय कोई क्यों नहीं रोता? क्योंकि निद्रा और जागरणका आवर्तन चलता रहता है यह कहीं अटके तो रोने जैसी बात है, यन्त्रकी तरह चलती रहे तो हरेकको इसमें विश्वास हो जाता है कि हम सो रहे हैं, सुबह फिर उठ जायेंगे सुबह उठे हैं तो रात को सोयेंगे तो जब भी यत्रवत् कोई क्रिया चलती होती है तो फिर इसमें जीवन देखना हमको लगता नहीं जैसे यह पखा चल रहा है तो क्या कोई पखेको चेतन कहेगा? किस कारण चेतन नहीं कहेगा? क्योंकि चल रहा है यत्र की तरह, इसमें कोई चेतन होनेका हमें कारण लगता नहीं कि चेतन कहासे आया? तो जीवन कहासे आये? इस चक्रके एक एक पहलू है और इन एक एक पहलूओंमे जब कुछ फ्लक्च्युएशन आती है और फ्लक्च्युऐट होनेपर ही फिरसे दूसरा पहलू आता ही है शौर्टर कि लौंगर कोर्समे, यह कोर्स जब अन-प्रेडिक्टेब्ली साइक्लिकली चलता है तब हमें लगता है कि यह जीवन है यह वस्तु जीवत है बाकी प्रेडिक्टेबल टाइममें एक पहलू जाता है तो दूसरा आता है, दूसरा जाता है तो पहला पहलू फिरसे आता है इस प्रकार यह आवर्तन चलता रहता है तो हमें यत्रकी तरह बोध हो जाता है जीवतताका बोध नहीं होता थोडीसी इसमें अन-प्रेडिक्टेब्लिटी आये कि हम जानकर भाग न सके कि क्या होने जा रहा है? तब हमें लगता है कि कुछ जीवित जैसा लग रहा है क्योंकि यह क्या करने जा रहा है हम कुछ कह नहीं सकते जैसे घड़ीमें हम प्रेडिक्शन कर सकते हैं भले ही हमें घटेकी सुई चलती नहीं दिखती हो लेकिन घडी तो चल ही रही होती है सेकन्डका या मिनटकी सूई चलती देख कर हम यह निर्धार कर लेते है कि घडी चल रही है, भले ही घटेकी सुई न चलती दिखती हो तो भी एक घटेमें एक नम्बरसे दूसरे नम्बर पहुच ही जायेगी ऐसे ही भविष्य भी हम

कह सकते है यह भविष्य बतानेकी हमारी शक्ति कम पड जाये तो घडीके डायलको देख कर हमें ऐसा लगेगा कि इस घडीमे कोई भूत भरा है अब भूत किस प्रकारका है यह तो घडी जाने या उसे रिपेयर करने वाला लेकिन फिर हमें यत्रकी यात्रिकतापर विश्वास नहीं रह जाता यत्रकी यात्रिकता तब निभती है कि जब यह कोर्स इसका प्रेडिक्टेबल हो तो ही यह कोर्स प्रेडिक्टेबल नहीं रहा तो फिर यत्रकी यात्रिकता नहीं निभती

एक सामान्य बात तुम्हें बताऊ इस आधुनिक खगोलशास्त्रानुसार कितने ही ग्रह-पिंड, जीवित पिंड है और कितने ही मृतपिंड है इनकी मूल गणनाका आधार जीवित है कि मृत है, यह इसी बातके ऊपर निर्भर करता है जिन पिंडोमें ऐसी कोई फलक्च्युऐशन कि वातावरण बताता हो वहा जीवंतपना है और जो मैकेनिकली एक दूसरेके ऊपर चक्कर मार रहे होते है वह सब मृतपिंड है ज्योतिषी लोग ऐसे बहुतसे मृतपिंड एव जीवित पिंडोका तारतम्य हमें खगोलशास्त्रमें समझाते है हम अच्छी तरहसे जानते हैं कि ऋतुओके चक्रका आवर्तन हमारे यहा चलता रहता है लेकिन एक बात ध्यानसे समझो कि ऋतुचक्रका आवर्तन चलता रहता है, गरमी पडती है तो हमें पता है कि बरसात पडने वाली है तो यह हो गया मेकेनिकल चक्र मोटे तौरपर जितनी भविष्यवाणीकी जाती है, इनके विपरीत भी बरसात पडती है अथवा नहीं पडती तो यह प्रमाण है कि पृथ्वी जीवित है किसी समय बरसात देरसे पडती है, तो गरमी ज्यादा पडती है हाय हाय हो जाती है हम लोगोंको, बरसात पडती है तो चारों ओर कितना आनन्द छा जाता है लेकिन अगर दो तीन महीनेसे ज्यादा बरसात पडती है तो बरसातसे भी हम परेशान हो जाते है उद्वेग चालू हो जाता है, परेशानी होती है तो ऐसे चलते आवर्तनोंमे कोई फलक्च्युऐशन आती है तो कुछ यंत्रवत नहीं चल रहा लेकिन कुछ जीवतवत

चल रहा है, इसका हमें भान होता है अच्छी बरसात पडे, बाढ आ गई तो हमें लगता है कि चारो ओर विनाश व्याप गया, लेकिन इस विनाशके कारण भूमिकी उर्वरा शक्ति फिरसे बढ गई और जो हमें विनाश नजर आ रहा हैं इसमे से फिर सृजनके अकुर फूटने लगते हैं अतएव हमें लगता है कि पृथ्वी एक जीवितपिंड है, मृत पिंड नहीं घडीकी सुई की तरह यह नहीं चल रही अपनी किसी शक्तिके कारण चल रही है कभीतो विनाश करती है और कभी उसीमे से सृजन करती है

जो सृजनकी प्रक्रियायें हैं उनमें कुछ विनाशकी प्रक्रियायें भी छुपी हुई मिलती है विनाशकी प्रक्रियामें भी कोई सृजनकी प्रक्रिया छुपी हुई मिलती है इनकी साइकिल चलती रहती है लेकिन इनके बीच जो फ्लक्च्यूऐशन है वह फ्लक्च्यूऐशन पृथ्वीके जीवितपिंड होनेका प्रमाण बन जाता है मशीनकी तरह जो चलता रहे उसे हम निर्जीव मशीनही कहेगे जीवित पिंड नहीं जीवनमे भी ऐसे बहुत से चक्र हैं, जागने-सोनेके, सुख-दु खके, राग-द्वेषके, यह सब जो मेकेनिकली चलते होते तो हम भी एक चलते फिरते रोबोट होते क्योंकि हमारा रिस्पोन्स तो निश्चित होता कि ऐसे होगा तो ऐसा होगा, कोई गाली देगा तो लप्पड मारेंगे यह मेकेनिकली निश्चित है लेकिन कोई गाली दे और कोई लप्पड न मारे और अन-प्रेडिकटेबली कोई लप्पड मारे और कोई सामने गाली दे, कोइ गाली दे तो सिर नीचे करके चला जाये कितने सारे पोसिबल फ्लक्च्यूऐशन हैं रिस्पोन्सके इसमें। इससे सिद्ध होता है कि व्यक्ति जी रहा है हमारे यहा तुमने एक खिलौना देखा होगा, एक तोता बैटरीका इसके सामने जो कोई कुछ बोले तो उसे यह रिपीट करता है मेकेनिकली अब यह रिपीट कर सकता है लेकिन जो तुम बोलो उसे अपने मनसे रिपीट नहीं कर सकता इसमें किसी प्रकारकी फ्लक्च्युऐशन नहीं आती बशर्ते इसकी बैटरी डिस्चार्ज न हो गई हो अभी तक मैंने यह नहीं देखा कि बैटरी डिस्चार्ज होनेके

बाद भी यह किस प्रकार रिस्पोन्स देता है लेकिन कोशिश करके देखी जा सकती है थोडीसी फ्लक्च्युऐशन आयेगी लेकिन बहुत अधिक नहीं अन-प्रेडिक्टेबल हो जाये ऐसे कि हम बैटरीवाले तोतेके सामने तोता बोलें और अचानक यह कहे मैंस तो हमें लगे कि इसमें कोई प्रेतात्मा घुस गई लगती है अब यह बैटरीसे काम नहीं कर रहा लेकिन हम तोता बोलें तो और यह भी तोता बोले, हम हाउ आर यू बोलें तो सामने से वह भी हाउ आर यू मेकेनिकली रिपीट करे तो हमें लगता है कि इसमे कुछ जीवतपना नहीं है जो कुछ भी एक क्रियाकी प्रतिक्रिया प्रकट कर रहा है लेकिन थोडी सी फ्लक्च्युऐशन होने लगे अतएव फिर हमें जीवतताका प्रमाण मिल जाता है

## जीवनके लचीले स्वभाव (अन्-प्रेडिक्टेबल फ्लक्च्युऐशन) से उद्वेगका उद्भव

कोई वस्तु जीवत है उसका प्रमाण सर्वथा इसमें किन्हीं नियमोंका आवर्तन नहीं है ऐसा मत समझ लेना लेकिन नियमोंका जो आवर्तन है उसका अथ ऐसा भी नहीं है कि नियमोंके आवर्तनके बीचमें किसी प्रकारकी फ्लक्च्युऐशन न हो फ्लक्च्युऐशन तो होगी ही इन दोनोंका जब समाहार होता है तब जीवतपनेका हमको प्रमाण मिलता है तो सुख-दुःखके, राग-द्वेषके, निद्रा-जागरणके, या चिंता-चिंतनके जो आवर्तन है यह हमारे अन्दर मेकेनिकली नहीं चलते परन्तु जीवत प्रकारसे चलते हैं जीवत प्रकारसे चलते हैं अर्थात् इसमें कोईभी एक फोर्सका दूसरा जो उपाय है वह फिक्स् नहीं हो सकता कोई न कोई अन-प्रेडिक्टेबल फ्लक्च्युऐलिटी इसमें होती है लेकिन फ्लक्च्युऐशन इतनी अधिक नहीं होती कि हम पूरे तौर पर अन-प्रेडिक्टेबल हो जाये और इतना अधिक मेकेनिकल रिस्पोन्स भी फिर नहीं होता कि सौ प्रतिशत हम प्रेडिक्शन कर सकें जीवनका स्वभाव इतना लचीला हैं, फ्लेक्सिबल है यह बात हमें समझनी पडेगी सबसे पहले, लचीला स्वभाव जीवनका न हो तो

मनुष्यको कभी भी उद्वेग होगा ही नहीं, कभी मनुष्यको चिंता होगी ही नहीं, क्योंकि प्रत्येक उद्वेगके पीछे इसे पता चलता रहता है कि **चक्रवत् परिवर्तन्ते दुःखान्यपि सुखानि च**. इस दुःख और सुखका चक्र अगर मेकेनिकली चलता हो तो कौन दुःख करे! क्योंकि हमें पता है कि दुःखके पीछे सुख आयेगा और सुखके बाद दुःख आयेगा ही अगर मेकेनिकली आता हो तो इसमें दुःख करने जैसा कुछ रह नहीं जाता जैसे मेकेनिकली निद्रा और जागरण आते हैं उसमें रोने जैसी कोई बात नहीं होती कोई शोकसभा नहीं करता कि अब सर्वानुमतिसे प्रस्ताव पास करनेमें आता है कि फलाना भाई अब सोने जा रहा है! क्योंकि मेकेनिकली जाग और सो रहा है लेकिन कभी फ्लक्च्यूऐशन आ गई कि सो गया और सुबह उठाओ तो उठता ही नहीं, फिर तो शोकप्रस्ताव पास करना ही पडेगा सर्वानुमतिसे सगे सम्बन्धियोंको रोना भी आयेगा कि रातको सोने गया था क्या हो गया पता ही नहीं चला अर्थात् जीवनमें ऐसी फ्लक्च्यूऐशन होनी जीवतताकी निशानी है जन्ममरणका चक्रको हम अनुभव नहीं कर सकते अतएव हम बहुत उद्विग्न हो जाते हैं लेकिन ऋषि - आचार्य जैसे महापुरुष हों तो ये जीवन और मरणको भी जागरण और निद्राके चक्रकी तरह देख सकते है इनकी दृष्टिकी विशालताके कारण इनको उद्वेग नहीं होता जैसे कबीर कहता है कि **जसकी तस धर दीनी चदरिया**. अर्थात् खेलनेवाले ने जीवन जीनेके लीये शरीररूपी जो चादर मुझे दी थी मैंने वैसेकी वैसे ही अन्तमे रख दी मुझे इसमें कुछ उद्वेग नहीं हुता

**भक्ति चिंताको सहन नहीं कर सकती**

श्रीआचार्यचरण भी ऐसा ही कहते है **तथा देहे न कर्तव्य वरं तुष्यति नान्यथा**. यह कहना सरल है करने जाओ तो बहुत कठिन लगता है हमको ऐसी बात हम आचार्यचरणके बारेमे विचारें तो तुरन्त हमारा सिर नीचा हो जायेगा कि आचार्यचरणने भगवदाज्ञाको अनुसरनेमें कितनी तत्परता दिखाई! आचार्यचरणको जो इस भूतलपर बिराजनेका अथवा नित्यलीलामें

पधारनेका जो चक्रवत् लगता, पोढने अथवा जागनेकी क्रियाकी तरह, तो कोई शोक होता ही नहीं उद्वेग होता ही नहीं जैसे बालकको भी पहली बार स्कूलमे जाते बहुत ही उद्वेग हो जाता है जब बच्चेको समझ पडती है कि आखिरमें यह तो चक्रवत चल रहा है हर रोज सुबह स्कूल जाना पडता है, शामको वापिस आना होता है तो फिर रोने जैसी कोई बात रह ही नहीं जाती ऐसे ही कोई भी उद्वेग हमें होता है इसका कोई चक्र चल रहा है, और इन चलते चक्रोमें जो फ्लक्च्यूऐशन है वह हमें रुलाती है

किसी विषयके प्रति आकर्षणमे कि किसी विषयके अपकर्षणमें हमारा मन रुक गया हो, अटक गया हो तो उसके बाद उद्वेग अब आनन्दात्मक उद्वेग कि क्लेशात्मक उद्वेग, उद्वेगका एक अर्थ जो हमको उच्चलित करे, जिस स्थितिमें हों उसमें रहने न दे वह उद्वेग, इसके बाद शारीरिक दृष्टिसे, मानसिक दृष्टिसे, पारिवारिक, सामाजिक कि आर्थिक किसी भी दृष्टिसे जो हमारी वर्तमान स्थिति है उसमे हमें स्थित रहने न दे. इस चलायमानताके कारण जो हमें उद्वेग होता है उसके कारण हमको चिंता प्रकट हो जाती है

चिंताके साथ हमें द्वेष किस कारण है? किस कारण महाप्रभुजी कह रहे हैं कि चिंता मत करो चिंता मत करो प्रमुख मुद्दा मैंने तुम्हें कल समझा दिया कि समर्पण और सेवा न करे तो भी पुष्टिमार्गमें आगे बढनेके लिये कथाभक्तिकी कुछ सभावनाये रही हुई है जो बात भक्ति सहन नहीं कर सकती वह यह कि अगर हमारेमें नैश्चित्य नहीं है तो हमारी भक्तिका मूलभाव बिखर जाता है अर्थात् समर्पणपूर्विका सेवा नहीं हो तो पुष्टिभक्ति सिद्ध होनी कठिन है लेकिन अशक्य नहीं लेकिन नैश्चित्य हमारेमें नहीं हो तो पुष्टिभक्ति कैन्सल हो हो जाती है

वन्स् एन्ड फॉर आल् चिंताका इतना अधिक महत्व है यह हमें कभी भूलना नहीं चाहिये उसी चिंताको अनुलक्षित करके महाप्रभुजी यह उपदेश दे रहे हैं मेरी जान पहचानका एक भाई था उसे ऐसा कोई फ्लक्च्यूऐशन आ गया शादी नहीं होती थी लेकिन कुछ समय बाद किसीके साथमे अफेयर हो गया यह दूसरी जातिकी लडकी थी अब तो कोई मुश्किल नहीं, आजकल तो जातपातिका कोई इतना भेद ही नहीं हैं लेकिन हुवा क्या? बार बार मुझे भी कहता कि आगे बढू कि नहीं? मैंने कहा भाई! मैं कौन कहने वाला तुम्हे? तुम्हें आगे बढना हो तो आगे बढो पीछे जाना हो तो पीछे जाओ, इसमे मैं कुछ कह नहीं सकता लेकिन उसे हरेक बातमें मेरी सलाह लेनेकी आदत, कुछ विश्वास था मेरेमें एक बार क्या हुवा कि थोडे दिन तक यह मुझे दीखा ही नहीं, मैंने पूछा क्यों भई तुम दिखे नहीं? तो बोला मुझे बुखार आ गया था कैसे बुखार आ गया? उसने मुझे कहा वह जो लडकी है ना उसके भाईने आकर मेरा कालर पकडकर मुझे कहा तुझे पता है कि मेरी बहिन विधवा हो जाये तो इसमे मुझे जरा भी तकलीफ नहीं होगी. अतएव उसे बुखार आ गया वह लडकी मिलने आई तो इस मेरे जान पहचानके भाईने लडकीको भगा दिया भाग यहासे मेरे पास आगेसे मत आना तब वह लडकी बोली मैं तो अपने भाईसे डरती नहीं तो तुम कैसे डरते हो? तो बोला अब मुझे कुछ सुनना नहीं है तू यहासे भागजा. अगर मलेरियाका बुखार आया होता तो उद्वेग हुवा होता जो टाइफाइडका बुखार आया होता तो उद्वेग होता, यह उद्वेग तो उद्वेग ही रहता लडकीके भाईने जरासा कॉलर पकडा उसके उद्वेगसे चिंता जाग गई और उस उद्वेगके बाद चिंता इतनी बढ गई कि मनपसन्द लडकीसे शादी कर लू वह तो ठीक लेकिन बादमे उसके कारण किसकी बहिन विधवा हो तो उसका क्या? इसकी चिंता बहुत सताने लगी ऐसी चिंता सताये तो फिर उसका सोल्युशन हो नहीं

सकता लडकी नहीं डर रही अपने वैधव्यकेलिये और यह भाई डर रहा है तो फिर शादी हो किस प्रकार?

अतएव चिंता स्नेहमें बाधक हो जाती है, उद्वेग बाधक नहीं होता सोचो कि टाइफाइडका बुखार आया होता, इन्फ्लुऐन्जाका बुखार आया होता, मलेरियाका बुखार आया होता और वह लडकी मिलने आई होती तो कितनी खुशी हुई होती कि तू आई तो बुखार उतर गया ऐसा भी लगता है आदमी को **तुम तसल्ली न दो सिर्फ बैठे रहो वक्त मरनका मेरे ये टल जायेगा. है ये मुमकिन मसीहाके रहनेसे ही मौतका भी इरादा बदल जायेगा.** ऐसी भ्रमणा भी देख ले लेकिन यहा तो चिंता होने लगी कि शादी करलू और लडकी विधवा हो जाये तो? इसका तो कोई जवाब नहीं है फिर

अतएव उद्वेग इसे हम सह सके ऐसी वस्तु है लेकिन चिंताको सह सकें यह ऐसी वस्तु नहीं है यह स्नेहमें किस प्रकार बाधक हो जाती है कि वह बिचारी लडकी मिलने भी आई तो उसे भगा दिया इस प्रकार हमें जो चिंता होती हो और भगवान साक्षात् प्रकट होयें तो भी हम यहीं कहेंगे **भगवान थोडी फुरसतसे आना, हमे बहुत चिंता सता रही है इस काममें अटके हुवे हैं.** उद्वेग हो तो शायद हम भगवानके चरणोमें पड जायें कि भगवान आप आये चलो बहुत कृपा करी आपने, लेकिन अगर चिंता होती हो तो उस समय स्नेहका स्मरण नहीं होता यह एक ध्रुव सत्य है अर्थात् चिंता स्नेहका सीधासा एक एन्टीडोस् है कोई स्नेह करता हो किसीको तुम्हें दूसरा कुछ करनेकी जरूरत नहीं है कुछ चिंताकी कंडिशन्स् उसके सामने खडी करदो थोडे दिनमें स्नेह अपने आप ठंडा पड जायेगा उद्वेगकी सिच्युऐशन खडी करोगे तो यह स्नेह ठंडा नहीं पडेगा चिंता स्नेहके भावको एकदम सामने सामने काटने वाला भाव है वैसे उद्वेग स्नेहके भावको तुरन्त नहीं काटता

चिंताको दूर करनेके लिये चिंतनका उपदेश

**सेवकाना यथा लोके व्यवहार प्रसिद्धयति। तथा कार्य समर्प्यैव सर्वेषा ब्रह्मता तत ।।** (सिद्धान्तरहस्य)

इस प्रकार समर्पणपूर्विका सेवाका उपदेश देकर सेवा करते हुये जो उद्वेग आयेगा उसके बारेमें सावधानी लेना श्रीमहाप्रभुजी चाहते हैं चक्रकी तरह कोई उद्वेग आयेगा, कोई जायेगा कुछ सुख होगा, कुछ दुःख आयेगा ऐसे चक्र जीवनमें भगवत्सेवाके साथ साथ चलते रहेंगे इनमें किसी प्रकारका फ्लक्च्युऐशन भी आयेगा फ्लक्च्युऐशन अर्थात्? एक, दो, तीन, चार, पाच, छ, सात, आठ यह फ्लक्च्युऐशन नहीं एक, दो, तीन चार पाच, एक दो चार, पाच, छ, सात, नौ ग्यारह इतनेमे बैटरी डिस्चार्ज हो जाये इसका नाम फ्लक्च्युऐशन' तो ऐसे फ्लक्च्युऐशन तो आयेंगे ही जीवनमें तुम इन्ह चाहो चाहे न चाहो इनको एवॉइड नहीं कर सकते कोई सुख कुछ अधिक समय तक चलेगा लिगर ऑन होकर इस बारेमे इसकी आदत पड जायेगी कोई दुःख तुम्हे अधिक समय तक चलेगा कि जितना सहनेको तुम तैयार नहीं होगे, इस सीमासे ज्यादा दुःखका अध्याय भी अधिक लगेगा और यह जब फ्लक्च्युऐशन तूमने देखी कि सुख दुःख बराबर साइकलमें नहीं चलते लेकिन कुछ फ्लक्च्यूऐशनमें चलते हैं इसके बाद तुम्हे लगेगा **मैं ही किस कारण दुःखी हूं, दुनियामे तो सब सुखी हैं तो?** अरे सबही दुःखी हैं लेकिन यह ही विचार आता हैं कि **मैं ही क्यों दुःखी हू?**

बुद्धजातकमे एक बहुत सुदर वार्ता हैं एक वृद्धा माजी बुद्धके पास गई **मेरा लडका मर गया है, और इस दुःखके ऊपर मैं काबू नहीं पा रही** बुद्ध भगवानने बहुत सुदर बात समझाई **मा' ऐसा है कि मैं भी सुबहसे बहुत भूखा हू. मुझे कुछ खानेके लिये या दूध इस बरतनमे लाकर दे दे लेकिन**

किसी ऐसे घरमे से भाग कर लाना कि जिसके घरमे कोई मरा न हो. वह बेचारी वृद्धा सबके घरोंमें गई और कहा मुझे भगवान बुद्धको दूध समर्पण करना है, लेकिन कोई घर ऐसा नहीं मिला कि जहा किसीका कोई मरा न हो. अतएव आकर कहा ऐसा तो कोई भी घर नहीं मिला. बुद्धने कहा तो फिर किस कारण इतना दुःखी होती है. हरेकके घरमें जब कोई न कोई मरा है, तो हर घरमें कोई न कोई तो जन्म लेगा ही. जिस घरमें कोई जन्मा है तो उस घरमे कोई न कोई मरेगा भी. अब तुझे तेरा बेटा बहुत प्यारा होगा. ऐसे ही दूसरोंको भी अपने बच्चे प्यारे होगे. ऐसी दृष्टि प्राप्त करनेकेलिये बुद्धत्व प्राप्त करना होगा क्योंकि जीवन और मरणका जो यह चक्र चल रहा हैं वह हमें दिखाई नहीं देता हमें ऐसा लगता है कि मरा अर्थात् सब समाप्त ऐसे भले ही हम लोग आत्मामें मानते हैं, पुनर्जन्ममें मानते हैं, कर्मफलमें मानते हैं, ऐसे मानते हों लेकिन फिरसे कुछ लफडा हों जाता है ऐसे तो मानते हैं लेकिन कोई परिवारका प्रियजन परलोक जाये तो रोना तो आ ही जाता हैं मानवके हृदयके लगनकी लाचारी हैं तो उसके कारण ऐसी फ्लक्च्युऐशनमें दुःख, शोक, उद्वेग कुछ भी उसे नाम दो, चिताका रूप धारण कर लेती हैं और जब चिताका रूप धारण कर लेती है तब महाप्रभुजी कुछ चिंतनका उपदेश देना चाह रहे हैं

आखिरमे एक बात मैंने कल तुम्हे समझाई थी कि ज्ञानकी सबसे पहली शर्त हैं जागरण, दूसरी शर्त है विषयके साथ व्यवसाय, अर्थात् अपनी ज्ञानेन्द्रिया कि कर्मेन्द्रिया जब रूप, रस, गंध, स्पर्श इत्यादि विषयोंके साथ किसी भी प्रकारके लेने देनेमें इन्वोल्व् हो जाती हैं तो फिर हमें इनका व्यवसाय होता है कि यह सुख है यह दुःख है, उत्तेजना है, उदासीनता है, भयजनक है स्नेहजनक है, आशास्पद है कि निराशाजनक हैं इतने सारे जो भाव जागृत होते हैं उनमे जो समय हम लगाते हैं उससे

जराभी अधिक समय लगे तो तुरन्त हमारा उद्वेग चिताका रूप ले लेता हैं ओटोनोमस् सिस्टम है अर्थात् स्वयचालित व्यवस्था हमारे शरीरके अन्दरकी किन्हीं विषयोंके साथ ऐसा आकर्षण-अपकर्षण, स्नेह-भय, उत्तेजना-उदासीनता, इत्यादिकी, अपने आप सम्मिलित हो जाती हैं स्वयचालित व्यवस्थासे ऐसा होता रहता है, इसके बाद दूसरा सिम्पथैटिक सिस्टम् वह क्या करता है? अर्थात् उसके कारण कहीं बहुत भारी धड़ाक शब्द हुवा तो हममें भागनकी क्रिया चालू रहती है, कोई सुमधुर ध्वनि सुनाई दे तो उस दिशामें आगे बढनेकी क्रिया सतत होती रहती है बहुत सुदर एक श्लोक ठाकुरजीके वेणुवादनके लिये कहनेमे आया है **सर्वप्रवाह सर्वत्र स्वानुकूल्येन कर्षति। वेणुगीतप्रवाहस्तु प्रातिकुल्येन कर्षति।।**

सारेही प्रवाह अपनी दिशामें प्रवाहमें तैरते व्यक्ति कि वस्तुको बहा कर ले जाते है परन्तु वेणुगीतका प्रवाह विरुद्ध दिशामें ले जाता है अर्थात् जो सुननेवाला प्रवाहकी दिशासे विपरीत उसके उद्गमकी दिशामें सतत खींचकर ले जाता है यह सिम्पथैटिक सिस्टमके कारण उत्पन्न होती हमारे शरीरकी व्यवस्था है

जो काम शरीरसे स्वयस्फूर्त हो जाये उसे सिम्पथैटिक व्यवस्थाके कारण हम चालू रखना या बद करना चाहते हैं शरीरमें जो क्रिया स्वयस्फूर्त प्रकारसे हो जाये उसके अनुसंधानमें शरीर फिरसे एक तराजूकी तरह मापतोल करने लगता है तोलकर तय करता है कि जा स्वयस्फूर्त प्रतिक्रिया हुई उसमेंसे किसको चलने देना? किसको नहीं चलने देना? जिसे चलने देना हो उसे चलने दे अथवा जिसे नहीं चलने देना उसके लिये तुरन्त पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम् भी शरीरमें काम करते होते हैं इसके कारण हमें चलती या बद करानेवाली स्वयस्फूर्त

प्रतिक्रियायोंका प्रयोजन कि औचित्य कि अनौचित्यका पृथक्करण करना पडेगा

अतएव पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम्के कारण हमें या तो चिंतनकेलिये बाधित होना पडता है, अथवा तो चिंताकेलिये बाधित होना पडता है कहीं तो उद्वेगकी थकानके कारण हमें नींद आ जाती है जैसे शुतुरमुर्गका बहुत प्रसिद्ध उदाहरण है कि शुतुरमुर्गके पीछे शिकारी दौडे तो शुतुरमुर्ग भी खूब दौडता है जब यह दौड नहीं सकता तो यह रेगिस्तानकी रेतमें अपने सींग गाड देता है और इसे शिकारी दीखना बद हो जाता है अर्थात् यह समझो कि चलो अब नहीं दीख रहा अर्थात् जगत सर्वं मिथ्या अर्थात् मोटे तौरपर शुतुरमुर्ग उसी रीतिसे पकडा जाता है यह निर्णय लेता है और जब भाग रहा होता है तब इसे लगता है कि मैं भाग रहा हू और जब भाग नहीं सकता तो उस समय पेरा-सिम्पथैटिक सिस्टम् इसे कोई सुझाव देता है कि लो अब तुम ऐसे करो और जब यह वैसे करने जाता है तब इसे कुछ अच्छा या बूरा परिणाम प्राप्त हो जाता है चिंतन कि चिंता कि समाधि कि कोई दूसरे पोजिटिव काममे जुड जाता है किसी कलाकृतिके सृजनमे जुड जाओ किन्हीं शास्त्रीय साधनाओमें जुड जाओ, किन्हीं क्रियाओंमें जड जायें तो उस क्रियामे अगर हमे क्रियासमाधि लगे, ज्ञानसमाधि लगे, तप समाधि लगे, सन्याससमाधि लगे, त्यागसमाधि लगे, कर्मसमाधि लगे, तो यह जो सक्रिय समाधि है उसके कारण चिंताके ऊपर बहुत बार काबू पा लिया जाता है जैसे कि लोग खेलने बैठ जाते है कि घूमने निकल जाते हैं तो इस दौरान सब कुछ भूल जाते है

अपने भारतकी बहुत प्रसिद्ध घटना है, विट्ठलभाई पटेल कोर्टमें वकालत कर रहे थे इतनेमे इनकी पत्नीका देहांत हो गया इनको तार आया तो उस तारको जेबमें रख लिया और आर्ग्युमिन्ट्स् चालू रखे हमे यह लगेगा कि ऐसा कैसे हो सकता

है? हमें लगेगा कि एकही कारण होगा कि वह अपनी पत्नीको चाहते नहीं होंगे लेकिन ऐसा नहीं था ये बेचारा तो चाहता था लेकिन वकालतका जो यह काम कर रहे थे उसमे इनकी कर्मसमाधि ऐसी थी कि उस समय कुछ और सुननेकेलिये, विचलित होनेकेलिये तैयार नहीं थे अतएव उद्वेग चितामें नहीं बदल पाया ऐसी कर्मसमाधिया हमें लगती होती है

बहुत बार तुमने हवाईजहाजके ऐक्सीडेन्टोमें भी पायलटोंके बारेमें ऐसा पढा होगा कि सारा प्लेन जल रहा था, पायलटके पैरों और कमर तलक आग आ गई थी, ऐसा होनेके बाद भी पायलेटने बहुत ही सावधानी पूर्वक प्लेन जमीनके ऊपर उतार दिया किस प्रकार उतार सकता है? क्या उसे आग गरम नहीं लगती होगी जैसे कि हमें गरम लगती है? जब उसका आधा शरीर जल रहा होता है तो उसे क्या कष्ट नहीं होता होगा? उसे उद्वेग नहीं होता होगा? एक बात ध्यानसे समझा कि उसे दुःख, त्रास, उद्वेग होता ही होगा लेकिन यह पेरा-सिम्पैथैटिक सिस्टम्के स्तरपर विचलित नहीं होता क्योंकि उसे अपनी ड्यूटीकी, जॉबकी समाधि लगी हुई है

हमारे भीतर एक गलत भ्रमणा भर गई है कि ऐसे मुद्राकरके बैठे आख मींचे, सास रोकें, तो ही समाधि लगती है यह भी समाधि है ऐसा नहीं है कि यह समाधि नहीं है, लेकिन समाधिका यही रूप नहीं है समाधिके बहुत सारे रूप हो सकते हैं क्रीडासमाधि हो सकती है, युद्धसमाधि हो सकती है, अपने जॉबकी समाधि हो सकती है, भक्तिकी समाधि हो सकती है, साधनाकी समाधि हो सकती है यह जो समाधिया हैं यह लगभग ऐसा ही प्रभाव अपने शरीरपर डालती हैं जैसा प्रभाव निद्रा डालती है एक बार कॉम एन्ड क्वाइट स्लीप तुम्हें आ जाये, बहुत कष्ट होता हो तो हम नींदकी गोली खाकर भी नींदको ला सकते है और अगर आ जाये तो दूसरे दिन हमको स्वस्थता

लगती है ऑपरेशन करनेके बाद डॉक्टर जो हमे गोली देता है, नींदका इजेक्शन देदे तो यह ऑपरेशन जैसी सर्जरीका भी कष्ट हम दो तीन दिन नींदमे बिता सकते हैं अगर जागते रहें तो उद्वेग तो होगाही लेकिन इस उद्वेगके साथ साथ फिरसे चिंता होने लगती है, अगर हमे अच्छी समझ न हो तो अल्टीमेटली इस ऑपरेशनके होनेके बाद जो हमारा सडा शरीरका भाग काटनेमें आ गया तो उसके बाद तो मेरा जीवन बढ गया ना, लेकिन यह बढेगा तब जब तुम चिंता न करो तब इस दर्दकी तुम चिंता करने लगो तो दर्द तो होगा ही ऑपरेशन तुमने कराया है तो ऐसा नहीं समझना कि कोई ऑपरेशन बगैर दर्दके होता है लाभशंकरभाईके दांतकी तरह ऑपरेशन हो कि यह दांत तोडा, दूसरा दांत तोडा और पोपला होकर बैठ गया कोई आधुनिक एलोपैथीका ऑपरेशन ऐसा सरल नहीं होता यह जिस समय ऐनेस्थेसिया देकर थोडी देरकेलिये तुम्हें बेहोश करते है, लेकिन जब होश आता है तब भयंकर पीडा होती है जबकि इस पीडाको सहनेकेलिये तुम किसी पेरा-सिम्पैथेटिक सिस्टमको खडा नहीं कर सकते

यह सिस्टम कहासे खडा होगा? तुम्हारे विश्वाससे कि डॉक्टरने जो मेरा अंग काटा है इससे मेरा जीवनकाल बढेगा मेरी मृत्यु टल गई ऐसा जो तुम्हारेमे दृढतर विश्वास हो तो तुम्हारी पीडा कभी चिंतामें नहीं बदलेगी जबकि इस पीडाके कारण हमारा विश्वास बिखर जाता है कि अब मैं मरूंगा कि जीऊंगा? इतना अधिक दर्द हो रहा है, इतनी अधिक पीडा हो रही है, तो बस चिंताने इसका स्थान ले लिया इस खुलासेसे तुमको चिंता और कष्ट अथवा चिंता और उद्वेग अथवा चिंता और दुःखका मूल तार्तम्य समझ लेना चाहिये काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह, मात्सर्यके उदाहरणोसे भी कल मैंने समझानेका प्रयास किया था महाप्रभुजी हम ऐसा नहीं कहते कि तुम पत्थर जैसे बन जाओ जैसे महावीरकी कल तुमको कथा सुनाई कि उनके

कानमें काटा भौंक दिया तो भी उन्हें कुछ विचार नहीं आया समाधि लग जाती है तो बहुत अच्छी वस्तु है महाप्रभुजी भी इन्कार नहीं करते लेकिन महाप्रभुजी अभी इस बारेमें तमसे ऐसी अपेक्षा नहीं रखते कि ऐसी समाधि लगा तो महाप्रभुजी तुम्हारेसे जो अपेक्षा रखते हैं वह यह कि प्रभुमे ऐसा विश्वास रखना कि जिस विश्वासके कारण तुम्हारी पेरा-सिम्पैथैटिक सिस्टम वर्किंग ऑर्डरमें आये, और चिंताके स्थानपर तुम चिंतन कर सको

यह चिंतन तुम करोगे तो तुम्हे जो कुछ पीडा हो रही होगी उसके ऊपर ऑपरेशन उपरान्त जैसे दर्दके ऊपर काबू पा सकते हैं वैसे ही तुम भी काबू पा सकते हो ऑपरेशन करनेके बाद दर्द तुरन्त नहीं मिट जाता परन्तु पाच दस दिन, महीने तक भी चलता है लेकिन यह पीडा पाच दस जितने दिन हमे सहनी है, वह मैं सह लूगा आखिरमे मुझे ठीक ही होना है **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्** अगर तुम्हारा विश्वास दृढ है तो तुम्हें जीवनमें अनुभव होते किसी भी क्लेशकी अनुभूति, किसी भी त्रासकी अनुभूति, किसीभी पीडाकी अनुभूति चिंतामे परिणत नहीं होगी

## परमात्मामें जीवन जीनेका आत्माका अभिगम

ऐसा विश्वास अगर तुम्हारा खो गया तो फिर तुम जो भी चिंतन करोगे उसमेंसे कष्ट उद्‌भव हो सकता है चिंता न तो है विषयासक्ति, और न ही विषयविरक्ति, चिंता यह परमात्माकी अनुभूति भी नहीं है, क्योंकि परमात्माकी अनुभूति करते होगे और साथमें चिंता करते होगे तो फिर कुछ गडबड होनी सम्भव है चिंता यह परमेश्वरका आराधन भी नहीं है लेकिन चिंतन यह जीवात्माका परमात्मामें जीनेका एक अभिगम है कि मैं परमात्मामें जी रहा हू जैसे एक रोगी जिसका ऑपरेशन हुवा हो वह मैं डॉक्टरके ट्रीटमेटमे जी रहा हू. अब मेरा रोग मिट गया है और मैं स्वस्थ होने वाला हू ऐसे

अन्डर-ट्रीटमेंटमे जीनेकी जैसी अनुभूति है यह जीवन जीनेकी प्रणाली है हॉस्पिटलमें रहकर वह जीवनकी प्रणाली इसकी पीडाको चितामे विकृत्त नहीं होने देती इसी प्रकार मैं जीवात्मा - परमात्माका अश होनेके कारण परमात्मामें जी रहा हू बस यह जीवनका अभिगम तुमने प्राप्त किया, तो चिता दूर हो जायगी यह अभिगम तुमने खोया तो तुम भक्ति करते होगे तो भी चिता होगी, शरणागति करते होगे तो भी चिता ही होनी हैं और सेवा करते होगे तो भी चिता ही होगी एक बात ध्यानसे समझो कि सेवा करते चिता न होती हो तो हम गोस्वामी लोग इतनी अधिक सेठ लोगोंकी चापलूसी किस कारण करते हैं? श्रीनाथजी तो हमारे घरमे बिराजे हैं फिर हमें इन लक्ष्मीवाहनोंकी चापलूसी क्यों करनी? लेकिन चिता होती है हमें कि श्रीनाथजी तो बिराजे हैं लेकिन लक्ष्मीवाहन जब तक हमें कुछ पैसा नहीं दे वहा तलक सेवाको निभाना किस प्रकार? अर्थात् फिर पहुचाओं समाधान, पहुचाओ बीडा, भेजो समाधानी, छापो पेम्पलेट, और फिर ललचावो कि तुम इतना दोगे तो तुम्हारे नामकी जयश्रीकृष्ण सगमरमरकी तख्तीमें टगवा देंगे तुम इतना पैसा दो तुम्हारा नाम अखबारमें आ जायेगा मुख्य मनोरथीके तौरपर यह सब हमारी लक्ष्मीवाहनोको ललचानेकी ट्रिक ऑफ ट्रेड हैं हम श्रीनाथजीके भक्तोको भी भक्तिकी मार्केटिगकेलिये ट्रिक ऑफ ट्रेड इस्तमाल करना पडता है सेवा करते करते ही प्रयोग करते हैं वह इस बातका प्रमाण है कि सेवासे चिताका निराकरण नहीं हो सकता जो सेवासे चिताका निराकरण हो सकता तो हमें यह ट्रिक ऑफ ट्रेड क्यों इस्तमाल करनी पडती हम तो लक्ष्मीनाथ, लक्ष्मी - श्रीनाथकी सेवा कर रहे हैं तब लक्ष्मीके वाहनोंकी उपासना किस कारण करनी पडती है? करनी पडती है क्योंकि चिता होती हैं सेवासे चिताका निराकरण नहीं होता भूले चूके हमारे हृदयमे यह सेवा करते समय प्रभुकी भक्ति खिल जाय तो चिता टिक नहीं सकती और चिता टिके तो भक्ति नहीं टिक सकती चिता और भक्तिका

ऐसा कोन्ट्राडिक्टरी नेचर है ऐसा नवरत्नका बोधपाठ समझमें आयेगा

## नवरत्नमे उपदिष्ट चिंतनके प्रकारोको पेटेन्ट मेडिसन् नहीं मान लेना

और सबसे मुख्य मुद्देकी बात यह है, कौन जाने अतिशयोक्ति कर रहा हू कि नहीं मुझे पता नहीं है लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि नाईन्टी नाईन पॉइन्ट नाईन्टी नाईन परसेन्ट हमलोगोंमें एक ऐसी गैर समझ फैलाई गई है कि नवरत्नमे जो कुछ उपाय वर्णनकरने मे आये है वह ही उपाय बस ऐब्सौल्यूट उपाय है ऐब्सौल्यूट उपाय अर्थात् क्या? जैसे पेटेन्ट औषधि होती है अर्थात् सिर दुखता है तो क्रोसीन खानेपर मिट जायेगा सिरमें दर्द होते ही क्रोसीन खानेपर दर्द मिट जाता है सिर दर्द दूर हो जाता है लेकिन किस प्रकारका दर्द क्रोसीन मिटा सकती है और किस प्रकारका नहीं मिटा सकती इसका भी फिर कुछ विवेक है सोचो कि सिरमे कैन्सरका गूमडा हो गया हो तो तुम एक नहीं सौ क्रोसीन खाओ, कुछ होने वाला नहीं है इसका दर्द तो होना ही है एक बात समझो क्रोसीन खाकर सिरमें कोई डडा मारदे तो क्रोसीन खानेसे डडेकी पीडा दूर होगी? नहीं होगी, अतएव ऐसी बहुत सी पेटेन्ट दवाईया होती है लेकिन इन पेटेन्ट दवाईयोंकी एक मर्यादा है जो मर्यादामे पेटेन्ट दवाईया दर्दको दूर करती है नवरत्नमे जो जो उपदेश चिंतनके तौरपर देनेमें आये हैं वह पेटेन्ट औषधि नहीं है जो चिंता तुमको हो रही है उस चिंताको दूर करनेका उपाय इस चिंतन द्वारा है, औषधि है इसको तुम पेटन्ट सिद्धान्तकी तरह पकड कर चलोगे तो लाभ नहीं होगा एक सामान्य उदाहरण दू कि **निवदने चिंता त्याज्या** यह महाप्रभूजीका प्रमुख सिद्धान्त हो तो बात बन गई फिर ब्रह्मसम्बन्ध लेना किसलिये? **विनियोगेऽपि सा त्याज्या** तो फिर सेवाकी मुसीबतमें क्यों पडना? **समर्थो हि हरि स्वत·** तो शरणमत्रकी कठी भी क्यो लेनी? समर्थ हरि तो स्वत

सब कुछ जानते है ही अतएव **सैंया भये कोतवाल अब डर काहेका!**

इस प्रकारके नवरत्नमें कहे गये जो उपदेश हैं उन उपदेशोको हम पेटेन्ट औषधिकी तरह अगर लेना चालू कर देगे तो यह रोग पैदा करनेवाली अथवा बढाने वाली औषधि होगी, रोगनिवारक औषधि नहीं अतएव अतिशय सावधानी रखो इस बारेमे कि जब महाप्रभुजी चिताके निवारणकेलिये जो चिंतन कह रहे हैं नवरत्नमें, वह उस चिताके बारेमे है, दूसरी सिच्युऐशनमें यह लागू नहीं पडेगी अतएव तुमको अगर यह चिंता नहीं होती तो गलत जल्दबाजीमें पडनेकी जरूरत नहीं है कि विनियोग करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है बच्चे बच्चिया जहा जाते हो वहा जायें, भाडमें जानेदो सबको हमने तो निवेदन कर दिया है न, अरे! ऐसे कैसे चलेगा? व्यापारमें ऐसा चलाओगे? व्यापारमें ऐसा नहीं चलात, तुम्हारा लडका व्यापारके ऊपर नहीं बैठता तो तुम्हारे पेटका पानी हिलने लग जाता है तुम्हारा लडका अगर स्कूलमें पढने नहीं जाता, इधर उधर घूमता हैं तो तुम्हारे पेटका पानी हिल जाता है लेकिन सेवामें नहीं आ रहा तो यह दैवी जीव नहीं होगा, आसुरी जीव होगा हम क्या कर सकते है अगर सेवामें नहीं आता? प्रभू सर्वसमर्थ है प्रभुको सेवा लेनी होगी तो लेंगे नहीं लेनी हो नहीं लेंगे इसमें जीव क्या कर सकता है? जीव तो असमर्थ है, यह सिद्धान्त यहा प्रयोगमें नहीं लाते? यहा प्रयोगमे लानेकेलिये यह सिद्धान्त नहीं है भाईसाहब! तुम गलत समझ गये पेटेन्ट मेडीसिन नहीं है पहले निदान बराबर करो कि रोग क्या है फिर दवा क्या लेनी समझमे आयेगा पहले समझो किस प्रकारकी चिंता हो रही है उस पर्टिक्युलर चिंताका निवारण करनेकेलिये महाप्रभूजीने किस प्रकारका चिंतन समझाया है? वह चिंतन उस चिंताके निदारणके लिये ही उपयोगी है सर्व परिस्थितियोमें वह चिंतन उपयोगी नहीं है अतएव इस उपायका अनुसरण न करनेमें हम महाप्रभुजीका कोई अपराध नहीं कर

रहे क्योंकि टीकाकार भी यहा ऐसा ही प्रश्न उपस्थित करते है कि फिर तो स्वछद व्यवहार हो जायेगा लोग तो मनमें आयेगा सो करेंगे क्योंकि चिता तो किसी प्रकारकी करनी ही नहीं है अरे लेकिन एक बात ध्यानसे समझो कि चिता कहा नहीं करनी, यह चिता नहीं करना यह किस चिंतनके सदर्भमें कहनेमें आरहा है और किस प्रकारका तुमको उद्वेग हो रहा है क्या उद्वेगके कारण तुमको कुछ चिता हो रही है? उस चिताका किस चिंतनसे निराकरण करना इन सबकी सावधानी रखो जैसे होमियोपेथीमें सिम्प्टम देखकर औषधि ली जाती है उसी प्रकार सिम्प्टम देखे बिना औषधि लोगे तो नहीं मरते होगे तो मर जाओगे पुष्टिमार्गमे अतएव नवरत्न अतिशय मजबका ग्रथ है पष्टिमार्गमे लेकिन ऐसा नहीं है कि दडेन गोगर्दभो अर्थात् एक डडा हाथमें आ गया और फिर गाय या गधा सब ढोरोंको उसीसे हाको

इसमेंके उपदेश, हरेक जगह लागू करनेके नहीं है क्योंकि यह बाततो निदानके ऊपर निर्भर करेगी अगर तुम ऐसा कहो कि महाप्रभुजीने उपदेश दिया है और इसे हर केसमे लागू करेंगे ही तो इसकी सच्चाई फिर क्या स्वरूप लेगी कि तुम्हारा लडका पढता न हो तो **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्**, उसे कोई लडकी न देता हो तो **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकींच गतिम्**, जुआ खेलने जाता हो तो कोई तकलीफ नहीं **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्**, पुलिस पकडकर ले जाये और घूस देनेके लिये पैसे न हो तो भगवानपि **पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्**, पुलिस वहा चौकीपर खूब पिटाई करे तो भी **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्**, ऐसे करके बता सकते हो तो बात सच्ची जो ऐसा कर सकते हो तो वास्तवमें **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्** उपदेशके तुम सच्चे अधिकारी!

सिद्धान्त तुम्हें समझमें आ गया लेकिन अगर तुम वकीलके चक्करमें पडे, जो तुम्हें छुडाने जा रहा है, जो तुम्हारी जमानत देने जा रहा है तो भगवान कहा कुछ कर रहा है यार! तुम कर रहे हो बातको अच्छी तरहसे क्यों नहीं समझते? गतिको कन्ट्रोल तुम कर रहे हो भगवानके ऊपर तुम कहा छोड रहे हो? तो जिस प्रकार इन लौकिक विषयोंको तुम भगवानके ऊपर नहीं छोड़ते वैसे ही भक्तिके विषयमें भी गलत प्रकारसे भगवानके ऊपर हरेक जबाबदारी नहीं डाल देनी चाहिये यह तो जो चिंता होती हो उस चिंताके निवारणकेलिये कोई ऐसा चिंतन करनेकेलिये कहनेमें आया है कि **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्.**

**निवेदन तु स्मर्तव्य** कहनेमे जो आ रहा है वह तो हम बीमार हो गये और अब हम कहें कि महाप्रभुजीने कहा है कि **निवेदन तु स्मर्तव्य** डॉक्टरके पास जाओ ही नहीं और बहुत जोश आ गया तो **सर्वथा तादृशी जनै** डॉक्टरके पास नहीं जाना, तादृशीके पास जाकर निवेदनके अर्थका विचार करेंगे कि यह दारा, आगार, पुत्र, देह, सब प्रभुको समर्पित किया है और अब बीमार पड गये तो प्रभुकी जबाबदारी है कि हम क्या कर सकते हैं? करते हो ऐसा? नहीं करते, डॉक्टरके पास जाते हो सब प्रकारके उपचार लेनेका प्रयास करते हो जब इस बारेमें तुम **निवेदन तु स्मर्तव्य सर्वथा तादृशी जनै** नहीं करते तब तुम्हे यह चिंता जो नहीं होती हो तो इसका चिंतन करनेकी जरूरत नहीं है यह बात तुम्हें स्पष्ट रीतिसे समझ लेनी चाहिये अतएव जितना चिंतन इस उपाय रूपमें, चिकित्सा रूपमें, वर्णन करनेमें आया है वह किसी प्रकारकी चिंताके रोगके उपाय रूप हैं दवा एक अलग वस्तु है, स्वस्थ खुराक एक अलग वस्तु है पथ्य एक अलग वस्तु है स्वस्थ खुराक अर्थात् क्या? जिस खुराकको लेकर हम बीमार न पडें, जिस खुराकको खाकर हमे

कमजोरी नहीं आवे, अशक्ति नहीं आवे, उसका नाम स्वस्थ खुराक पथ्य अर्थात् क्या? किसी दवाको जो खुराक माफिक आती हो उस रोगमें वैसी खुराक लेना दूसरा कुछ नहीं जैसे दस्त हो गया और तुम कहो कि ढोकला खाऊगा, फाफड़ा खाऊगा, बासोदी खाऊगा, रबडी खाऊगा, क्योंकि दवा तो ले ही रहा हू अरे लेकिन दवा ले रहे हो तो उसका हेतु यह नहीं है कि तुम रबडी खाओ, ढोकणा खाओ क्योंकि दस्त हो गया है तो उस समय तुम्हे क्या पथ्य लेना चाहिये दही भात लो, खिचडी लो, छाछ लो, ऐसा कुछ लो तो पथ्य खुराककी एक अलग केटेगरी है स्वस्थ खुराक एक अलग केटेगरी है और फिर दवाके अनुपातमें अब तो विक्स् फौरमूला ४४ की हम लोग पाच छ शीशी रखते हैं छींक आई विक्स फौरमूला ४४, सरदी हो गई विक्स फौरमूला ४४, रास्ते चलते प्यास लगी विक्स फौर्मूला ४४, पागल हो जाओगे मर जाओगे **लम्बेके साथ ठिगना जाये मरे नहीं तो बीमार हो जाये**

यह विक्स फौरमूला ४४ हरेक जगह लागू नहीं पड़ता इस बातको तुम ध्यानसे समझो विकस फौरमूला ४४ लेनेका भी कोई अनुपात होता है कोई इस प्रकार नहीं लिया जाता च्यवनप्राश ले आये और कहा कि कितना खाना, एक दो सेर च्यवनप्राश खा गये एक दो सेर च्यवनप्राश खाना होता है क्या? दवाको दवाके अनुपातमें ही लिया जाता है पथ्यको पथ्यके तरीकेसे ही लिया जाता है स्वस्थ खुराकको स्वस्थ तरीकेसे ही लेना होता है उसमें फिर थोडा बहुत फ्लक्च्युऐशन आयेगा तो तुम्हारा जीवन उसे सभाल लेगा स्वस्थ खुराक लेते हुये थोडा बहुत फ्लक्च्युऐशन आयेगा जैसे कि आज चीज मुझे ज्यादा पसन्द आ गई तो चार खानी थीं लेकिन छ खा लीं कि आठ खा लीं यह फ्लक्च्युऐशन है पेट भारी हो जायेगा दूसरे दिन रातका खाना मत खाओ तो ठीक हो जाओगे ऐसी सारी फ्लक्च्युऐशनकी सावधानी लेनेकेलिये अपने शरीरमें बहुतसी

व्यवस्थाये मौजूद है लेकिन इन व्यवस्थाओंकी रद्दो बदल करनेके उपद्रव जो तुम करते रहोगे कि पथ्यको तुम खुराककी तरह खाओ, खुराकको तुम दवाकी तरह खाओ, दवाको तुम खुराक की तरह खाओ तो फिर तो मरना ही, मरना ही और मरना ही है अतएव नवरत्न जो है उसके उपदेश सावधानीसे समझो कि किन बीमारियोंके औषधिरूपमें वर्णन किये गये चिंतन हैं

यह हरेक परिस्थितिमें लागू करनेवाले चिंतन नहीं हैं यह चिंताकी बीमारी जिस परिस्थिति, उद्वेगसे उत्पन्न हुई है अथवा जो उद्वेगको उत्पन्न करने वाली है अथवा तो उद्वेगरूपा यह चिंता है, उसके उपाय रूपमें किस चिंतनसे मिट सकती है वह उपाय महाप्रभूजीने इस नवरत्नमें वर्णन किये हैं उन्हें हरेक जगह लागू करनेकी जरूरत नहीं है

<u>भगवानके बारेमें निश्चिंत नहीं होना</u>

जैसे ठाकूरजीको सरकारने ले लिया, भगवान हैं कर्तुं अकर्तुं समर्थो हि हरि स्वत. निजेच्छात. करिष्यति मेरे माथे बिराजना चाहें तो मेरे माथे बिराजें, ट्रस्टीओंके माथे बिराजना होगा तो ट्रस्टीओंके माथे बिराजेंगे, सरकारके माथे बिराजना होगा तो सरकारके माथे बिराजेंगे, म्युजियम्में बिराजना होगा तो म्युजियममें बिराजेंगे भगवान तो कर्तुम् अकर्तुम् अन्यथा कर्तुम् समर्थ है ऐसा जो निश्चिंतताका भाव तुम रखते हो तो तुम प्रवाही जीव हो कि न हो लेकिन निश्चिंत आसुरावेशी जीव तो हो ही भगवान तुम्हारे घर बिराजते हों तो इसके बारेमें तुम निश्चिंत हुवे कैसे? यह जो चिंताओंको निवृत्त करनेका चिंतनका जो विविध उपदेश दिया गया है यह किसी परिस्थितिको अनुलक्षकरके ही देनेमें आया है उसका योग्य परिस्थितियोंमें सौ प्रतिशत असर सच्चा लेकिन इसे जब दूसरी परिस्थितियोंमें बिना विचारे तुम प्रयोग करने लगोगे तो मुसीबत तो खड़ी होगी ही

दवाकी बोतलको कोकाकोलाकी तरह पीने लगोगे, बोतलकी बोतल ही चढा लोगे, तो फिर सत्यानाश ही होगा ऐसे नवरत्नके उपदेशके साथ यह भी एक सावधानी लेनी बहुत जरूरी है अगर नवरत्नका सच्चा तात्पर्य समझना हो तो

प्रश्न आत्मनिर्भरतामे भी किसी वस्तुका आरम्भ होता है तो आत्मनिर्भरता और आरम्भके बीचमें अन्तर क्यों?

उत्तर, इस बातको अच्छी तरहसे समझो ठीक बात है, आत्मनिर्भर होनेमें भी किसी न किसी प्रकारका आरम्भ अर्थात् इनिशियेटिव हम लेते है चलनेमे हम आखका प्रयोग करते हैं कि नहीं करते? चलनेमे हम आखका प्रयोग करते हैं तो आखसे चल रहे है ऐसे नहीं कहा जाता? बहुतसी चीजोको हमनें देखना हो तो चलकर ही देखना पडता है जैसे तुमको प्रवचन सुनना है तो यहा चल कर आये हो कि नहीं? तो तुम पैरसे सुन रहे हो ऐसे तो नहीं कहा जायेगा? ऐसे ही आत्मनिर्भर होनेमें भी कोई न कोई आरम्भ तो रहा ही है लेकिन उससे आरम्भ और आत्मनिर्भरतामें अन्तर नहीं है ऐसा नहीं कहा जा सकता क्योंकि आत्मनिर्भरता मिलनेके बाद ही इनिशियेटिव और आत्मनिर्भर होनेकेलिये ले तो इनिशियेटिव दोनों इनिशियेटिवके अलग अलग केस हैं

प्रश्न ब्रह्मसम्बन्ध लेनेके बाद लगभग वैष्णवोंकी ऐसी समझ होती ह कि ठाकुरजी हमारे पति और हम उनकी पत्नि तो महाराणीको मा तथा श्रीजीको पिता किस प्रकार समझना?

उत्तर सबसे पहले मुद्दा यह समझो कि मनुष्य जब भी कोई भाषा बोलता है तब उस भाषामें प्रयोग होते शब्दोका जो सदर्भ होता हैं उस सदर्भको पकडकर चलेगे तो फिर भाषा मेकेनिकल हो जायेगी, जीवत नहीं रहेगी आज भी कौम्प्यूटरको तुम गुजरातीसे हिन्दी कि इग्लिशमेसे गुजराती अनुवाद करनेको कहोगे तो कौम्प्यूटर कर सकता है लेकिन जो बात

कौम्प्यूटरको समझमें नहीं आती वह **मेरा सिर चक्कर खा रहा है** इसका इंग्लिश अनुवाद करेंगे तो वह होगा **माई हेड इस ईटिंग सर्कल.** ऐसा कौम्प्यूटर कर देगा क्योंकि तूमने इसका इक्वेशन बताया है कि मेरा सिर अर्थात् माई हैड, चक्कर अर्थात् सर्कल, खा रहा है अर्थात् ईटिंग अब माई हैड इस ईटिंग सर्कलका अर्थ इंग्लिशमें क्या? और मेरा सिर चक्कर खा रहा है उसका हिन्दीमे अर्थ क्या? एक ही क्या? अन्तर पड गया कि नहीं? ऐसा अन्तर पड जाता है भाषाके प्रयोगमें चक्कर आना ये हमारी हिन्दी भाषाकी एक लाक्षणिक विशिष्टता है, इंग्लिशमें ईटिंग सर्कल वाक्यमें ऐसी बात अभिव्यक्त नहीं होती अतएव कौम्प्यूटर हमारी हिन्दी भाषाका अनुवाद नहीं कर सकता और इंग्लिशसे हिन्दीमें अनुवाद करना हो तो यही दिक्कत आयेगी क्योंकि इसके जो कुछ प्रयोग होंगे वह फिरसे हिन्दीमे अनुवादित नहीं होंगे.

मेरा एक भतीजा, किसी स्कूलमे पढता था यह जिस स्कूलमें पढता था उसमे एक पादरी था वह दादाजीसे भी पढा था. एक दिन वह कुछ ऊधम कर रहा था तो उस पादरीने उससे कहा **तुम गोस्वामी?** इसने कहा **हा गोस्वामी.** तो तुम गोस्वामी होकर ऊधम क्यो करते हो? **मैं गोस्वामियोंको जानता हू** मेरे दादाजीका नाम लिया, **मेरा नाम लिया**, तब मेरे भतीजेने पादरीसे कहा **हां हा दीक्षितजी महाराज मेरे ग्रैन्डफादर हैं** ग्रैन्डफादर अर्थात् हमारे यहा तातजी कहे जाते हैं उसका इंग्लिश अनुवाद कर दिया अब **उस पादरीने मूझे लैटर लिखा हियर इस ए बॉय हु क्लेमस् टु बी योर सन् एन्ड आई कन्सिडर दैट इस मोस्ट स्केन्डलस् रिमार्क अगेन्स्ट यू** मैंने कहा अरे! उन्हीं दिनोके आस पास मेरी शादी हुई थी और इतना बडा मेरा लडका जो कि कॉलेजमें पढता हो और ऊधम करता पकडा गया, यह तो बहुत बडा स्केन्डल हो गया ना! मैं तो घबरा गया मैंने कहा **इतना बडा लडका मेरा हुवा किस प्रकार? अभी तो शादी**

हुवे ही दो साल हुवे हैं. कॉलेजमे ऊधम करता इतना बडा. मैं भी नर्वस हो गया. मैंने कहा बिग स्केन्डल कुछ लगता है. आई एम नॉट रिस्पोन्सिबल फौर दैट मैंने भी कह दिया फिर पूछते पूछते पता चला कि अच्छा मेरा भतीजा है मैंने उससे पूछा ऐसे क्यो कहता है भाई? वह बोला तातजी महाराजका इंग्लिशमे अनुवाद क्या करना? तातजी महाराजका जो इंग्लिशमें अनुवाद ग्रैन्डफादर हो तो मैं उसका पिता होता हू, और दो साल मेरी शादीको हुवे हो और सोलह सत्रह सालका लडका कॉलेजमें पढता हो तो स्केन्डल हुवा कि नहीं! ऐसी बहुतसी भाषाकी समस्या हैं

वैसी ही समस्यायें हमारे यहा भी लगी हुई हैं क्योकि पति कहते ही हमने एक रिजिड कन्सेप्ट मान लिया हैं बारातमें गीत गाया जाता हैं घोडीपे चढकर आया हमारा वरराजा. ऐसे ही हमें लगता है कि ठाकुरजीभी ऐसे ही किसी घोडी पर चढकर आये हुवे वरराजा होंग इस अर्थमें ठाकुरजी पति नहीं हैं पति अर्थात् पाति इति पति रक्षण करे उसका नाम पति, और भाषामें जो रक्षण नहीं कर सकता स्वय ही छोडकर भाग जाये वह भी पति हो सकता है ब्याहला पति, ऐसा भी हो सकता है समझे! अर्थात् इस पत्निका अर्थ और उस पत्निका अर्थ एक जसा नहीं है हम भूपति कहते हैं, वाकपति कहते हैं तो वाकपतिका अर्थ पहले कन्यादान लिये हुवे वाला पति नहीं, धनपति कहे तो यह धनपतिका अर्थ ऐसा नहीं कि धन इसे कन्यादानमें हस्तमिलापके द्वारा मिला हैं धनपतिका अर्थ धनका मालिक होता है, धनका जो रक्षण करता है, धनका उपभोग करता है वह धनका पति इसी प्रकार परमात्मा हमारा पति है इस अर्थमें नहीं कि यह पुरुष हैं और हम स्त्रिया हैं फिर साडी पहरनी और ब्लाउज पहरना बिचारे परमात्माकी फजियत क्यों करते हो यार! इस अर्थमें ठाकुरजी पति नहीं हैं इस अर्थमे यमुनाजी भी मा नहीं हैं

माका भी कोई एक अर्थ होता है जिसका कॉम्प्यूटर जैसे अर्थ करने जायेंगे तो बहुत गड़बड़ हो जायेगी पिताका भी एक अर्थ होता है, पतिका भी एक अर्थ होता हैं हम सब गुजराती अच्छी तरह जानते हैं कि विवाहित लोग भी अपनी पत्निको बहुत बार बेन कहते हाते है वहा बहेनका अर्थ क्या? मणीबेन आई, अरे भई तू मणीबेन क्यों कहता है? यह सभ्यताकी एक पद्धति जो चल रही है उसमें किसी भी स्त्रीको बहिन कहना आदर देनेके लिये तो अपनी पत्नीको किस कारण अपमानित करना? अतएव पत्नीको भी मणिबेन ही कहते है मणिभाई तो यह मणीभाईकी जो मणिबेन पत्नी है जिसे वह बेन कह रहा है वह बेनके अर्थमे नहीं परन्तु आदरके अर्थमें बहिनको जितना आदर देना उतना पत्नीको किस कारण नहीं देना अतएव मणीबेन पति या माके अर्थ कुछ शारीरिक हैं, कुछ भावनात्मक हैं कुछ सामाजिक हैं कुछ आध्यात्मिक अर्थ है उन सब आध्यात्मिक और आधिदैविक अर्थमें प्रभु अपने पति हैं यमुनाजी अपनी मा है इन शारीरिक अर्थमें प्रभु अपने पति और श्रीयमुनाजी अपनी मा नहीं है इतना खुलासा मुझे लगता है कि पर्याप्त है फिर भी कोई संदेह हो तो पूछ सकते हो

प्रश्न (प्रश्न रिकार्ड नहीं हुवा)

उत्तर उद्वेग पैदा करनेवाली कि उद्वेगसे पैदा होती चिता ऐसा कहते ही भेद आ गया जब हम इस प्रकारसे भेद कर रहे हैं तो चिता और उद्वेगमे भेद आ ही गया ना! मैंने तीन प्रकारकी चिता पुरुषोत्तमजीकी टीकामेसे बतायी थी एक चिता छोड दी है वह उद्वेगरूपा चिता पुरुषोत्तमजी तीन प्रकारकी चिता बताते हैं उद्वेगजनिका, उद्वेगजनिता और उद्वेगरूपा ऐसे त्रिविध चिता यहा तो तीन चिताकी बात नहीं करी परन्तु दो चिताकी बात करी है

नवरत्न ग्रथका स्वाध्याय

नीत्से करके एक बहुत बडा चिंतक हुआ है जर्मनीका इसने मनुष्यकी एक मजेदार मजाक उडाई है वह कहता है **मुझे ऐसा लगता है कि यह सभी जानवर मनुष्यके बारेमें क्या विचारते होगे?** तो उसने एक कल्पना करी वह ऐसा कहता है सभी जानवरोको लगता होगा कि हमारे जैसा ही जानवर कैसे हस रहा होगा? हमारे ही जैसे जानवर पैरोसे चलत हैं, हाथसे कुछ लेते हैं, करते हैं, खाते है, सोते हैं, रोते कैसे होगे? आगे यह कहता है यह रोता कि हसे, खैर इनकी कोई ऐसी भाषा होगी. जानवरोंको लगता होगा कि हमारी कुछ ऐसी भाषा है जैसे हाथी चिंघाडता है, घोडा हिनहिनाता है, कुत्ता भौंकता है, वैसे ही इसका कोई स्टाइल होगा बोलनेका इस प्रकार, रोनेका और हसनेका आखिरमें इसे लगता है कि चिंता करके यह क्यों बैठता होगा? नीत्से वहा कहता है कि जो हमारे जैसा जानवर है उसे चिंता क्यो होती होगी? इसके लिये जानवर कहते हैं कि कोई हमारेमेसे ही यह जानवर पागल हो गया लगता है.

एक बात ध्यानसे समझो कि जो हम पागल न हो गये हों तो हमे चिंताके बारेमें कुछ निवृत्तिके उपाय खोजने ही पडेंगे और उसमें सबसे पहला उपदेश श्रीमहाप्रभुजी देते है **चिन्ता कापि न कार्या निवेदितात्मभि कदापीति। भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्।।**

आप लोगोंके पास जो कागज है इसे अगर आप पढोगे तो विचारमें आ जायेगा क्योंकि यह प्रवचन नहीं है, सघन स्वाध्याय है अतएव इसकेलिये एक प्रयोग कर रहा हू अगर समझमे न आये तो अच्छी तरहसे मुझसे पूछना इस प्रथम श्लोकका अन्वय हम एक बार अच्छी तरहसे समझ लेते है

श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

१ (आन्तरिकोपायोपदेश) निवेदितात्मभि (कर्तृप्रज्ञाविवेक)
*कापि चिन्ता* कदापि न कार्या इति पुष्टिस्थो भगवान्
(शास्त्रदानशक्तिविवेक) अपि *लौकिकीं च गति* न करिष्यति

सरल भावानुवाद अर्थात् जो निवेदितात्माऐं हैं, जिन्होने आत्मनिवेदन किया हैं, उन्हें कोई भी चिंता कभी भी नहीं करनी चाहिये क्योंकि पुष्टिस्थ भगवान कभी भी तुम्हारी लौकिक गति नहीं करेंगे

अब इसमें तुम देखोगे कि बहुत सारी वस्तुऐं हैं तुम्हें दीखेगा कि निवदितात्मभि के अक्षर जो हैं वह बहुत छोटे सघन रखे गये हैं एक दूसरेसे सटके हुये शब्द हैं *कापि चिन्ताके* अक्षर तिरछे टाइपमें लिखे गये हैं और *लौकिकीं च गतिम्* भी तिरछे टाइपमें हैं जोकि इस श्लोकमें नहीं है लेकिन इसके नीचेके श्लोकमे तुम्हें दिखाई देगा कि कुछ वाक्योके नीचे अन्डरलाइन है अब यह सब मानसविश्लेषणके बहुतसे घटक हैं उनको एक बार अच्छी तरहसे समझ लो

सघन अक्षरोसे आर्थिकोपदेशका निरूपण

नवरत्नमें जैसे मैंने तुमको समझाया कि चिंताका निरूपण और उसकी निवृत्तिके उपाय समझानेमे आये हैं और उस निवृत्तिका उपाय कहीं महाप्रभुजीने शब्दोसे प्रकट करा है तो कहीं अर्थसे प्रकट किया है तो जब निवृत्तिका उपाय महाप्रभुजी शब्दसे प्रकट नहीं करते लेकिन अर्थसे प्रकट करना चाहते हैं उन अक्षरोंको मैंने सघन कर दिया है जैसे यहा निवेदितात्मभि तुम्हे दिखाई देगा आगे तुम देखोगे तो सर्वेश्वर सर्वात्मा दिखाई देगा उसके अतिरिक्त यहा जो तीसरेमे प्रभु शब्दको मैंने सघन कर दिया हैं फिर चौथेमें प्रभु के अक्षरोंको एकदूसरेसे

सघन बना दिया है तो इस प्रकार जहा अक्षरोको सघन किया है उनका सावधानीसे अर्थ समझो कि महाप्रभुजी कुछ आर्थिक उपदेश दे रहे हैं शब्दमें कोई उपदेशकी टोन नहीं है लेकिन अर्थगर्भित शब्द प्रयोग कर रहे हैं, अर्थगर्भित शब्द प्रयोग कर रहे होनेके कारण इनमें से कोई ध्वनि उपदेशकी निकल रही हैं

<u>वाचनिक और आर्थिक उपदेशमे अतर</u>

उपदेश दो प्रकारके होते हैं वाचनिक उपदेश और आर्थिक उपदेश इनका एक उदाहरण देता हू हमारे यहा एक बहुत प्रसिद्ध कहावत है **कहना बेटीको और सुनाना बहूको** तो बेटीको जो कहनेमे आ रहा है वह है वाचनिक उपदेश और बेटीको कहकर जो बहूको सूनानेमें आ रहा है वह वाचनिक नहीं हैं परन्तु आर्थिक उपदेश है कि मैं जो मेरी बेटीको भी यह बात कह रही हू तो तुझे भी समझ लेनी चाहिये इसका नाम आर्थिक उपदेश तो कितने ही उपदेश आर्थिक होते हैं, आर्थिक अर्थात् टकाधर्मवाले नहीं, अर्थसे जुडे हुवे उपदेश और वाचनिक उपदेश अर्थात् वचनसे जुडे हुवे उपदेश

<u>नवरत्नमे वाचनिक और आर्थिक उपदेश</u>

नवरत्नमें जहा जहा भी महाप्रभुजीने वाचनिक उपदेश करे हैं वहा वहा उनके नीचे मैंने <u>अन्डरलाईन</u> करी हैं कि यह वचन उपदेशकेलिये दिये गये वचन हैं देख लेना सबमें अन्डरलाईन हैं जहा अन्डरलाईन नहीं करी और टाईपको कन्डेन्स् कर दिया है, सघन कर दिया है वहा कोई उपदेशका वचन नहीं है वचन एकदम तटस्थ है, लेकिन इसमेंसे भी कोई अर्थगर्भित तात्पर्य निकल रहा हैं कुछ बताना चाह रहे हैं कुछ सूनाना चाह रहे है महाप्रभूजी जिसका पहला उदाहरण हमको मिला **निवेदितात्मभि** तुम्हे एक सामान्य उदाहरण देता हू, कोई आदमी बहुत झगडा करता हो तो **अरे यार! ऐसे सयाने आदमी होकर तुम ऐसा करते हो?** यहा हम कोई उपदेश नहीं दे रहे

कि तुम ऐसा नहीं करो एक **सयाना** शब्द लगानेसे उसमेंसे उपदेश निकल रहा है कि **अगर तुम सयाने हो तो तुम्हे ऐसा काम नहीं करना चाहिये** अगर तुम ऐसा काम कर रहे हो तो उसका मतलब कि तुम सयाने नहीं हो ऐसा कुछ महाप्रभुजी एक आर्थिक उपदेश दे रहे हैं **निवेदितात्माभि** द्वारा

**भक्तिमार्गमें प्रवृत्तको नवरत्नका उपदेश**

सबसे पहली वस्तु यह जो कि प्रवचनके प्रारम्भमे तुमने **मैंने** कही थी कि **भक्तिमार्गे प्रवृत्तस्य दाढर्यार्थम् इदम् उच्यते अन्धस्य सूर्यवद तद्विमुखस्य न अत्र अर्थिता** (नवरत्नप्रकाश) जो भक्तिमार्गपर चलना चाहता हो उसकी भक्तिको दृढ करनेके लिये यहा कुछ कहनेमें आया है अधेके लिये सूर्य उगे कि थम जाये उससे कुछ फरक नहीं पडता ऐसे नवरत्नमें कोईभी उपदेश जो भक्तिमार्गपर चलना नहीं चाहता उसके बारेमें लागू मानो तो वह गलत धारणा है लागू तो पड जाये, अगर हम बंध पडती पागको पहर ले तो लेकिन पाग बधपडती हो और पहन लें अतएव वह तुम्हारी हो गई, ऐसी भ्रमणा मनमे मत रखना पाग किसी कारणसे तुम्हारे सिरपर बधती है अतएव तुमको फिट आ गई है अतएव ये तुम्हारी पाग है ऐसा मत मान लेना इसमेंसे कोई भी उपदेश जो तुम्हे भक्तिमार्गपर चलनेपर कठिनाईके रूपमे चिंता नहीं हो रही वैसी चिंताको निवृत्त करनेके लिये नहीं है

यहाके उपदेश निवेदितात्माओंके लिये हैं अतएव सबसे पहला शब्द है **निवेदितात्मा** बस एक बातमे हरेक बात स्पष्ट हो गई कि जो वस्तु यहा कहनेमें आ रही हैं वह निवेदितात्माओको कहनेमें आ रही है पुष्टिमार्गमें भी सैद्धान्तिक दृष्टिसे हरेकको निवेदितात्मा होना जरूरी था आज **पुरी एक अन्धेरीका जो कोई राजा. टके सेर भाजी टके सेर खाजा.** हमने पुष्टिमार्गको बना दिया है जो आये उसे देदो ब्रह्मसम्बन्ध एक बात ध्यानसे

समझो कि महाप्रभूजीको स्वयकी हिम्मत नहीं पडती थी **तोसों सेवा नाहि निभेगी ताते तोकों ब्रह्मसम्बन्ध नाहि देत हो.** हम महाप्रभूजीके भी प्रभू हो गये अतएव सबको ब्रह्मसम्बन्ध दे रहे हैं अतएव **टके सेर भाजी टके सेर खाजा.**

तो पुष्टिमार्गमें हरेक व्यक्ति निवेदितात्मा नहीं हो सकता तो सारा गांव निवेदितात्मा किस प्रकार हो सकता है? गावकी चिंताके निवारणके बारेमे यहा कुछ भी कहनेमे नहीं आया है यहा जो कहनेमें आ रहा है वह जो निवेदितात्मा हैं उनको होती चिंताके वारण करनेकेलिये कहनेमें आ रहा है पहली शर्त हैं निवेदितात्मा होना **निवेदितात्माभि** अब एग्जेक्ट महाप्रभूजीकी टोन देखो **ऐसे सयाने होकर यह सब बात करते हो?** ऐसे उस सयानेमें जो टोन आनी चाहिये, बोलते हुवे जो ध्वनि प्रकट होनी चाहिये वह ध्वनि तुम यहा विचारो. **क्यो निवेदितात्मा होकर तुम लौकिक विषयोंकी चिंता करते हो?** तो बात समझमे आ जायेगी कि महाप्रभूजी **निवेदितात्मा** शब्दसे किस प्रकारका आर्थिक उपदेश द रहे हैं? **निवेदितात्माभि कापि चिन्ता न कार्या**

<u>तिरछे अक्षरोवाले शब्दोसे रोगका वर्णन</u>

***कापि चिन्ता*** यह तिरछे हो गये हैं जिन शब्दोंको मैंने तिरछा किया है तब रोग क्या है, उसे बतानेकेलिये चिकित्साशास्त्रीय मीमासा चार रूपोंसे होती हैं १ रोग २ रोगका कारण ३ रोगकी निवृत्ति और ४ निवृत्तिका उपाय

रोगमे ही नहीं अपितु योगमे भी ऐसा वर्णन करनेमें आया है कि १ चित्तवृत्तिके भटकावके कारण, २ चित्तवृत्तिको निरुद्ध करनेका प्रयोजन, ३ चित्तवृत्तिको निरुद्ध करनेके उपाय और उन्हे निरुद्ध कर लेनेमें प्रकट होते परिणाम जब भी शास्त्र ऐसे चिकित्सात्मक उपदेश देता है इनमें हर समय इन चार पौइन्टकी सावधानी लेनेमें आती हैं १ कष्टका स्वरूप, २

उसके कारणका निदान, ३ उसकी निवृत्तिके उपाय और, ४ निवृत्तिका स्वरूप तो चिताके जिन जिन स्वरूपोंका निदान यहा महाप्रभुजीने पकड लिया है उन सब स्वरूपोंको मैंने तिरछा कर दिया है अतएव इस कागजको तुम अच्छी तरहसे देख लेना

जहा जहा अक्षर तिरछे मिले वहा वहा तुम्हें समझ लेना चाहिये कि रोगका वर्णन है जहा जहा अक्षर कन्डेन्स् मिले वहा वहा कोई पथ्यका वर्णन है औषधिका वर्णन नहीं है कि इस औषधिके साथ पथ्य कैसा लेना है? तुम्हें १ स्वस्थ खुराक, २ पथ्य और ३ औषधि ऐसे तीनोंका भेद समझा दिया अतएव जहा आर्थिक उपदेश है वहा किसी पथ्यका वर्णन करनेमें आया है कि इसके साथ पथ्य क्या होना चाहिये

अन्डरलाईनसे औषधिका वर्णन

जहा अन्डरलाईन है वहा औषधिका वर्णन है कि इस चिताको मिटानेकेलिये किस प्रकारका चिंतन करना चाहिये कि जिससे चिताके ऊपर तुम काबू पा सको यह मुख्य सारा हमारा सिस्टम है देखते जाओगे तो ख्यालमें आयेगा तत्काल याद करना तो कठिन काम है **निवेदितात्मभि कापि चिन्ता कदापि न कार्या इति पुष्टिस्थो भगवान अपि लौकिकीं गतिम् न करिष्यति**

प्रवाहीजीवको लौकिक गतिके कारण उद्वेग नहीं होता

इसमें ध्यानसे देखोगे तो *कापि चिन्ता* और *लौकिकीं गति* यह रोगका स्वरूप है कोईभी चिंता मत करो, लौकिक गति तुम्हारी नहीं होनेकी निवेदितात्मा जीवकी लौकिक गति होना यह उद्वेगका कारण है, उद्वेग उत्पन्न करनेका कारण है तुम इसे ऐसे कहते हो कि **तुम्हारी लौकिक गति हो रही है** तो इसे कुछ उद्वेग होना चाहिये कि नहीं, जो अपनेको निवेदितात्मा मानता हो तो?

यहा तो सैंया भये कोतवाल अब डर काहेका ऐसी बात कहनेमे आ रही है! अरे उद्वेग होना चाहिये इसकी चिंता नहीं करनी चाहिये, महाप्रभूजी ऐसा कह रहे हैं लौकिक गतिका तुमको उद्वेग भी नहीं होता तो फिर बोतल चढाओ, जुआ खेलो, मस्जिदमें जाओ जो मन भावे सो काम करो चर्चमें जाओ कहीं भी जाओ, क्यों? **कापि चिन्ता न कार्या लौकिकीं गति भगवान् न करिष्यति** बात बन गई तो पुष्टिमार्गकी जरूरत ही क्या है? नवरत्न कहनेकी जरूरत ही नहीं थी, मस्त रहो, खाओ, पीओ, मौज मारो! ऐसा नहीं है उद्वेग तो करना ही पडेगा तुमको इसकेलिये

## लोकमे प्रवृत्ति निवेदितात्माको उद्विग्न करेगी

मैंने तुमको इतना इसलिये समझाया कि जो तुम निवेदितात्मा होगे तो तुम्हारा ऑटोनोमस् सिस्टम् तुमको उद्विग्न बनायेगा जैसे तुम आखवाले हो तो कोई भी ज्यादा रोशनी आई तो तुम्हारी आख बन्द हो जायेगीं जो तुम कानवाले हो तो कोई भी बॉम्बका धमाका होगा तो कानमें सीटीया बजने लग जायेंगी यह तुम्हारे हाथकी बात नहीं है कान और शब्दका एक दूसरेके साथ ऐसा वर्ताव ही उनका स्वभाव है उसी प्रकार जो तुम निवेदितात्मा हो और तुम्हारी लौकिक गति जिस समय होने जा रही हैं उस समय उद्वेग होगा, होगा, और होगा ही जो नहीं करनेका है वह क्या है? चिंता नहीं करनी अर्थात् इस उद्वेगको इतना अधिक मत तानो इसका कुछ चिंतन करो कि जिस चिंतनके कारण तुम्हारी यह लौकिक गति न होनेके लिये किसी प्रकारका स्पीड ब्रेकर लगा रहे कोई बम्पर मिले और तुम्हे मानसिक रीतिसे भी किसी प्रकारका स्वास्थ्य मिले कि जिससे इस लौकिक गतिको तुम किसी प्रकार कम्पनसेट कर सको जैसे मनुष्यको दस्त हो जाता है तो हम क्या करते हैं?

जो स्वाभाविक खुराक है उसे थोडा घटा देते है कुछ ऐसी हलकी खुराक दही भात जैसी कि खिचडी जैसी खाकर हम उन दिनोंको बिता देते है कि जिससे हम मर भी न जायें और डीहाईड्रेशन भी न हो बीमारी अधिक न हो जाये उस प्रकारका कोई मध्यममार्गका उपाय अपनाना पडता है बिल्कुल ऐसी ही सिच्युऐशन यहा भी काम कर रही है

जुआ खेलने गया था वहा लाख रुपया मिल गया, उसके बाद क्लबमे गया तो सबको बोतल भेंट करी उसके बाद तो लडकिया मेरे साथ नाचने आई अतएव नाचने लगा और फिर तो आनन्द ही आनन्द हो गया। उसके बाद चिंता किस बातकी रही? इससे अधिक फिर हमारे महाप्रभुजीने कह ही रखा है कि **निवेदितात्मभि: कापि चिन्ता कदापि न कार्या भगवान् अपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीञ्च गतिम्** ऐसे विकृत विचारोंका समूह भी खडा हो रहा हो तो उद्वेग तो करना जरूरी है परन्तु चिंता करनेसे कोई लाभ नहीं होगा उद्वेग तो होना ही चाहिये तुम निवेदितात्मा होगे तो तुम उद्विग्न हो जाओगे, नौर्मल कोर्समें उद्विग्न हो जाओगे जैसे धूमधमाका होनेपर कान उद्विग्न हो जाते हैं, यह धूमधडाके कि पुष्टिसिद्धान्तोंके विपरीत गोवा के प्रवचनके शब्द कानमें जाय तो हार्टबीट बढ जाती हैं पसीना भी छूटने लगेगा उद्वेग होगा लेकिन तब करू क्या? उपरोक्त बनारसकी गलीओंकी तरह भागना क्या? दुकान ऊपर चढ जाऊ क्या? कि समझलू कि यह भैंस करेगी क्या अतमें?

जेन, जोकि बुद्धमतकी जापानमें सम्प्रदाय है, उनके साधुओंका एक बहुत सुदर प्रसग आता है एक जेन साधुके गावमें किसी शत्रुकी सेनाने आकर मारकाट मचाना शुरु किया सब घरोंको लूट लिया अब इस जेन साधुका जो मठ था उसमे भी लूट पाट करनेकेलिये सैनिक लोग आये जेन साधु खडा था अविचलित रूपमें दूसरे सब जो नागरिक थे वह तो सब रो रहे

थे, डर रहे थे, पैरों पर पड रहे थे, सब प्रकारकी चापलूसी कर रहे थे जैसे विजेता सैनिकके सामने करनी पडती है परन्तु यह जेन साधु तो एकदम मस्तीमें खडा था तो लूटपाट करने वाली सेनाके कमाडरने पूछा **तू कौन है इतना घमडसे भरा हुवा? तुझे पता नहीं है कि एक पलमे तेरी गरदनको मैं धडसे जुदा कर सकता हू** जेन साधुने बहुत ही गजबका जबाव दिया **खुद तुम्हे निश्चय है कि नहीं कि एक पलमें मेरी गरदन धडसे जुदा हो सकती है.** इतनी निश्चितता महाप्रभुजीने जीकर बताई है तथा देहे न कर्तव्य वर. **तुष्यति नान्यथा** (अन्त करणप्रबोध) वह कमान्डर भाग गया वहासे इतनी निश्चितता है तो लूटपाटकरने वाला भी तुम्हे लूट नहीं सकता और इतनी निश्चितता नहीं है तो साहूकार भी तुम्हारी जेबमें हाथ डाल ही देगा लूटेगा नहीं लेकिन तुम्हें बेवकूफ ऐसा बना देगा कि तुम्हें लगेगा कि मेरे ऊपर बहुत बडा उपकार किया भाईसाहिबने

<u>यह उपदेश निवेदितात्माकी चितानिवारणके लिये है</u>

एक बात समझो कि निश्चितता यह पहली शर्त है और उस निश्चितताका उपदेश महाप्रभुजी यहा देना चाहते हैं, लेकिन यह निश्चितता तुम्हारेमें आयेगी कहासे और कब? जब तुम्हें उद्वेग नहीं होगा तब उद्वेग तुम्हें कब होगा? लौकिक गति होनेके कारण जब तुम अपने आपका निर्धार करोगे यह मैंने ऐरिक्सनका जो सिद्धान्त बताया वह इसलिये बताया है कि बार बार तुम्हें इसका उपयोग करना पडेगा जब तुम तुम्हारा आत्मनिर्धार तुम्हारी ईगोकी आइडेन्टिटी कि आत्म-तादात्म्यका बोध कि तुम निवेदितात्मा हो, ऐसे करके करते होगे तो यह आत्मनिर्धार तुमको नहीं है, तुम्हें विश्वास नहीं है प्रभुके ऊपर, कि सृजनशील होनेका कोई कार्यक्रम तुम्हारे जीवनमे नहीं है, उस बारेमे तुम्हारा कोई उद्यम नहीं है आरम्भ नहीं है और कुछ नहीं तो लौकिक गति तो होगी ही तुम कहोगे आनन्द आनन्द हो गया लीला लहर आ गई आज तो मैं मिट्टीमें हाथ

डालू तो सोना निकलता है ऐसा तुम्हें लगने लगेगा और इस प्रकार वहा सोनेकी मोहरोकी बरसात हुई बातमें आता है कि **यह विष्टा कहासे आ गई झाडू देकर निकालो** ऐसा लगा यह किस कारण कहा? फर्क कहा पड गया? फर्क वहा पड गया कि इन्हे निर्धार था कि मैं निवेदितात्मा हू. हमारा निर्धार डिग गया है कि मैं निवेदितात्मा हू इसकेलिये ही तो इन लक्ष्मीवाहनोंकी चापलूसी करनी पडती है कि आओ, मनोरथ कराओ, तुम पलनाके मनोरथी नहीं बनोगे तो हमारे ठाकुरजी पलना कैसे झूलेंगे? अरे! दो लप्पड मारने चाहियें इस प्रकार कहा जाता है? निवेदितात्माओके ऐसे शब्द होते है? अतएव निवेदितात्मा होगे तो तुमको उद्वेग होगा उद्वेग होगा तो उससे होती चिताका निवारण है यह इनको ऐसे वर्णन करनेमें आया उपदेश नहीं है

मुझे लगता है कि मैंने मेरी बात स्पष्ट कर दी है लेकिन फिर भी किसीका कुछ पूछना है तो पूछो

प्रश्न **लौकिकी गति न करिष्यति** यह लौकिक गति किसकी होती है?

समाधान एक बात ध्यानसे समझो जो घोडेपर सवार होता है वही गिरता है **न शयानो पतत्यध** जमीनके ऊपर सोता मनुष्य किसी भी दिन गिर सकता है क्या? अब तुम आत्मनिवेदनके घोडके ऊपर तो चढे ही नहीं तो जमीन ऊपर ही पडे हो ना और फिर डरते हो कि कहीं किसी दिन मैं गिर तो नहीं जाऊगा? लेकिन गिरनेका चान्स तुम्हे कहा है? जगह कहा है तुम्हारे गिरनेकी? आत्मनिवेदनके घोडेके ऊपर तुम चढे नहीं तो गिरोगे कैसे? अतएव एक बात मूद्दे की समझो कि **निवेदितात्मभि लौकिकगति विषयिणी चिन्ता न कार्या** इन सब बातोंका महाप्रभुजी **निवेदितात्मा** विशेषणसे खुलासा कर रहे हैं तुम निवेदितात्मा हो कि नहीं? जो हो तो तुम्हें उद्वेग होगा

ही लौकिक गति हो रही होगी उस समय मैं तुम्हें याद दिलाता हूं कि तू लौकिक गति होनेकी चिंता करता है इसके बजाय आत्मनिवेदनका चिंतन कर तू अपने आपका विचार कर तेरा माहा प्रभुने जो तुझे दिया है कि तू आत्मनिवेदन करके प्रभुका भगवदीय हुआ है कि तदीय हुवा है, तो तुझे लौकिक गतिकी चिंता किस कारण करनी चाहिये? लेकिन यह सारी बात तुम्हें तब समझमें आयेगी जब तुम्हें निवेदितात्मा होनेका आत्मनिर्धार होगा तो, नहीं तो समझमें नहीं आयेगा इसलिये वो कन्डेन्स है समझे! एकदम सघन मनुष्य जैसे यह शब्द है मक्खनको जैसे बिलोकर छाछमेंसे ऊपर निकाला जाता है वैसे यह **निवेदितात्मा** शब्द यहा नवनीतकी तरह बिलोकर ऊपर निकाले हुवे शब्द हैं

मैंने कल तुम्हें समझानेका प्रयास किया था हमारी अनुभूतिके बहुतसे रूप है एक तो हमने किल्फोर्ड मौर्गनकी तरह देखा एक तो वह दूसरा जो प्रकार मैंने तुम्हें समझाया उस प्रकार अब एक तीसरे दृष्टिकोणसे इसी बातको समझनेका प्रयास करते हैं **सशयोऽथ विपर्यासो निश्चय स्मृतिरेव च। स्वाप इत्युच्यते बुद्धे लक्षण वृत्तिस्त पृथक्।।**

बुद्धि जब किसी भी विषयका अवगाहनरूप व्यवसाय करती है अर्थात् उसके साथ लेना देना करती है, तब किस किस प्रकार करती है? जागृत बुद्धि या तो विषयमें सशय करती है या फिर विषयके आभासका बहाना बनाकर कुछ भ्रम उत्पन्न कर लेती है या फिर विषयके बारेमें कुछ निश्चय उत्पन्न करती है अथवा एक विषयके अनुभव उपरान्त उसके जैसे ही किसी दूसरे विषयके बारेमें स्मृति उत्पन्न कर लेती है अथवा विषयके बारेमे कुछ स्वप्न देखने लगती है इन सब प्रकारके लेन-देन बुद्धि विषयके साथ करती है विषयके साथ बुद्धि जब इस प्रकारका लेन-देन करती है तो उसमे किसी जक्चरपर चिंता कि चिंतन खडा हो जाता है उद्वेगके कारण

कुछ उद्वेग हमें विषयके बारेमे होते सशयके कारण होता हैं कुछ उद्वेग हमें विषयके बारेमें हुती भ्रमणाके कारण हो जाता हैं विषय जैसा भी हो लेकिन हम इसे किसी अलग प्रकारसे ही समझ लेते हैं उसके कारण हमको उद्वेग हो जाता हैं हम कोई हमारा विषय देख रहे हैं उसमें कोई प्रोब्लम नहीं है लेकिन उससे भूतकालकी याद आ रही हैं उसके कारण चिता खडी हा जाती हैं कोई विषय भविष्यमें हमारे लिये ऐसा रूप ले लेगा उसके कारण आशा-निराशा जगाते होते हैं उसके कारण फिरसे उद्वेग हो जाता हैं उस उद्वेगके कारण चिता होती है तो बुद्धि जितने विषयोंके साथ लेना-देना करती है, उनमे किसी भी जकचरपर उद्वेग हो सकता हैं और उसकी हम धुनाई या जुगाली करें तो चिता तक पहुच जाते हैं

<u>विषयके साथ लेन-देन करती बुद्धिके प्रकार</u>

शास्त्रोमें तुम देखोगे कि बुद्धिके कुछ दूसरे भी प्रकार बतानेमें आये हैं उन्हें भी हमें समझना पडेगा महाप्रभुजी कई तरीकोंसे हमें समझा रहे हैं उनको समझनेके लिये इन सूत्रोंको लिख लो **स्मृति व्यतीतविषया बुद्धि. तात्कालिकी मता। मति आगामिनी प्रोक्ता प्रज्ञा त्रैकालिकी मता।। प्रतिभा नवनवोन्मेषशालिनी कथिता बुधे.।**

कुछ लोग स्मृतिका प्रयोगकरके जब विषयके साथ लेन-देन करते हैं तो उनमे प्रत्येक समय बुद्धि वर्तमानमे है और उसका विषय भूतकालमे होता है परन्तु विषय भी उपस्थित होता हैं और बुद्धिभी उपस्थित होती है तो इसे केवल बुद्धि कहते हैं क्योंकि **बुद्धि. तात्कालिकी मता** अब मति किसे कहते हैं? **मति आगामिनी प्रोक्ता** शब्दकोषमें बुद्धि कहो कि मति कहो ये दोना पर्यायवाची शब्द हैं लेकिन अर्थछाया कोम्प्युटर जिसका अनुवाद नहीं कर सकता वैसी परिस्थिति यहा हैं तो मति हम किसे कहते हैं कि जिसे दूर दृष्टि कहते हैं कुछ होना हैं तो उसके होनेसे पहले बोध हो जाये दूरदृष्टि होती हो तो

उस व्यक्तिको हम बुद्धिमान न कहकर मतिमान कहते है उदाहरणके तौरपर स्त्री एक जैसी, परन्तु किसीसे पैदा हुई उसकी पुत्री किसीको ब्याही उसकी पत्नी और किसीको पैदा कर रही है तो उसकी मा यहा स्त्री तीन नहीं हैं, स्त्री एकही है. इसी प्रकार एकही बुद्धि जब विषयसे पैदा होती है, विषयकी पुत्री जैसी उसे हम स्मृति अथवा बुद्धि कहते हैं विषय समाप्त होनेके बाद भी विषयजन्य जो बुद्धि बची रही होती है तो वह स्मृति और विषय भी वर्तमान हो और उससे जन्मती बुद्धि भी विद्यमान हो तो केवल बुद्धि कहलाती है विषयको उत्पन्न करनेवाली बुद्धिके फिरसे दो भेद १ मति और २ प्रतिभा

प्रज्ञाका स्वरूप :

प्रज्ञा त्रैकालिकी मता किसीको हम कहें कि यह प्रज्ञावान है तो प्रज्ञा किसी दिन किसी भी कालमे बधती नहीं है जो त्रैकालिक विषयोका अनुभव कर सके उसे प्रज्ञा कहते हैं अर्थात् मैं कोई एक बात कह रहा हू यह आज सत्य है लेकिन कल यह सत्य न रह जाती हो तो यह बात मुझे प्रज्ञासे समझमे नहीं आई बुद्धिसे समझमे आई है एक बात मैं कह रहा हू, भूतकालमे सच्ची थी लेकिन आज सत्य नहीं है, तो यह मेरी स्मृति हो गई आज मुझे कोई बात समझमें आ रही है लेकिन वर्तमानमें कुछ वैसा है नहीं परन्तु सौ पचास साल बादमे आने वाली है तो इसे न तो स्मृति कहा जाता है और न ही बुद्धि लेकिन इसे मति कहा जाता है प्रज्ञा परन्तु त्रैकालिकी होती है प्रज्ञासे हमको जो अनुभव होता है वह कोई देशिक कि कालिक वास्तविकता नहीं लेकिन सर्वकालिक वास्तविकता होती है अतएव प्रज्ञा विषयको ब्याही हुई विषयकी अर्धांगिनी होती है

प्रतिभाका स्वरूप :

प्रतिभा विषयको प्रकट करनेवाली बुद्धिकी एक वेराइटी है प्रतिभा अर्थात् विषयसे उत्पन्न होती बुद्धि नहीं लेकिन

विषयको उत्पन्न करनेवाली जो बुद्धि, तुम्हे जैसे अच्छा लगे वैसे विषयको तुम प्रस्तुत कर सकते हो अतएव मोटे तौरपर कवियोमें प्रज्ञा नहीं होती, कवि इतिहासकार नहीं होते क्योंकि इतिहासकारमें स्मृति काम करती होती है कवि केवल फिक्शन ही करते हैं ऐसे भी नहीं होते किसीको कवि कब कहा जाता है कि जब कोई मनुष्य अपनी प्रतिभा प्रयोगमे लाता है, अपना कुछ अलग सृजन कर सकता ह कि जिसे दुनियामे किसीने देखा कि जाना न हो कवि कहे तो समझमे आये इसे हम प्रतिभा कहते हैं जिसमें प्रतिभा होती है वह ब्रह्माके कोम्पिटीशनमें कुछ नया सृजन कर सकता है

कर्तृप्रज्ञा विवेक

बुद्धिके चार डाइमेन्शन चार आयाम हैं चिकित्सा जब चिंता कि चिंतनकी करनी हो तब इन चार आयामोमें से किसी एक आयामको पकड करके करनी होगी उसीको निवेदितात्मभि मे कर्ताकी प्रज्ञाके विवेकको महाप्रभूजी ढिंढोर रहे है कि तू निवेदितात्मा फॉर ऑल दि टाइम है कि नहीं मुझे जवाब दे? तू तेरी प्रज्ञा इस प्रकार प्रयोगमे ला सकता है कि नहीं? तूने जिस दिन तुलसी समर्पी ठाकुरजीके चरणोमें उस दिवससे निवेदितात्मा बना कि नहीं? अगर आज निवेदितात्मा रह ना गया हो तो बात खत्म गई ना! आ तू तेरी प्रज्ञाका प्रयोग कर और समझ कि जो निवेदितात्मा है यह फॉर आल दि टाइम निवेदितात्मा है इस प्रज्ञासे इस शास्वत वास्तविकताको तू समझ सकता है कि नहीं समझ सकता? बोल जवाब दे, आर्थिक उपदेश है यह प्रज्ञासे होता जो विवेक तुझे निवेदितात्मा द्वारा सूचन करनेमें आया है यह बात तुम्हे समझमें नहीं आये तो पूछो फिर लेकिन मुझे लगता है कि मैंने अपेक्षित सरलता कर दी है

सम्प्रदानमतिका विवेक

**पुष्टिस्थो** भगवान्मे सप्रदानमतिके विवेकका प्रयोग करनेका उपदेश है ध्यानसे समझो अब तुम्हे मतिका अर्थ समझमें आयेगा कि **मतिः आगामिनी प्रोक्ता पुष्टिस्थो भगवान् इति.** पुष्टिस्थ हैं यह तुम्हारी किसी भी दिन लौकिक गति होने ही नहीं देगे! स्वय पुष्टिमार्गमें जब है, जब तू पुष्टिमार्गमें आया है तो फिर तेरी लौकिक गति कैसे होने देंगे? तो जिन्होंने आत्मनिवेदन किया हैं उसे **सम्प्रदान** कहा जाता हैं जिसने आत्मा और आत्मीय वस्तु समर्पित करी हैं उसका विवेक, उसके स्वरूपका विचार कि वह पुष्टिस्थ है? वह पुष्टिस्थ है यह जो तुझे बराबर समझमे आता है, मतिमें आवे कि मतिका प्रयोग करके इतना समझ सके कि भगवान मेरा ऐसा कदापि नहीं करेंगे बस तो तूझे बात समझमें आ गई चिता करनेका कोई कारण रह नहीं जाता

<u>निवेदितात्माको किसी भी प्रकारकी चिता नहीं करनी</u>

यह प्रथम श्लोक तुम ध्यानसे समझ लोगे तो आगेके श्लोकोंमें भी प्रयोगमें आते उपाय अच्छी तरहसे समझ सकोगे कि यह नवरत्नका उपक्रम श्लोक है वैसे इसमें कोई एक पर्टिकुलर चिता कहनेमें नहीं आई जब किसी चिताका निषेध करनेमें आयेगा उन सब चिताओंकी यहा शुरुआत करी है महाप्रभूजीने अतएव इसमें कोई स्पेसिफिक चिता वर्णन करनेमें नहीं आई लेकिन निवेदितात्मा अधिकारी कौन है? और ऐसी चिता कभी भी नहीं करनी ऐसे एक जनरल बात कह कर यहासे महाप्रभूजीने उपदेशकी शुरुआत करी है

<u>आत्मचिंतनकरने वाली बुद्धि मनसे नहीं दौडती</u>

जो बुद्धि आत्मचिंतन कर रही है वह बुद्धि कभी मनके पीछे नहीं दौडेगी हमेशा एक नियम है, उदाहरणके तौरपर तुमको आत्मचिंतन ऐसा होता हो कि मैं रोगी हू, डॉक्टरने मुझे चलनेके लिये मना किया है कि चलोगे तो तुमारी जोडी हुई

हड्डी फिरसे टूट जायेगी तो तुम्हें बराबर आत्मविवेक है कि जो मैं पलगसे खड़ा होउगा तो जो हड्डी जुडी है वह फिरसे टूट जायेगी आत्मविवेक होगा तो तुम्हारे मनमें कितनी भी इच्छा होती होगी खडे होनेकी कि चलनेकी इन सबपर तुम काबू पा सकोगे तुम खडे होनेका कभी साहस नहीं करोगे तो हर समय आत्मचिंतन जो व्यक्ति करता है उसकी बुद्धि कदापि मनके पीछे नहीं दौडती मन तुमको ललचायेगा इशारा करेगा, लेकिन मनके पीछे आत्मचिंतन करनेवाली बुद्धि कभी नहीं दौडेगी मनके पीछे रोमियो कि लैला बनकर दौडती बुद्धि कभी आत्मचिंतन नहीं कर सकती क्योंकि मनका जो मेकेनिज्म् है वह ऐसा है कि एक जगह पर टिकता नहीं एक क्षणमे यहा जाये, दूसरे क्षण वहा जाये अतएव इसके साथ जो बुद्धि भी रखडती हो तो यह चिंतन कर नहीं सकती, इसे तो चिंता ही करनी पडेगी मनके साथ रखडपट्टी करती बुद्धिका चिंताके अतिरिक्त दूसरा कोई भवितव्य नहीं हो सकता

<u>परमात्मानुगामिनी बुद्धि विषयसे विचलित नहीं होती</u>

एक मन, दूसरी आत्मा और उसके पीछे आता है पुष्टिस्थ परमात्मा परमात्माके पीछे चलती तुम्हारी बुद्धि मैं बुद्धि शब्द प्रयोगमें ला रहा हू प्रज्ञा नहीं प्रयोगमे ला रहा, मति प्रयोगमे नहीं ला रहा हू, स्मृति नहीं प्रयोगमें ला रहा परमात्माके पीछे चलती तुम्हारी बुद्धि कभी आत्मचिंतन कि विषयचिंतन नहीं कर सकती यह आत्माको भी समझेगी तो परमात्माके अशरूपमें समझेगी विषयको भी समझेगी तो परमात्माके अशरूपमें समझेगी यह किसी भी दिन परमात्मासे अलग अपने आपका चिंतन करा ही नहीं सकती अतएव परमात्मानुगामिनी बुद्धिमें विषयकी चिंता सम्भवित हो नहीं सकती बुद्धि परमात्मानुगामिनी बनती है आत्मनिवेदनसे जो प्रक्रिया महाप्रभुजी बताना चाह रहे है वह प्रक्रिया यह है कि तुम्हारी बुद्धि इस प्रकार परमात्मानुगामिनी हो कि तुम इतने

निश्चित हो जाओ कि तुमसे कोई विषयरूपी कमान्डर आकरके पूछे कि **तुझे एक मिनिटमे मैं विचलित कर सकता हू भक्तिमार्गसे** और हम भी कह सके कि हा तू **मुझे एक मिनिटमें विचलित कर सकता** है कि नहीं **यह तुझे पता** है कि **नहीं?** तो वह विषय स्वय ही घबरा जायेगा, उद्वेग हो जायेगा उस समय क्योंकि विषय तुम्हे इशारा कर रहा है और तुम उसे कहो कि हा मैं जीवके तौरपर इतना **लाचार** हू लेकिन मैंने परमात्माको आत्मनिवेदन किया है अतएव वह **परमात्मा** कभी भी मेरी लौकिक **गति** नहीं होने देगा **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम्**

इस परमात्मचिन्न द्वारा तुम्हारेमें भक्ति बढानेकेलिये यहा यह नवरत्नका उपदेश देनेमें **आ** रहा है **यथा भक्तिः प्रवृद्धा स्याद् भक्तिमार्गे प्रवृत्तस्य दार्ढ्यार्थम् इदम् उच्यते** इस बातको ध्यानमें रखो प्रथम श्लोकमें सबसे पहले भक्तिकी दृढताकी बेसिक प्रोब्लेम है यह प्रोब्लम यहा महप्रभुजीने समझाई है यहा सप्रदानमति और कर्तृप्रज्ञाके कौम्बिनेशनमें आप लोगोंमें जिनने एक्युप्रेशर और एक्युपक्चर ट्रीटमेटके बारेमे सुन रखा होगा कि जाना होगा तो आपको ख्याल होगा कि रोग कहीं भी हो सकता है लेकिन इसका बिन्दु निर्धारित होता है कहा उसे पक्चर करना कि कहा उसे प्रेशर देना किस बिन्दु पर दबानेसे कौनसा रोग मिटेगा, ऐसे ही महाप्रभुजी किस बिन्दुको प्रेशराइज् कर रहे है? जिस बिन्दुको प्रेशराइज् करनेसे तुम्हारी चिताका दर्द मिट सके उनमेंसे एक बिन्दु है तुम्हारी खुदकी निवेदितात्मा होनेके आत्मनिर्धार और दूसरा बिन्दु है जिस परमात्माको तुमने निवेदन किया है उस परमात्माके बारेमे उसके पुष्टिस्थ होनेका विश्वास इस परमात्माके पुष्टिस्थ होनेके बिन्दुको थोडा प्रेशर मारो, उसके बाद तुम चितासे मुक्त हो जाओगे इन दो ठिकानों पर प्रेशर दोगे तो फिर चिंता नहीं होगी नहीं तो चिंता तो होनी ही है

एक बात दृढ करके रखो कि अपने आत्मनिवेदी होनेके पॉइन्टको तुम प्रेशराइज् नहीं करते, परमात्माके पुष्टिस्थ होनेके पॉइन्टको जब तुम प्रेशराइज् नहीं करते तो उस समय तुम्हारी बुद्धिमें जब किसी बहुत आकर्षक विषयका कमाडर आयेगा और कहेगा कि अरे तुझे पता है कि नहीं तुझे भक्तिमार्गसे एक क्षणमे विचलित कर सकता हू क्योंकि तेरे घरमे बिराजते ठाकुरजी पूर्णपुरुषोत्तम न होकर केवल गुरुभावसे बिराजते हैं वे पूर्णपुरुषोत्तम तो हमारे गोवालकोंके घर ही बिराजते हैं अतएव इन छोटे ठाकुरजीकी चिंता छोडकर हमारी हवेलियोमे दर्शन-भेट-मनोरथ-प्रसादमें पूर्णभाव रख. तो तुम्हारे मनमें विश्वास होना चाहिये कि भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम्. तुम विचलित न हो जाना लेकिन इस पॉइन्टको तुमने प्रेशराइज् किया होगा तो फिर तुम छाती ठोंकके कह सकोगे कि कुछ नहीं होगा, तू विषयसे मुझे ललचाकर देख ले परन्तु यान् आस्थाय नरो राजन् न प्रमाद्येत कर्हिचित् धावन् निमील्य वा नेत्रे न पतेत् न स्खलेत् इह मैंने किसे पकडा है? पुष्टिस्थ प्रभुको पकडा है पुष्टिस्थ प्रभुको मैंने किस सम्बन्धसे पकडा है? आत्मनिवेदनके सबंधसे पकडा है अब मुझे लौकिकगतिकी चिंता करनेकी रही ही नहीं उद्वेग होगा तो सहन कर लूगा और इस उद्वेगकी भी चिंता करनेकी मुझे जरूरत नहीं है उद्वेग हो रहा है तो यह पोजिटिव साइन है

अस्तपतालमे जब तुम एडमिट होते हो तब डॉक्टर पैरके नीचे कुछ काटेदार इन्स्टुमेट लगाता है हथोडी मारता है इससे क्या होता है? यह हथोडी मारता है और हमारे पैरमे झटका लगता है तो हमारी चेतना बराबर काम कर रही है हथोडी मारे और तुम ऐसे ही पडे रहो कि मुझे तू ही रख, तो डॉक्टर समझ जाता है कि मरनेके आस पास है यह मनुष्य एक बार हथोडी मारे और तुम्हारे पैरमे झटका नहीं लगता इसका

तात्पर्य कि तुम मरनेके करीब हो तुम्हे झटका लग रहा है अर्थात् तुम्हारेमें जीवनके चान्सिस है तुम आत्मनिवेदी हो और लौकिक गतिके हथोडेसे तुमको झटके लग रहे ह तो तुम आत्मनिवेदीके तौर पर जीवित हो अब तुमने प्रेशर पॉइन्टकी टेकनिक्से स्वस्थ करा जा सकता हैं **भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिम्**

तुम्हे झटका ही नहीं लग रहा है तो डॉक्टर समझ जाता है कि हथोडी मारनेकी जरूरत नहीं है यह तो मरा हुवा ही है जिसको चाकू पैरमें चुभाने पर चुभन न होती हो, हथोडी मारें तो पैरमें झटका नहीं लगता हो, तो **रामनाम सत्य है सत्य बोलो गत्य है** हो गई इसकी तो फिर अधिक चिंता इसके बाद करनेकी नहीं होती जाने दो ना, बस ऐसे हो जाता है यह सारा नवरत्नका उपक्रम महाप्रभुजीने किया है

## 'नवरत्न सूत्र है और विवेकधैर्याश्रय उसका भाष्य है' विधानकी परीक्षा

महाप्रभुजीने जो उपाय चितानिवृत्तिके नवरत्नमें उपदेशित किये हैं उनका ही विस्तारपूर्वक उपदेश आपश्रीने विवेकधैर्याश्रयमे किया हैं अतएव यहा वर्णित चिंताके विविध प्रकारोंमे किसी चिंताके निवारणके लिये आपश्री विवेक तो किसी चिंताके निवारणके लिये धैर्य तो किसी चिंताके निवारणार्थ आश्रयका उपदेश दे रहे है अतएव विवेकधैर्याश्रयमे उपदिष्ट चार प्रकारके विवेक, चार प्रकारके अविवेकोंको दूर करनेकेलिये उपदेशित किये हैं वह अविवेक अगर दूर न हो तो हमारे भीतर चिंताको पैदा कर सकते है उसी प्रकार जो चार प्रकारके धैर्योंका उपदेश दिया वैसे धैर्योंके अभावमें उदभव होते अधैर्य हमारे अन्दर चिंता प्रकट कर सकते हैं इसी प्रकार ही आश्रयसिद्धिके चार उपाय दिखाये हैं उनके अभाव होनेपर

शरणागत कि भक्त जीवके चिंताके घेरेमें फस जानेके पूरे पूरे चान्सिस हैं

<u>आत्मनिवेदीका आत्मनिर्धार ही सहज उद्वेग उत्पन्न करता है</u>

यह जितने भी चिंतन है वह चिंताको निवृत्त करनेके उपाय हैं दूसरी जगह इनकी एप्लीकेशन करोगे तो कुछ गलत अर्थ ही निकलेगा अर्थात तुम पथ भ्रष्ट हो जाओगे, बहक जाओगे लेकिन जब इस पर्टिकुलर प्रकारकी चिंता हो रही हो तो एक चिंताको कोई एक पर्टिकुलर उद्वेग कारण होगा यह उद्वेग इस कारण है कि तुमने किसी प्रकारका आत्मनिर्धार अपनेलिये किया होगा कि तुम कौन हो? उसके कारण तुमको उद्वेग हो रहा है किसी लडकीको कोई लडका छेडता हो तो इसमें मुझे उद्वेग होगा? लेकिन मेरी बहिन या लडकी या पत्नि हो तो उद्वेग होगा कि नहीं? क्यों उद्वेग होगा? क्योंकि तुमने आत्मनिर्धार किया है कि मैं इसका भाई हू, मैं इसका पिता हू, मैं इसका पति हू, मैं इसका लडका हू, अब ऐसा आत्मनिर्धार करनेके बाद इससे कोई छेडछाड करे तो मुझे उद्वेग हो तो उसके बाद मुझे चिंतन कि चिंता जो कुछ करना हो तो कर सकता हू लेकिन मेरा आत्मनिर्धार ही न हो कि जिस लडकीको छेडा जा रहा है उसका मैं कौन? यह जो मुझे पता न हो तो फिर चिंता करनेकी क्या जरूरत है? छेडनेवाला छेड रहा है और छिडनेवाली छिड रही है इसमें मेरा क्या जाता हैं

अतएव आत्मनिवेदनका भाव होगा तो यह चिंता तुमको होगी कि मैंने ब्रह्मसम्बन्ध लिया है और प्रभु मुझसे सेवा नहीं ले रहे है, घरके बाकी सब सदस्य सेवा कर सकते है तो उद्वेग होना तो स्वाभाविक ही है यह उद्वेग होना बहुत ऊची कक्षाकी बात है ऐसा उद्वेग हरेकको नहीं होता ऐसा उद्वेग अगर होता है तो अपनेको महान सौभाग्यशाली समझना चाहिये उस उद्वेगकी

धुनाई या जुगाली करके अगर तुम चिंता करोगे तो उसका निवारण महाप्रभुजीने इस श्लोकमे किया है

चितानिवृत्तिके लिये कायिक, वाचिक और आन्तरिक उपाय

कल एक बार मैंने चार वाक्योंका विश्लेषण करके आपको समझानेका प्रयास किया था सबसे पहले तीनो कागजोंके ऊपर एक बार दृष्टिपात करके तुम देख लोगे तो तुम्हें विचार आयेगा कि एकसे आठवें वाक्य तक आन्तरिक उपायोपदेश हैं नवमें वाक्यमें कायिक और आन्तरिक उपायोपदेश है दसवें वाक्यमें फिरसे आन्तरिक उपायोपदेश हैं और ग्यारहवें वाक्यमे वाचनिक उपायोपदेश है तो मूलमें एक यह बात विशेष ध्यानमें रखनेकी है कि चिंता निवृत्त करनेकेलिये महाप्रभूजीने कायिक, वाचिक, मानसिक अथवा आन्तरिक तीनों प्रकारके उपाय बताये हैं आन्तरिक कहो कि मानसिक कहो बात एक ही है आन्तरिक कहनेपर बहुत सारे आन्तरिक क्रिया कलापोंको हम सकलित कर सकते है मानसिक कहनेपर केवल मन ही कहलाता है आन्तरिक कहना अर्थात् अंत करण अंत करण चार प्रकारका होता है मन, बुद्धि अहकार और चित्त आन्तरिक कहनेपर हमने चार उपाय संग्रहित किये ऐसा कहा जायेगा तो ऐसे आन्तरिक उपायोके अतिरिक्त कायिक उपाय चिंता निवृत्त करनेके और वाचनिक उपाय, तात्पर्यत हमारी एक त्रिपुटी कहलाती है साधनामे कायिक, वाचिक, मानसिक इन तीनो चिंता निवृत्त करनेके उपायोंको महाप्रभूजीने काममें लिया है

नवरत्न-विवेकधैर्याश्रय ग्रंथोकी सगति

यह जो नबर डाले हैं तो इनके ऊपर तुम दृष्टि डालोगे तो तुमको स्पष्ट रीतिसे विचार आ जायेगा अब जिस प्रकार कहा गया है उसे एकके बाद एक करके देखेंग उसके अतिरिक्त जिन आन्तरिक उपायोका उपदेश आठ वाक्योंमे महाप्रभुजीने दिया है उसमें विशेष करके मैं आप लोगोंको दो

तीन दिनोसे कह रहा हू कि नवरत्न यह सूत्रात्मक ग्रथ है अत करणप्रबोध उसका व्यवहारिक डिमोन्स्ट्रेशन है इन सिद्धान्तोंको महाप्रभुजी स्वय किस प्रकार अपने व्यवहारमे लाये उसकी कथा कहनेवाला ग्रथ है और विवेकधैर्याश्रय जो कुछ अत करणमें कहनेमें आया है उसका भाष्य है, विस्तार है अब भाष्य या विस्तार किस प्रकार है? इस बारेमे अगर हमको ध्यान देना हो तो हम सब अच्छी तरहसे जानते है कि विवेकधैर्याश्रय ग्रथमे करीब करीब तीन बात कहनेमें आयी हैं, एक विवेककी बात, एक धैर्यकी बात और एक आश्रयकी बात **विवेकधैर्य सतत रक्षणीये तथाश्रय**

महाप्रभुजीने उसी प्रकार शुरुआत करी है, विवेक, धैर्य, और आश्रय इन तीनोंका रक्षण हमको करना चाहिये और विवेक क्या? तो **विवेकस्तु हरि सर्व निजेच्छात करिष्यति.** यह बात नवरत्न और विवेकधैर्याश्रयकी एकसी ही बात है इसमें किसी प्रकारका विस्तार नहीं है यह तुम नवरत्नका पाठ और विवेकधैर्याश्रयका पाठ करके समझ सकते हो

उसी प्रकार- **त्रिदुःख सहनम् धैर्यम् आमृते. सर्वत. सदा** अर्थात् आधिभौतिक, आध्यात्मिक, आधिदैविक तीनों दुःखोको सर्वदा सह लेना यह धैर्यकी परिभाषा करनेमें आई है और आश्रयकी परिभाषा करते हुवे महाप्रभुजीने एक बात कही **ऐहिके पारलोके च सर्वथा शरणम् हरि.** चाहे कोई ऐहिक हमारा प्रयोजन हो कि कोईक पारलौकिक प्रयोजन हो किसी भी प्रयोजनमें कि किसी भी सदर्भमें **शरण** अर्थात् मेरे रक्षक श्रीहरि ही है यह बात किसी भी दिन भूलनी नहीं चाहिये यह बात हमारे मनमें से निकले नहीं तो हमें आश्रय सिद्ध हुवा कहलायेगा

<u>विवेक-धैर्य-आश्रयके शिखरपर पहुचनेकेलिये तलेहटीसे शुरुआत करनी पड़ेगी</u>

अब यह विवेक, धैर्य और आश्रयकी परिभाषा करनेमे आई परिभाषा अर्थात् समझो कि कोई हिमालयके एवरेस्टकी एक आदर्शात्मक शिखरकी स्थिति क्या है? और इस हिमालयके ऊपर तुम्हे चढना हो तो जहासे चढाई शुरु करोगे वहा कोई सत्ताईस हजार फुटकी हाईट नहीं होती दस कि पाच हजारकी होगी, अलग अलग हाईट हो सकती हैं जहासे तुम चढाई शुरु कर सकते हो उसी प्रकार विवेक, धैर्य अथवा आश्रयकी और जब तुम अग्रसर होओगे, उस समय यह जो परिभाषा देनेमें आ रही हैं शिखर जैसी, क्योंकि पर्वतकी जो हमको गणना करनी हो तो यह इसकी तलेहटीसे नहीं होती, शिखरसे होती है जैसे हिमालयमे कितने पहाड? ऐसा कोई हमे कहे तो हम साधारणतय कितनी तलेहटीया हैं ऐसा नहीं कहते हम ऐसा कहते हैं कि कितनी शिखर हैं जितनी शिखर उतने पहाड

जब हम पर्वतारोहणका कोई मनोरथ लेकर अग्रसर होते हैं तो उस समय यह शिखर हमारी बुद्धिमें लक्ष्यरूपमे होनी चाहिये अब हेलीकौप्टरसे तुम्हें वहा कोई डालदे तो यह कथा अलग है अन्यथा तुम सीधे शिखरके ऊपर पहुच नहीं सकते बडा हो कि छोटा, सभव हो कि असभव, शक्य हो कि अशक्य, कभी भी शिखरकी ओर तुमको जाना हो तो शुरुआत उसकी तलेहटीसे ही करनी पडेगी और यह तलेहटीकी ऊचाई वह नहीं होती जो शिखरकी होती है

यह बात तुम हृदयमें एकदम नोट करके रखो कि किसीभी बातकी शुरुआत हमें करनी हो अर्थात् जीनेकी भी शुरुआत करनी हो तो जन्मते ही कोई जवान पैदा नहीं होता जन्मते समय तो छोटा बच्चा पैदा होता है जो कि चलना बोलना कि भाषा समझना भी नहीं जानता, धीरे धीरे, जैसे जैसे

हम उसे पालते है वैसे वैसे उसके गुण, उसकी सामर्थ्य उभरनेके साथ खिलती जाती है एक दूसरी वास्तविकता और होती है कि किसी भी पहाड़के ऊपर चढकर तुम चोटी पर्यन्त पहुच भी गये और उसके बाद चलोगे तो नीचे ही उतरोगे इसी प्रकार जवानीके बाद बुढ़ापा भी आता ही है और बच्चे बूढ़े एक समान. आखिरमें हो ही जाते है बच्चेके दांत नहीं होते वैसे ही बहुत बूढे लोगोंके भी दात नहीं होते यह भी बुद्ध होता है और वह भी बुद्ध ही होता है ऐसे ही बहुतही बूढा हो जाता है तो बुद्धिभी हमारी किसी ऐसे बुढापेमें फस जाती है कि बहुत बार सामान्य बात भी समझमें नहीं आती

अब ही मुझे कोई भाई कह रहे थे कि किसीको ऐसा समझमें आ गया कि मैंने यहा ऐसा प्रतिपादन किया कि नवरत्नके एक एक श्लोकको बोल बोल कर यज्ञमें आहुति देनी अब या तो यह बच्चा होगा अथवा तो कोई बूढा! जो युवावित्त होगा उसे तो समझमे आयेगा कि ऐसी बात कमसे कम मैंने तो नहीं कही कि चिन्ताकापि न कार्या स्वाहा, निवदितात्मभि कदापीति स्वाहा, भगवानपि पुष्टिस्थ स्वाहा तुम करो मैंने तो मजाक किया कि ऐसा कभी मत करने लगना न करनेके लिये कहा था लेकिन पहले ही जो बूढा हो कि बच्चेका मन हो उसे कभी ऐसे भी समझमें आ जाता है श्याममनोहरजीने इतनी बार स्वाहा स्वाहा किया तो फिर हम न करें तो अच्छा लगेगा? प्रवचन क्या सुना हमने? बूढापेमे ऐसी प्रोब्लम हो जाती है मेरे भी बाल सफेद हो गये हैं लेकिन इतना बूढा नहीं हू कि जितना तुम समझ रहे हो अतएव ऐसी बाल्यावस्थामें और बुढापेमे कुछ न कुछ ऐसा ही सिम्पटम खडा हो जाता है

<u>तलेहटीकी ऊचाई और शिखिरकी ऊचाईका भेद समझना पडेगा</u>

शिखरकी जो ऊचाई है वह ऊचाई तलेहटीमें तुमको नहीं मिलेगी इसीलिये महाप्रभुजी विवेक, धैर्य और आश्रय और उनकी तलेहटीया भी हमको समझाते हैं और उनके शिखिर कैसे हैं वह भी समझाते है सबसे पहले विवेककी तलेहटी कहासे शुरु होती है? तो महाप्रभुजी पहली तलेहटी यह बताते हैं कि तुम भगवानके सामने प्रार्थना करना बद करो भगवानके आगे प्रार्थना करना बद किया तो तुम पुष्टिमार्गीय विवेककी तलेहटीमें पहुच गये प्रार्थना अर्थात् अपने कीर्तन नहीं, और प्रार्थना अर्थात् ठाकुरजीको हम भोग धरते हैं और उस समय कानि देना वह प्रार्थना भी नहीं प्रार्थना शब्दका अच्छी तरहसे अर्थ समझो प्रार्थना अर्थात् हे प्रभु! मेरे लडका नहीं होता तुम लडका दो, मेरा धधा नहीं चलता तुम मेरा धधा चलादो, अरे! भगवान कोइ केपिटल लोन देनेका बैंक खोलकर नहीं बैठा कि तुम्हें लाख रुपयाकी केपिटल दे कि जिससे तुम धधा शुरु कर सको फिर तुम इसमेंसे खाली पचास हजारका मनोरथ करो ठाकुरजीका, वह भी फिर बडा मदिर हो तो तुम लाख रुपयेका मनोरथ करो और अगर छोटा मदिर हो तो पचास हजारका करो यह सब होते हुये कोई बालक तुम्हारे पास छप्पनभोगके लिये आये तो तुम दस पद्रह हजारमें टिल्लिलीली कर दो और फिर दर्शन करने भी मत जाओ तो भगवान कोई ऐसा पागल नहीं है कि तुम्हारा ऐसा धधा चलाने बैठे बडे मदिरमें छप्पनभोग करानेपर तुम्हारा नाम अखबारमें छपाना हो तो तुम लाख रुपया दो अगर अखबारमें छपती खबरमें कुछ कमी लगे तो तुम पचासमें पटा लो महाराजको कि अभी फूल नहीं तो फूलकी पखडी कोई छोटा मोटा महाराज आये जिसमें कुछ पब्लिसिटी वेल्यु तुमको न लगती हो तो पद्रह हजारमें ही तुम उनको तुम विदा करदो दर्शन करनेकेलिये चाहे जाओ या न जाओ पद्रह हजार तुमने छप्पनभोगके दिये हों और ये कहे कि दर्शन करने तो आना तो तुम फिर यह कह देना कि प्रसाद घर भिजवा देना, तो इस प्रकारकी मनोवृत्ति हमारी होती है

१. प्रभुसे प्रार्थना नहीं करनी यह प्रथम विवेक :

भगवान इतना भी पागल नहीं हैं कि तुम्हारा धंधा चलानेके लिये कुछ केपिटल दे अतएव ऐसी केपिटलकी हम भगवानके आगे प्रार्थना करें तो ऐसी प्रार्थनाकी महाप्रभुजी ना करते हैं. **प्रार्थिते वा तत्. कि स्यात् स्वाम्यभिप्रायसंशयात्.** प्रभु तमको क्या देना चाह रहे हैं उसकी समझ अगर तुमको अच्छी तरहसे नहीं हो और तुम माग माग करके कोई क्षुद्र वस्तु माग लो तो तुम्हारा अहित होगा कदाचित प्रभु तुम्हें इसके बजाय अधिक देना चाह रहे हो? प्रभु तुम्हारे स्वामी हैं मागकर तुम एक साथ प्रभुके ऊपर दो आरोप लगाते हो एक आरोप तो यह कि तुम समझते नहीं हो कि मेरी जरूरात क्या हैं? और तू निर्दयी है कि मेरे मागनेके बाद ही देता है, इससे पहले अपने आप तो देता ही नहीं ऐसे दो दो आरोप लगा दो प्रभुपर और फिर कहो कि मेरा धंधा चलाओ, मेरा कष्ट दूर करो इस प्रार्थनाकी वृत्तिके ऊपर तुम काबू पाओ तो विवेकका पहला कदम तुमने रखा, विवेककी तलेहटीमें तुम पहुच गये

२. अभिमान नहीं करना यह दूसरा विवेक :

अब इसके बाद विवेकका दूसरा कदम महाप्रभुजी कहते हैं कि तुम प्रार्थना नहीं कर रहे तो यह बहुत अच्छी बात हैं लेकिन अगर तुममें अभिमान आ गया कि प्रभुके आगे प्रार्थना ही नहीं करनी तो फिर मैं ही सारे कामकाजका कर्ता हू फिर मुझे प्रभुकी क्या गरज? जिसे कोई प्रार्थना ही नहीं करनी कि जिसके आगे हाथ फैलाना ही न हो तो वह भगवान होगा अपने धामका मुझसे उससे क्या लेना देना जो मेरे कुछ काम ही नहीं आता **हम उसीको खुदा समझते हैं जो मुसीबतमे काम आये.** जो हमारी मुसीबतमें काम नहीं आता तो होगा कोई आसमानका खुदा उससे हमें क्या लेना देना? ऐसा अभिमान अगर तुममें आ गया तो इस प्रार्थना न करनेकी प्रवृत्तिकी तलेहटीपर से नीचे

किसी खदकमें तुम गिर गये अतएव दूसरा विवेक महाप्रभुजी कहते हैं कि प्रार्थना नहीं करनेका साइड इफेक्ट तुम्हारेमें ऐसा नहीं हो जाना चाहिये कि तुम्हारे अन्दर अभिमानकी वृत्ति पैदा हो जाये प्रार्थना ही नहीं करनी तो भगवान कौन होता है? प्रार्थना करनी हो तो तब ही मैं भगवानको भगवान मानू अतएव प्रार्थना नहीं करनी वह पहला विवेक अभिमान न करना यह दूसरा विवेक

३. <u>हठाग्रहत्याग यह तीसरा विवेक</u>

अभिमान न करना यह बात ठीक लेकिन मनुष्य दो प्रकारसे जी सकता है या तो दीन होकर अथवा अहकारी होकर कोई हमें दीन होनेके लिये ना कर दे तो हम अहकारी बन जाते हैं अगर अहकारी न बननेके लिये कहते हैं तो दीन बन जाते हैं यह जो दो प्रकारके एक्स्ट्रीम हैं वह महाप्रभुजीको अच्छे नहीं लगते इसका कारण समझो क्योंकि कल भी मैंने तुमको समझाया था कि यह सर्वेश्वर भी हैं और सर्वात्मा भी है तो परमात्मा हमारी आत्मा भी है और इस कारणसे इसके सामने दीन होनेकी क्या जरूरत है? और यह सर्वेश्वर भी है तो इसके आगे अहकार करनेकी क्या जरूरत है? **सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छात: करिष्यति**

इन दोनों पदोंके ऊपर तुम ध्यान दोगे तो तुमको विचार आयेगा कि परमात्माके साथ हमारे सबंधमें न तो कोई हमे अहकार करने जैसा कोई प्रश्न और न ही हमें कोई खोटी दीनता करनेकी आवश्यकता है महाप्रभुजीसे मिलनेसे पहले सूरदासजी ऐसे समझते थे कि हौं **पतितनि को टीको** ऐसी गलत दीनता महाप्रभुजीने तोड दी **सूर** व्हेके **काहे धिधियात है!** अतएव गलत अहकार भी नहीं रखना ऐसा कोई एक सतुलित अभिगम हमे रखना है परमात्माके साथ अपना सबध निभानेमे वह सतुलित अभिगम हममें कब रहेगा कि जब हठकी वृत्ति हम

छोड देंगे हठकी वृत्ति छोडेगे तो यह बात समझमें आयेगी और हठकी वृत्ति नहीं छोडेगे तो यह समझमें आयेगा कि दीनता नहीं करनी तो मैं अहकार करूगा अगर अहकार नहीं करना तो दीनता करूगा

एक बार मैं इब्राहिम रहेमतुल्लारोड बसस्टेन्डसे बसमे कहीं जानेके लिये चढा वहा बीच रास्तेमें एक बहुत ही तगडा आदमी भी चढा कडक्टरने उसे रोक दिया उतर जाओ बस स्टोपके बगैर कैसे चढे? फिर दोनों एक दूसरेसे खूब झगडे अब झगडेमें तो स्वाभाविक है जैसे तू क्या कर लेगा - तू क्या कर लेगा? ऐसे होता है तो उसमे कन्डक्टरने अचानक उसे ऐसा कह दिया कि मोटू तेरा चश्मा उतार लूगा! कदाचित उसका नम्बर ज्यादा होगा अतएव वह तुरन्त उतर गया डरके मारे मनुष्यको दो ही भाषा समझमें आती है या तो दीनताकी या फिर अहकारकी. कडक्टरने धमकी दी कि चश्मा उतार लूगा तो पहला आदमी कडक्टरकी तुलनामें तगडा था, अगर दो लप्पड कन्डक्टरको मारता तो कडक्टर गिर जाता लेकिन चश्मा ऐसी कमजोरी कि कोई उतार ले तो फिर लप्पड मारने किसको और कहा? हवामें मारने लप्पड? अर्थात् मनुष्यकी यह लाचारी है कि या तो दीन बन सकता है अथवा तो अहकारी उस आदमीने अगर गलत हठ नहीं पकडी होती कि स्टोप बगैर भी बसमें चढ गया तो भी उतरेगा नहीं तो न तो उसे अहकार दिखानेका अवसर मिला होता और न ही कंडक्टरकी तुलनामे अधिक शक्तिशाली होनेके उपरान्तभी दीनता दिखानेका अवसर उसे मूह नीचे करके उतरना ही पडा मुझे शर्म आने लगी कि इतना तगडा मनुष्य कैसे उतर गया? अब चढ ही गया है तो थोडा बहुत झगडा करे. जबकि ऐसी इच्छा रखनी अच्छी बात नहीं है तो भी उसका शरीर देखकर मुझे भी थोडा उत्साह हुवा कि इतना तगडा आदमी थोडासा भी झगडा होता तो एक सीन बसमें खडा हो जाता लेकिन चश्मेके बगैर न देख पानेकी लाचारी

ऐसी ही होती है अतएव दीनता और अहकार दोनोंसे बचना हो तो उसकी पहली शर्त है कि मनुष्यको हठाग्रह जीवनमें से छोड देना चाहिये अगर हठाग्रह छोड दे तो इन दो एक्स्ट्रीमके ट्रेपसे बच सकता है जिसकी वृत्ति हठीली है वह इन दोनोंमें से किसी एकमें कभी भी फस ही जायेगा अतएव तीसरा विवेक महाप्रभुजीने बताया है कि हठाग्रह नहीं करना

४. <u>कर्तव्याकर्तव्यके बारेमें सजगता – चौथा विवेक</u> :

चौथा विवेक अपने कर्तव्याकर्तव्यके बारेमें सतत सजगता वह कब जानी जाती है कि जब पहले कहे हुवे तीनों विवेक जाने हुवे हो अगर मनुष्यके भीतर स्वय कर्तव्याकर्तव्यकी सजगता अच्छी है तो उसके लिये उद्विग्न होनेकी शक्यता घट जाती है यह नियम जैसे सामान्य बातोंपर लगता है वैसे ही भगवत्सेवा भगवद्भक्ति कि भगवदाश्रयके बारेमें भी जान लेना चाहिये

इन चारो प्रकारके विवेकोको निभानेवाला व्यक्ति ही धैर्य धारण करनेमें सक्षम बन सकता है इस कारण विवेकके बादमें धैर्यके चार प्रकारका उपदेश महाप्रभूजीने दिया है

<u>धैर्यके चार प्रकार सहज प्रतीकार या अनाग्रह, सहन, त्याग और असामर्थ्यभावना</u> :

इन चार विवेकोंके साथ साथ महाप्रभूजीने धैर्यके भी चार प्रकार बताये हैं अनाग्रह, सहन, त्याग और असामर्थ्यभावना

<u>बौद्धिक अनाग्रह</u> :

हठाग्रह नहीं करना वह बौद्धिक विवेकका एक हिस्सा है इसीलिये कहा गया है कि बुद्धे फलम् अनाग्रह एक बौद्धिक आग्रह होता है और एक लगनवाला आग्रह जबकि बौद्धिक

हठाग्रह हम रखते हैं कि बस अब ऐसे समझमें आ गया तो वास्तविकता ऐसी ही है दूसरा प्रकार अब इस वास्तविकता का हो ही नहीं सकता उसमे हम कहें कि भाई सुनो तो जरा! तो कहेगा कि मुझे सुनना ही नहीं है! इसका नाम बौद्धिक हठाग्रह

<u>लगनवाला अनाग्रह</u>

उसी प्रकार किसी बातका आग्रह करना कि नहीं करना उस बारेमें हृदयकी लगनवाली मनोवृत्ति भी कुछ हो सकती है हमारी जिस प्रकार लगन बध गई है उसमे हठाग्रही हो जाना अर्थात् मोटे तौरपर छोटे बच्चोंको हम ऐसे कह देते हैं कि तेरी मम्मी मेरी है ऐसा बोलने वाला बिचारा मामा ही हो तो भी बच्चेको गुस्सा आ जाता है क्योंकि इसकी लगनको चोट पहुचती है कि मेरी मम्मीको अपनी कहने वाला तू कौन? अपनी मा प्रति जो इसकी लगनका आग्रह है वह चोट खानेके कारण रोने भी लगता है, झगडा भी करने लगता है कि नहीं तेरी नहीं मेरी है मा मोटे तौरपर ऐसी बचकानी भरी हुई लगनका हठाग्रह होता है

<u>व्यवहारिक अनाग्रह</u>

बुद्धि और लगनकी तरह व्यवहारमें भी आग्रह प्रकट होता है इसके लिये मकोडे बहुत प्रसिद्ध है मकोडेको तुम दस बार उसके ट्रेकसे अलग कर दो तो भी वह फिरसे उसी ट्रेकपर आ जाता है कौन जाने परमात्माने उसके भीतर क्या शारीरिक व्यवस्था डाली है कि दस बार इसे पीछे घसीटो फिर भी वहींका वहीं आ जाता ह तो मकोडेको बौद्धिक या लगनका आग्रह नहीं होता कि मेरा अपमान कैसे कर दिया तुमने, तुमने मुझे क्यों घसीटा, अब मैं फिरसे वापिस आ जाऊंगा मुझे नहीं लगता कि इतना गभीर चितन कि इतनी गभीर लगन मकोडेमे होगी लेकिन इसके शरीरकी बनावट कुछ इस प्रकार की है कि दस बार इसे घसीटो तो भी फिरसे वहींका वहीं आ जाता है

बौद्धिक, लगनवाला कि व्यवहारिक हठाग्रह नहीं रखना

व्यवहारमें भी ऐसी आग्रहिलता होती है, भावनाओंमे भी ऐसी आग्रहिलता होती है वैसे ही वैचारिक आग्रहिलता भी होती है. इन तीन प्रकारकी आग्रहिलताओंको नहीं रखना यह भी एक धैर्य धारणका असरकारक उपाय है

धैर्यकी परिभाषा

धैर्य अर्थात् सहन करना उसकी परिभाषा महाप्रभुजी इस प्रकार करते है- **त्रिदुःख सहनम् धैर्यम् आमृते. सर्वत्र सदा.** आधिभौतिक, आध्यात्मिक और आधिदैविक तीनो दुःखोंको सहन कर लेना उसका नाम धैर्य है और वह भी दो चार मिनिटके लिये नहीं परन्तु आजीवन जो दुःखसुखकी साइकल चलती रहे उसमें दो चार मिनिट सहनेका हो तो कोई भी सह लेगा इसमें कोई धैर्यकी बात नहीं है वह तो रोजमर्राकी बात है. लेकिन **आमृते सर्वत्र सदा.** आजीवन कि आमरण दुःखोंको सहन करना उसका नाम धैर्य अब इस परिभाषाके शिखिरके ऊपर जाकर धैर्यको देखने जाओगे तो अपना धीरज ही छूट जायेगा ऐसा धीरज कौन रख सकता है? कोई नहीं रख सकता मैं किशनगढमे विवेकधैर्याश्रयके ऊपर प्रवचन कर रहा था मेरी कुटेवके कारण सात दिन तलक विवेकके ऊपर ही प्रवचन चालू रहा आठवें दिन एक भाईने खडे होकर मुझसे पूछा कि महाराज! इतने दिनोंसे आप विवेकके ऊपर बोल रहे हो, धैर्य कब आयेगा? मैंने कहा तुम्हारा धैर्य छूट रहा है तो मैं भी अपना प्रवचन पूरा करता हू और प्रवचनका समापन हो गया धैर्य निभाना बहुत मुश्किल बात है उसके आदर्शरूपमें लेकिन व्यवहारमें थोडासा धैर्य थोडे समयके लिये हम निभा सकते हैं इसमें कुछ मुश्किल नहीं आती यह जो पारिभाषिक धैर्य है **आमृते सर्वत्र सदा** दोनों दुःखोंको झेलना यह आदर्शकी ऊचाई है

## लगनके अनाग्रह द्वारा धैर्यको प्राप्तकरनेकी शुरुआत

इस आदर्शको पानेके लिये शुरुआत किस प्रकार करनी? जैसे किगकाग एक आदर्श पहलवान है लेकिन तुम आजसे घी खाना चालू करो तो कोई किगकाग नहीं बन जाओगे धीमे धीमे थोड़ा थोड़ा घी खाना शुरु करो तो किसी समय जाकर तुम किगकाग जैसे बन जाओगे अब किगकागकी जितनी खुराक थी उसे तुम आज खाकर तगडे बन सको तो अच्छी बात है परन्तु किगकाग बननेकी बजाय तुम्हें दस्त हो गये तो क्या होगा? अतएव घी खानेसे तगडे ही बन जाते हैं इसकी कोई गारन्टी नहीं है बीमार भी हो सकते हैं तुम्हे तगडा बनना है तो इसके लिये तुम्हे प्रोग्राम बनाना पडेगा धीरे धीरे तुम्हें घी खाकर उसे पचानेकी शक्ति बढानी पडेगी तो तुम इतने तगडे बन सकते हो किसी भी बारेमे प्रमुखता कमिट्मेन्टकी होती है उसी प्रकार धैर्यमें महाप्रभुजी कहत है भावनाके अनाग्रहसे धैर्यकी शुरुआत होती है

## लगनके हठाग्रहसे धैर्य खडित होगा

लगनका हठाग्रह बहुत मत रखो लगन रखो लगन मत रखो यह महाप्रभूजी नहीं कह रहे हैं धैर्यकी शुरुआतमे जिसके प्रति तुम्हें जैसी लगन है हमने ऐरिक्सनके आठ सिस्टम् देखे हैं उनमेसे जैसी भी लगन हो, अथवा तो किल्फोर्ड मोर्गनके ज्ञानके प्रकारोंमे देखा उसमेंसे कोई लगन हो, जिस विषयके प्रति कि जिस व्यक्तिके प्रति कि जिस सन्दर्भमें देखना हो वैसी लगन रखो इसमें कोई मुश्किल नहीं है लेकिन जब भी कोई एक लगन तुम हठाग्रहकी बाध लोगे तब तुम्हारा धैर्य खडित होता है लगनके कारण धैर्य खडित नहीं होता, लगनके हठाग्रहके कारण धैर्य खडित होता है अतएव धैर्य प्राप्त करनेका पहला कदम है कि लगन रखते हुवे भी उसका हठाग्रह नहीं रखना तुम किसीके लिये मित्रताकी लगन रखते हो बहुत अच्छी

बात है तुम परन्तु ऐसा हठाग्रह रखो कि यह मेरा मित्र है तो हरेक सदर्भमें कि हरेक परिस्थितिमें इस मित्रके अनुसार ही बर्ताव करना तो वह नहीं चलेगा मनुष्य है ना, नहीं बरत सकता चूक सकता है कोई काम इससे जाने अनजाने ऐसा हो जायेगा कि तुम्हारी मित्रता इससे आहत हो जायेगी केवल मित्रके तौरपर लगन रखो और उसे निभा सको तो बहुत बहुत धन्यवाद! और न निभा सको तो अलविदा! ऐसा थोडा अनाग्रह रखोगे तो धैर्यका गुण खिलानेमे सहायक होगा अगर आग्रहिल हो जाओगे तो तुम धैर्यका गुण नहीं खिला पाओगे कोई तुम्हारा विश्वास तोडे तो उसे किस प्रकार सहन करना ऐसे अनाग्रही बनकर तुम धैर्य प्राप्त कर सकते हो तुम हठाग्रह रखोगे कि किसीको मित्र माना तो उसकी हिम्मत कैसे पडी विश्वास तोडनेकी? तो फिर क्या करना कि उसका मर्डर करना? उसे जेलमें भिजवाना? करना क्या खुलासा करो ना, विश्वासघात किया लेकिन अनाग्रह होगा तो तुम्हें दूसरा कदम लेनेमें सुविधा होगी इसने विश्वासघात किया तुम्हारे दिलको बहुत दु:ख हुआ लेकिन इस दु:खको तुम सहन कर सकोगे इस दु:खकी तुम धुनाई या जुगाली मत करो तुम्हें चिन्ता नहीं होगी कि जिसे मैं जीवन भर मित्र मानता रहा उसने मुझसे विश्वासघात किया अब या तो मैं इसे मारू अथवा खुद जाकर सुसाइड कर लू इस ससारमे कौन किसका सगा है? यह सब नदी-नावके सयोग है विश्वासघात किया तो किया, स्नेह दिया तो दिया जो मिला उसे देखते रहो तो बस आनन्द आयेगा जो मिले उसे एन्जोय करते रहो तो बहुत आनन्द आयेगा उसकी धुनाई या जुगाली करोगे तो कुछ न कुछ लफडा होगा ही जो पहला कदम अनाग्रहका तुम्हारेमें होगा तो फिर तुममे सहन करनेकी कला आयेगी कि जो तुमको अभिलषित हो कि अभिलषित न हो उसे तुम सहन कर सको

<u>लगनके अनाग्रहसे त्यागकी कला प्राप्त होती है</u>।

जब तुम्हारेमें सहनशक्ति आयेगी तब तुम त्याग कर सकोगे, नहीं तो त्याग करते हुवे तुम्हें रोना आयेगा किसी वस्तुको छोडना बहुत मुश्किल बात है समझो लेकिन किसी वस्तुको हम कब छोड सकते है? शास्त्र बहुत सुदर कहता है **आयातम् आयान्तम् अपेक्षणीय गत च गच्छन्त च उपेक्षणीयम्। अल वृथा खेदनमोदनाभ्या यद् अस्मदीय नहि तत् परेशाम्।।** जो आ रहा है उसका सत्कार करो जो जा रहा है उसको विदा दो **आयातम् आयान्तम् अपेक्षणीय गत च गच्छन्त च उपेक्षणीयम्।** जो गया अथवा जानेकेलिये कहता है उसे उपेक्षणीय मानो **अल वृथा खेदनमोदनाभ्या** खेदन कि मोदन इस बारेमें मत करो जो आ रहा है उसका सत्कार करो जो गया अथवा जाना चाह रहा है उसे विदा दो **यद् अस्मदीय नहि तत् परेशाम्** जो तुम्हारे साथ रहनेकेलिये निर्मित है वह दूसरेके पास नहीं जा सकता और जो तम्हारे साथ नहीं रह सकता वह तुम्हारा कभी होने वाला नहीं है अतएव टेक इट ईजी आरामसे लो यह आरामसे लेना हम सीखेंगे तो त्यागकी कला आ जायेगी

मैं जब तुलसीविलामें रहता था तब एक भाई पढनेकेलिये आता था बोरीवलीसे मेरे यहा लगातार तीन दिन पढने आया तो इसे कोई पाकीटमार पहचान गया कि मुबईसे बाहरका है अतएव तीनों दिन जेब काट ली अब चौथे दिन मुट्ठीमें रुपिया रख कर आया और मेरे फ्लेटमें आकर मुझसे पूछा कि आप आज्ञा दो तो मुट्ठी खोलू मैंने कहा क्या है मुट्ठीमें? बोला रुपिया लाया हू कि कोई पाकिटमार न मार ले इसे सब हल्कापन इसका खत्म हो गया तीन बार पाकीट कटी अतएव आदमी फिर रूपयेको हलकेसे नहीं ले सकता फ्लेटमें घुसनेके बाद भी मुझसे पूछ रहा है कि आप आज्ञा दो तो अब मुट्ठी खोलू मुट्ठीमें बाध कर रूपये लाया

ऐसे हरेक सबधको, लगनको, उपलब्धिको, हम मुट्ठीमें बांधकर रखे कि कोई मेरी जेब न काट ले जो मेरे संबध हैं, जो मेरी लगन हैं, जो मेरी उपलब्धिया कि एचीवमेंट है, इन हरेकको मुट्ठीमें जकडकर रखना चाहते हैं कि कोई इन्हें छीनकर न ले जाये हमारेमें त्यागकी सामर्थ्य नहीं है त्यागकी सामर्थ्य नहीं है अतएव हम अधीर हो जाते हैं महाप्रभुजी कहते हैं कि त्याग कब तुम कर सकते हो कि जब तुम अनाग्रह और सहनका बोधपाठ अच्छी तरहसे समझ लो फिर कोई जाना चाहता हो तो उसे विदा देनेमे तुमको कभी भी तकलीफ नहीं होगी कोई आता हो तो उसके सत्कार करनेमें तुमको जरा भी तकलीफ नहीं होगी तुम टोकोगे नहीं कि क्यों तू तो जाना चाह रहा था अब फिर क्यो वापिस आया ऐसे टोकनेकी गरज तुमको नहीं रह जायेगी क्योंकि तुम्हारी वृत्ति अनाग्रहिल हो गई है आती है तो आ, जाती है तो जा, दोनोंकेलिये तुम्हारे दिमागके किवाड खुले होने चाहिये जो आता हो उसे सत्कार दो, जो जाता हो उसे विदा दो वास्तविक त्याग ऐसा होता है इस प्रकार धैर्यके भी चार प्रकार गिन सकते है

१. <u>अनाग्रहिलत्या प्रतीकार शक्य हो तो वह धैर्यमे बाधक नहीं परन्तु साधक कदम</u>

अतएव दु खोको सहन करना कि उनका प्रतीकार करना इस बारेमें अनाग्रहिल होनेकेलिये महाप्रभुजी बताते हैं क्योंकि वैसा करनेसे भक्ति कि प्रपत्तिके मार्गपर तुम निरउद्वेग आगे बढ सकते हो महाप्रभुजी ऐसे नहीं कहते कि अनाग्रही हम बने हैं तो शक्य होनेपर भी दु खोंका कोई प्रतीकार नहीं करना अतएव दु खोंका सहज प्रतीकार हो सकता हो तो कर लेनेसे हम धैर्यके रास्तेसे विचलित हो जायेंगे ऐसी भ्रमणा मनमें नहीं रखनी चाहिये

२. <u>प्रतीकार शक्य न हो तो दुःखोंको सह लेना यह धैर्यका दूसरा कदम</u>

उसके बाद अगर प्रतीकार शक्य न हो तो दुःखोंको सहन कर लेनेकी अपनी मनोवृत्ति रखनी चाहिये तो ही धैर्य धारण हो सकता है अन्यथा नहीं

३ <u>स्वत कुछ आरम्भ नहीं करना यह धैर्यका तीसरा कदम</u>

यहा लगनका प्रश्न प्रमुख बन रहा है कि हम जानते है कि जैसे अपनेसे प्रतीकार शक्य नहीं है वैसे ही दुःखोंको सहन कर लेना भी अगर शक्य न हो तो फिर जडभरतकी तरह स्वय कोई भी कायिक वाचिक कि मानसिक प्रवृत्तिका आरम्भ करनेके अभिगमसे विरत अर्थात् त्यागकी मनोवृत्ति प्राप्त करनी चाहिये गुजरातीमे इसकेलिये एक बहुत अच्छी कहावत है जैसेको तैसा देनेकी प्रवृत्ति आरम्भ करनेका अभिगम हमारा नहीं होना चाहिये ऐसा जो शक्य हो तो कभी उद्वेग चितामें परिवर्तित नहीं होगा

४. <u>असामर्थ्यकी भावना चौथा कदम</u>

अगर इनमेंसे कुछ भी तुमसे नहीं हो सकता कि तुम न तो अनाग्रह प्राप्त कर सकते हो कि न ही तुममे प्रतीकारकी शक्यता है, और न ही तुम सहन कर सकते हो तो महाप्रभुजी चौथा धैर्यका स्वरूप ऐसे समझाते हैं कि तुम सब ओरसे असमर्थ हो, समर्थ नहीं हो तो फिर तुम चुप रहो जो मैं उडनेमें समर्थ नहीं हू तो अभी मैं कितने ही हाथ पैर ऐसे वैसे पक्षीकी तरह करू लेकिन आकाशमे तो उड नहीं सकता? जिस बातमे समर्थ होऊ वह बात कर सकता हू पक्षी जैसे पख फडफडाता है और थोडी देरमें आकाशमे उड जाता है, सोचो कि आधा पौना घण्टे मैं हाथ ऐसे वैसे करू तो क्या एक इचभी ऊचा जमीनसे ऊपर उठ सकता हू? नहीं उठ सकता क्योंकि मेरे हाथोंमे पक्षीके पख जैसी सामथ्य ही नहीं है अब सामर्थ्य नहीं है तो मुझे समझ

लेना चाहिये कि आकाशमें उडनेकी गलत भावनासे हाथ ऐसे वैसे मुझे नहीं करने चाहिये शांतिसे बैठना चाहिये, नहीं उड सकता तो क्या होगा? मुझे भी पानीमें तैरनेकी बहुत इच्छा होती है लेकिन मछलीकी तरह पानीके भीतर रह नहीं सकता और थोडी देरमें पानीके भीतर घुटन महसूस होनेपर फिरसे पानीके ऊपर आना ही पडता है क्योंकि सामर्थ्य नहीं है जितने अशमें सामर्थ्य हो उतने अशमें हमें उसे प्रयोगमे लाना चाहिये अतएव असामर्थ्य भावना यह चौथा धैर्यका प्रकार महाप्रभूजीने बताया यह सब बात तुम्हें इसलिये समझा रहा हू कि नवरत्नमें हमें यह बात सूत्ररूपमें मिल रही है और भाष्य समझ लेंगे तो सूत्र समझमें आ जायेगा सूत्र समझोगे तो भाष्य समझमे आ जायेगा

<u>आश्रयकी परिभाषा</u>

उसके बाद जो शरणागतिकी **ऐहिके पारलोके च सर्वथा शरण हरि** इहलोक और परलोकमें हरि ही एक शरण है शरण अर्थात् रक्षक है अब फिरसे यह बहुत ऊची हाइट है एवरेस्टकी तुलनासे भी ऊची समझे! सोचो कि तुम्हे खासी आई तो यह एक ऐहिक प्रोब्लम् है कि नहीं? अब **शरण हरि** तो तुम क्या चरणामृत लोगे कि दवा लोगे? अथवा तो विक्स फौर्म्युला फोरटीफोर लोगे अथवा क्या लोगे? अब तुम कहो कि ना विक्स फौर्म्युला फोरटीफोर लें तो शरणागति टूट गई तो ऐसी पचायत अगर होती है तो क्या करना? **ऐहिके पारलोके च सर्वथा शरण हरि.**

यह शरणागतिकी शिखिर कक्षाकी कि टौपकी बात है इस टापके ऊपर पहुचनेसे पहले बहुत सारे मुकामोसे हमको गुजरना पडेगा और इन बहुत सारे मुकामोंसे ही हमारा काम होगा

१- <u>आश्रयका पहला मुकाम मन-वाणीसे प्रभुकी शरणागति</u>

इसमें पहला मुकाम महाप्रभुजी शरणागतिका ऐसे समझाते हैं कि मन और वाणीसे शरणकी भावना करनी हरेक बातमें तुम्हे प्रभुका रक्षकपना अनुभवित हो कि नहीं उसकी भावना तो कर सकते हो तुम्हारेसे शरणकी ऐसी दृढता नहीं निभती हो अर्थात् तुम्हें खासी आनेपर डाक्टरके पास जाना पडता हो तो जाओ लेकिन मनमें भावना इस प्रकार रखो कि डाक्टर मुझे क्या ठीक करेगा, प्रभु मुझे स्वस्थ रखना चाहेंगे तो मैं बिल्कुल ठीक हो जाऊगा नहीं स्वस्थ रखना चाहते होंगे तो डाक्टरकी दवा भी मुझे ठीक नहीं कर पायेगी ऐसी भावना तो तुम अपने मनमें कर सकते हो ना? तो मनमें और वाणीसे ही ऐसी भावनाकी तुम शुरुआत करो तो वह शरणागतिकी ओर जानेका पहला कदम होगा

यह भावना जो तुम न कर सकते हो तो फिर प्रोब्लम है अब एक कदम तो आगे भर नहीं रहे और कहो कि **ऐहिके पारलोके च सर्वथा शरण हरि**. हरेक बातमें हमारे तो हरि ही शरण हैं तो फिर यह बात कहने भरकेलिये सच्ची है परन्तु जीवनकी वास्तविकता नहीं बना सकते तुम पाठ करना हो तो पाठ कर सकते हो, यह सभव है प्रवचन करना हो तो मेरी तरह प्रवचन भी कर सकते हो इसमें कोई मुश्किल नहीं लेकिन प्रवचन अर्थात् प्रवचन समझे! यह सब सभव है और वैसा करनेकेलिये हम उत्तम अधिकारी हैं जघन्य मध्यम अधिकारी नहीं इतनी भावना जो तुम मनमें ला सको कि ऐहिक कि पारलौकिक जो कुछ लाभ, जिस किसी स्रोतसे होता हो वह लेते रहो लेकिन भावना ऐसी करनी कि हरि ही मुझे इस रूपमे लाभ पहुचा रहे हैं **ऐहिक पारलोके च सर्वथा शरण हरि**. ऐसा करोगे तो हौले हौले तुम्हारा शरणागतिका भाव दृढ हो जायेगा

२. <u>आश्रयका दूसरा मुकाम मन-वाणी-कायासे अन्याश्रय नहीं करना</u>

दूसरा उपाय शरणागतिका अर्थात् दूसरा कदम महाप्रभुजीने बताया है वह यह कि कायिक, वाचिक अथवा मानसिक रूपसे अन्याश्रयका त्याग करना अब पहला कदम भर सके कि हरेक बातमें प्रभूही शरण हैं ऐसी भावना करनेकी इसका उलटा अर्थ मत ले लेना कि अच्छा अच्छा अब हम समझे कि खाली माननेकी बात है नहीं तो फिर यह श्याममनोहरजी भर गये ऐसा मत समझना, यह मुद्दा मेरा ऐसा नहीं हैं हम सब बहुत होशियार है जरा सी बातसे चोचको जगह मूसलको भी घुसानेकी भावना करनेकी बात करते ही तुम कहने लगोगे अरे! पहले ही कहना चाहिये था ना कि यह तो खाली कहने सुननेकी बात है करना धरना कुछ नहीं है. पहलेसे तुमने खुलासा क्यो नहीं किया, नहीं तो हम भी शरणागत हो जाते. इस अर्थमें सर्वथा नहीं

<u>अन्याश्रय कहने पर अन्य कौन</u> ?

तुम्हारी काया वाणी और अन्त:करणसे तुम किसीभी अन्यदेवका आश्रय नहीं करो यहा अन्य अर्थात् जिसे हमने पुष्टिमार्गमें आराध्य देवके तौरपर नहीं लेते वह देव नहीं तो अन्यका अर्थ तो महान विस्तृत है अन्य अर्थात् यमुनाजी भी और यमुनाजी अन्य नहीं तो महादेवजी किस कारण अन्य? महादेवजी क्या अलग हैं भगवानसे? महादेवजी भी ठाकुरजीका ही स्वरूप हैं **ब्रह्मैव तादृश यस्मात् सर्वात्मकतया उदितौ** (बालबोध-१२) ऐसी आज्ञा स्वय महाप्रभूजी कर रहे हैं ब्रह्म स्वय ही अर्थात् हमारे कृष्ण ही, महादेवजी रूपमे भी प्रकट हुवे हैं यमुनाजीरूपमें भी प्रकट हुये हैं तो यमुनाजी अन्य नहीं तो महादेवजी किस प्रकार अन्य हो गये? और महादेवजी अगर अन्य तो यमुनाजी अन्य कैसे नहीं?

एक बात ध्यानसे समझो कि यहा अन्य कौन है और अन्य कौन नहीं यह प्रश्न तत्वसबधी प्रश्न नहीं है लेकिन

सम्प्रदायकी जो भक्तिरूपा साधनाप्रणाली है इसमे कौन आराध्यके तौरपर तुमको लाया गया है और कौन आराध्यके तौरपर नहीं लाया गया यह मुद्दा है जिसको आराध्यके तौरपर तुम देखते हो वह अन्य नहीं है जिसको आराध्यके तौरपर नहीं देखते वह अन्य है वैसे देवोंका आश्रय नहीं करना वैसे देवोंका आश्रय करनेपर अन्याश्रय होता है

<u>डॉक्टर या वकील इत्यादिके साथका व्यवहार आश्रय नहीं होता</u>

लौकिक व्यक्तिको हम देव मानतेही नहीं जब देव ही नहीं मान रहे तो उसकी सहायता लेनी वह आश्रय ही नहीं है जैसे डॉक्टरके पास तुम जाते हो दवा लेते हो तो डॉक्टरको देव मानकर थोडे ही जाते हो? डॉक्टरके साथ तुम्हारा सीधा सौदेका सबध है कि तू मेरा निदान कर और औषधि दे और मैं तुझे तेरी फीस देता हू तू तेरे घर और मैं मेरे घर इसमें कोई डॉक्टरका हम आश्रय नहीं ले रहे झगडा हो गया हो तो अदालतमें वकीलके पास जाना पडे, तो वह कोई वकीलका आश्रय नहीं है क्योंकि वकीलकी और तुम्हारी समझ साफ है कि वह अदालतमें वकालत करता है और तुम्हारे पास अदालतका कोई मुद्दा आया है तो वह वकालत बतायेगा और तुम उसको फीस देकर छूट जाते हो इसमे हमने कोई आश्रय नहीं लिया अतएव यह अन्य है कि अन्य नहीं है यह प्रसग अप्रासगिक बन जाता है जैसे धन फेंकनेवाले मनोरथी और महाराजश्रीओके बीच जैसा व्यवहार वह आश्रय लेनेका नहीं है बल्कि वह तो मनोरथी आकर महाराजको धन दे देता है कि आप मनोरथ करा लेना और बादमे तुम छूटे और महाराजभी तुम तुम्हारे घर और हम हमारे घर यह तो वकील और डॉक्टर जैसा ही सबध है आश्रयका सबध इतने हल्केपनसे लेनेका नहीं है आश्रय लेना इसमे एक गभीर भावना रही हुई है

आश्रय अर्थात् किसीकी दिव्यतामे निष्ठा रखनी कि यह कोई देव है यह अपने पुष्टिमार्गीय नहीं तो नहीं तो भी किसी मर्यादामार्गीय कि अन्य किसी साधनाप्रणालीके आराध्य देव है ब्रह्मवादी दृष्टिकोणसे देखनेके उपरान्त हमारे प्रभु द्वारा लिया गया ही एक दिव्य रूप है ऐसी भी भावना जब रखो तब इसमें आश्रयका प्रसग आयेगा नहीं तो आश्रयका प्रसंग ही नहीं आयेगा व्यापारिक प्रसग है आश्रयका प्रसग और व्यापारिक प्रसग अलग अलग बात है वकीलका हम आश्रय नहीं करते, वकीलके साथ सौदा करते हैं उसकी वकालतके ज्ञानको वह बेचता है और हम उसे खरीद रहे है हम महाराजश्री मठडी बेच रहे हैं और तुम उसे खरीद रहे हो यह सादेका सबध है आश्रयका सबध नहीं यह मनोरथ बेच रहे है और तुम खरीद रहे हो अपने ठाकुरजीको पलनेमें झुलानेकी झाकी वह बेच रहे हैं और तुम ग्राहक बन कर उसे खरीद रहे हो यह सब सौदेके संबध हैं, आश्रयके सबध नहीं है आश्रयका सबध बहुत गभीर सबध है यह इतना हल्का सबध नहीं है

## आराध्यदेवका ही आश्रय

जहा आश्रय करना हो वहा अन्य कौन है और अन्य कौन नहीं उसका प्रश्न आता है अतएव महाप्रभुजी कहते हैं कि शरणागतिका दूसरा कदम यह हैं कि किसीभी अन्य देवका आश्रय नहीं करना अब आश्रय नहीं करना तो क्या गाली देनी? नहीं इनका अपमान करना? नहीं इनके देवत्वको स्वीकारना और स्वीकार करके इनका आश्रय नहीं करना जब तुम्हारा विवाह नहीं हुवा है तो हरेक स्त्री अच्छी है, हरेक पुरुष अच्छा है लेकिन जब विवाह हो गया तब ही कोई दूसरी स्त्री होती है तुम्हारा विवाह हुवा तो कोई परपुरुष होता है एक बार तुम्हारा विवाह हो गया तो एक पॉइन्ट खडा होता हैं कि अब जिससे तुम्हारा विवाह हुवा है उसके सिवाय स्त्री परस्त्री, उसके सिवाय दूसरा पुरुष परपुरुष ऐसे ही किसीको तुमने आराध्यदेवके

तौरपर आराधनामें स्वीकार किया तब वहा प्रश्न खड़ा होता है कि यह आराध्यदेव और यह अन्यदेव कायिक वाचिक या मानसिक अन्याश्रयका त्याग यह महाप्रभुजी कहते हैं कि आश्रयका दूसरा कदम तुम भर सकते हो मानसशास्त्रका कितना सूक्ष्म विचार महाप्रभुजीने किया है यह तुम्हे पता चले तो तुम उसका आनन्द ले सकते हो

३ <u>आश्रयका तीसरा मुकाम प्रभुपर चातक जैसा विश्वास</u>

जब तुमने दूसरा कदम भरा तब महाप्रभुजी कहते हैं कि अच्छा यह कदम तुमने अच्छी तरहसे साध लिया तो पहली परीक्षामें पास हो गये तो दूसरी कक्षामे जाते हैं, दूसरीमें पास हुवे तो तीसरी कक्षामें जाते हैं, मेट्रिकमें पास हुये तो कॉलेजमें जाते है, कॉलेजमें पास हुये तो यूनिवर्सिटीमें जाते है ऐसे स्टेप बाई स्टेप आगे बढा जाता है वैसे ही यह कदम तुमने अच्छी तरहसे साध लिया तो तीसरा कदम आता है **ब्रह्मास्त्र चातकी भाव्यौ**. अर्थात् जिस प्रकार चातक स्वातिकी बूदपर विश्वास रखता हैं, मर जाता है लेकिन दूसरा अन्य पानी नहीं पीता ऐसा विश्वास तुम्हें तुम्हारे पुष्टिमार्गपर होना चाहिये शुरुआतके दो कदम जो तुमने नहीं भरे होते तो ऐसा विश्वास हो ही नहीं सकता सभव ही नहीं है यह विश्वास तब तुम प्राप्त कर सकते हो जब शुरुआतके दो कदम तुमने अच्छी तरहसे साध लिये हो तो तीसरेमें तुम्हे बहुत परेशानी नहीं होगी लेकिन शुरुआतके दो स्टेप्स् तुमने लीये ही न हों, तो यह तीसरा स्टेप् लेनेमे टूट जाओगे एकदम एकदम नर्वस् ब्रेकडाउन् तुम्हारा हो जायेगा इतना अधिक विश्वास प्रभूके ऊपर कैसे रखा जा सकता है?

मैंने एक भाईको ठाकुरजी पधरा दिये उसके बाद इसके परिवारमें कुछ झगडा हुवा तो उसने मुझे आकर कहा कि **महाराज! यह ठाकुरजी कुछ ऐसे विचित्र चरणसे पधारे हैं कि जबसे घरमे पधारे हैं तबसे घरमे झगडा ही चलता है** मैंने

कहा तुम्हारे घरमे कोई बहु आई होगी. उसके पैर भी तो हो सकते हैं. तुम दुकान चलाते हो तो कोई ग्राहक आया होगा उसके पैरके कारण ऐसा हुवा होगा दुकान चलाते हो तो कोई ऐसा पैसा आ गया होगा कि जिसके कारण झगडा हो सकता है एक ठाकुरजीको ही तुमने क्यो चुना? इस दौरान क्या कोई दूसरी वस्तु नहीं आई हागि घरमें? बहुत सारी वस्तुयें आयी ही होंगी एक मनुष्य जो गृहस्थी जीवन जी रहा है उसके घरमें कितनी सारी वस्तु एन्टर होती होंगी किसी बिल्लीका पैर भी ऐसे हो सकता है बिल्ली नहीं घुसी क्या तुम्हारे घरमें? लेकिन किसी और पर नहीं केवल ठाकुरजीके ऊपर आरोप लगाना कि जबसे ठाकुरजी पधारे तबसे घरमें क्लेश घुस गया है हमारे बडे मदिरमें एक बार बिचारे गिरिराजजी ऐसे ही पधारे थे यह जबसे पधारे तबसे सबको ऐसा लगता था कि झगडा हो गया भाईयोंमें आखिरमे इनको विदा करना ही पडा जतीपुरा तक अब पधारो प्रभ! बहुत कृपा हो गई, महाराज क्या समझ रखा है आपने, हमें जीने दोगे कि नहीं?

यह जो तीसरा स्टेप् है यह बहुत कठिन स्टेप् है, कि प्रभूके ऊपर विश्वास रखना कि जो कुछ झगडा हो रहा है वह **अपनो दोष विचार सखीरी, उनसो कछु नहीं कहिये** बहुत मुश्किल बात है गाना हो तो विहागमें गाकर सुना दू, कहो तो कल्याणमें गा देता हू, यमनमें कहो तो उसमें, केदारमे कहो तो उसमें भी गा देता हू गाना बहुत सरल है लेकिन निभानेमें हाडपिंजर हिल जाता है आदमीका इतनी मुश्किल बात है यह इतना सुदृढ विश्वास भगवानके ऊपर कि मेरा जो कुछ अच्छा या कि खराब हो रहा है उसके दोष उनके ऊपर नहीं डालू तुम्हारे चरणोंको दोष नहीं दू कि आप जबसे पधारेहो तबसे यह क्लेश घरमें घुस गया ऐसा नहीं विचारू ऐसा चातक जैसा विश्वास प्रभुमे होना चाहिये

प्रभुके ऊपर श्रद्धा रखनी बायें हाथका खेल है मनुष्य श्रद्धाके लिये तो जैसे मोमबत्ती जलती हो तो मोम टपकता है, श्रद्धा मनुष्यमेंसे ऐसी ही रीतिसे टपकती ही है बत्ती जली कि मोम टपकने ही लगता है टप, टप, टप ऐसे ही हरेक मनुष्य चाहे आस्तिक हो चाहे नास्तिक हो, ईश्वरवादी हो कि अनीश्वरवादी, संत हो कि शैतान, ऐसा कोई मनुष्य हो ही नहीं सकता कि जिसमे श्रद्धा न हो जिसमे श्रद्धा न हो वह तो सुसाइड् ही कर लेता होता है बल्कि मुझे तो लगता है कि सुसाइड् करनेवाला भी बहुत श्रद्धालु होता है क्योंकि इसे श्रद्धा है कि मर जाऊंगा तो सब तकलीफोंका निवारण हो जायेगा घबराक कहते हैं कि मर जायेंगे, मरकर भी चैन न पाया तो किधर जायेंगे. श्रद्धा डिग गई तो सुसाइड्में भी लफडा हो जायेगा सुसाइड् भी तुम नहीं कर पाओगे अर्थात् तुम्हें अगर सुसाइड करना हो तो जबरदस्त श्रद्धा होनी चाहिये सुसाइड करनेकेलिये आकाश जितनी विशाल श्रद्धा तुम्हारे हृदयमें हो कि सब तकलीफोका खात्मा कर रहा हू तो हो सकता है अतएव श्रद्धा तो परमात्मा ऊपर कि शैतानके ऊपर मोमबत्तीमेंसे जैसे मोम टपकता है ऐसे मनुष्यमेंसे श्रद्धा टपक ही रही है

एक भद्दा श्लोक है कहना नहीं चाहिये आजकी तारीखमें लेकिन एक उदाहरणके लिये कह रहा हू **रहो नास्ति क्षण नास्ति नास्ति प्रार्थयिता नरः तेन नारद नारीणाम् सतीत्वम् उपजायते** कोई एकान्त नहीं मिलता, कोई हमसे प्रार्थना करनेवाला नहीं मिलता, और समय नहीं है अतएव सभी स्त्रिया सती है ऐसा कहनेमें आता है जबकि यह बात गलत है ऐसा नहीं होता लेकिन श्रद्धाके बारेमें यह बात सच्ची है कि कोई रिक्वेस्ट् नहीं करता अतएव हमे श्रद्धा नहीं है बाकी कोई रिक्वेस्ट् करे कि आज हमारे यहा हवेलीमें छप्पनभोग है, तो अच्छा अच्छा आ जाऊंगा हो ही जाता है ना करे तो कुछ अनर्थ हो जाये तो? समाधानी तुम्हारे घर आये और कहे कि

आज राजभोग-मगलाका मनोरथ कराओ, तुम्हें श्रद्धा हैं और पैसे भी नहीं हैं तो भी तुम पैसा जमा करा दोगे... दो भाई ना करें तो ना जाने कौनसी मुसीबत आ जाये जीवनमें आ गया है तो दे दो फिर सब इसका जस्टिफिकेशन देगें कि हम कोई सामनेसे ता गये नहीं थे लेकिन समाधानी आये तो उसे किस प्रकार मना कर सकते हैं ऐसे तो गुडा आ गया तो तुम दोगे? नहीं दोगे छुरा लेकर तुम्हे लूटने आ जाये तो तुम दोगे उसे क्या? पुलिसमें रिपोर्ट करोगे कि नहीं? इसके लिये ही मैंने एक गीत बनाया है **समाधानी मारे घेर आवी आवीने 'जयश्रीकृष्ण' कही मागे मनोरथो, जयश्रीकृष्ण' कही मागे, मारा घरना ठाकोरनी श्री लई जाय, थया छे घणा देवलकजी'** तो यह बात समझो कि हम दे देते हैं, किस कारण देते हैं? कोई माग नहीं रहा अतएव तुमको श्रद्धा नहीं है तुम सब जानते ही होगे कि कितनही चिट्ठीया लिखते हैं कि यह कार्ड तुम्हे लिख रहा हू, ऐसे दस कार्ड तुम भी लिख देना नहीं तो तुम्हारे घरमें विपत्ति आ जायेगी अब अगर तुम्हारेमें श्रद्धाकी कमी हो तो ही तुम कार्ड नहीं लिखोगे बाकी श्रद्धा तो मोटे तौरपर मनुष्योंमें ऐसी होती है कि कौन जाने क्या विपत्ति आयेगी, क्या होगा? लिखो न कार्ड हमारा क्या जाता है? दस आदमीयोको तुम फिर कार्ड लिख ही देते हो अतएव श्रद्धा तो मोमबत्तीके मोमकी तरह भीतरसे बाहर टपक रही है गीतामे इसकेलिये ही भगवान आज्ञा करते हैं **श्रद्धामयो अय पुरुषो यो यच्छ्रद्धय सएव स** मनुष्यके शरीरमें रक्त जितना नहीं बहता जितनीकी श्रद्धा बहती है

<u>परमात्मामें विश्वास यह आश्रयका महत्वपूर्ण अग है</u>

मनुष्यकी जो प्रोब्लम हैं वह है विश्वासकी विश्वासकी बहुत बडी कमी है परमात्माके ऊपर विश्वास करना बहुत मुश्किल है श्रद्धा लानी तो बायें हाथका खेल है लेकिन कोई कहे कि **परमात्माके अस्तित्वमे तुमको विश्वास है?** नाईन्टी नाईन पॉइन्ट नाईन परसेन्ट लोग भाग जायेंगे विश्वासका प्रश्न

बहुत कठिन है एक सामान्य उदाहरण देता हू अगर तुमको विश्वास हो तो तुम झूठ किस प्रकार बोल सकते हो? अगर तुमको विश्वास हो तो तुम चोरी क्यों कर सकते हो? क्योंकि परमात्मा देख रहा है परमात्मा जान रहा है पुलिस देख रही हो और पुलिस जानती हो तो तुम चोरी करोगे? कभी नहीं करोगे क्योंकि विश्वास है तुम्हें कि पुलिस देख रही है एक गानेमे आता है **बडा ही सी.आई.डी. है नीली छत्रीवाला.** लेकिन हमें इसके ऊपर विश्वास नहीं है अतएव हम सब काले सफेद धंधे करते ही रहते है श्रद्धा फिरसे हमारेमेंसे बहुत ही टपकती होती है कि परमात्मा है हम ईश्वरको मानते हैं लेकिन जब विश्वासकी बात आती है तो डगमगा जाते हैं सारे ऐसे प्रवचन करनेवाले मेरे जैसे लोग भी डिग जाते है जब विश्वासका मुद्दा खडा करनेमें आता है एक बार परमात्मामे विश्वास आ जाये तो मनुष्य मनुष्य नहीं रह जायेगा, मुझे लगता है, देव बन जायेगा अतएव ऐसे विश्वासको महाप्रभुजी तुरन्त नहीं कहते तीसरे स्टेप्के तौरपर इसे सजेस्ट कर रहे हैं **ब्रह्मास्त्र चातकौ भाव्यौ** चातककी तरह बादमें विश्वास तुम्हें प्राप्त होगा ऐसा अनन्याश्रय प्राप्त होना अनन्याश्रयकी जीवन प्रणालीमे तुमने जीनेका कोई प्रयास शुरु किया तो विश्वास तुम्हें परमात्मामे मिलेगा ही

## ४ आश्रयका चौथा मुकाम 'प्राप्त सेवेत निर्भम'

आश्रयका चौथा और फाइनल स्टेप् बहुत ड्रास्टिक स्टेप है महाप्रभुजी कहते हैं कि जो कुछ तुमको मिलता है **प्राप्त सेवेत निर्भम. यत् पृथिव्या बल ज्ञान गुणाश्च सुयशो धनम्। यतो नैकस्य पर्याप्त स्वार्जित निरह भजेत्।।**

इस श्लोकमें ऐसे कहनेमें आया हैं कि पृथ्वीमे जो कुछ बल, ज्ञान, सद्गुण सुयश कि धन हा सकता है वह सब किसी एक मनुष्यको कभी मिला नहीं और न ही मिलने वाला है कितने ही हाथ पैर मार लो तुम, **यतो नैकस्य पर्याप्त स्वार्जित**

**निरह भजेत यतो नैकस्य पर्याप्त स्वार्जित निरह भजेत्** अतएव जो तुमको मिला है उसका तुम अहकार कि ममता रखे बिना आनन्द लो निर्मम-आनन्द अर्थात् क्या? ममता रखे बिना जो मिला है उसका मजा लेना अर्थात् थालीमे जो परोसा गया है उसका स्वाद लेना सीखो, कूल मतलब इसका यह यह अनन्याश्रयका सबसे आखरी कदम है यह तुमको सिद्ध हो गया तो **प्राप्त सेवेत निर्मम** वाली बात सरल बन जायेगी तुम देखो कि **ऐहिके पारलोके च सर्वथा शरण हरि.** बहुत आसान स्टेप हो जाता है कि नहीं? जो **प्राप्त सेवेत निर्मम.** अर्थात् मुझे प्राप्त हुआ है उसमें मुझे आनन्दित होना चाहिये जो प्राप्त नहीं हुवा उसका मजा लेनेकेलिये मैं मोहताज नहीं ऐसा जो भाव तुमको दृढ हो जाये, ऐसा दृढाश्रय सिद्ध हो तो **ऐहिके पारलोके च सर्वथा शरण हरि:** तुमको परिभाषा नहीं लगेगी परन्तु जीवनकी वास्तविकता लगेगी तुम्हे कोरा आदर्श नहीं लगेगा परन्तु तुम्हारी जीवनप्रणाली लगेगी बस अतर वहा पड जाता है पहला स्टेप नहीं लिया उस समय **ऐहिके पारलोके च सर्वथा शरण हरि** एवरेस्टकी चोटी जैसी ऊचाई दिखेगी यह फाइनल स्टेप जब हमने ले लिया प्राप्त सेवेत **निर्मम** का तो फिर तुम थोडे आगे बढो तो वहा एवरेस्टके ऊपर तुम हो ही, तेनसिघ-हिलेरीकी तरह लेकिन स्टेप बाइ स्टेप आगे बढना है महाप्रभुजीने इसकी पूरी सावधानी ली है कि किस स्टेपके बाद तुमको कौनसा स्टेप लेना है जिससे कि तुम बीचमें ही घबरा न जाओ बीचमें हिम्मत हार न जाओ बीचमे तुम टूट न जाओ भक्तिकी साधनामें भगवानको तुमने भजनीय बनाया है उसके भजनीय होनेका और तुम्हारे भक्त होनेका सबध बराबर निभता रहे उस बारेमें यह सब सावधानिया इसमें बतायी गई हैं और वह इस विवेकधैर्याश्रयमें समझाई गई हैं

<u>नवरत्न सूत्र है और विवेकधैर्याश्रय भाष्य है</u>

जब हम ऐसा कह रहे हैं कि आन्तरिक उपाय तो अब इन चार विवेकोंमेंसे कोई न कोई एक विवेक महाप्रभुजी सूत्रात्मक रीतिसे कह रहे हैं इस बातको फिरसे तुम्हें समझना पडेगा, यह आठ वाक्य, जो मैंने तुमको नंबर लगा कर दिये हैं, इनमें देख लो फुरसतसे तुम मिलान करोगे तो तुमको बहुत मजा आयेगा कि कितने मजेका सूत्र और कितने मजेका इसका भाष्य महाप्रभुजीने नवरत्न और विवेकधैर्याश्रय रूपमें हमको उपदेशित किया हैं तुमको आनन्द आयेगा वास्तवमें एक फ्लेवर है, इसका एक टेस्ट है जो कि तुम्हें मिलेगा कि कैसी सूत्रात्मक वाणी और कैसी भाष्यात्मक वाणी एक ही व्यक्तिकी अपनेही सूत्रका कैसा सुदर व्याख्यान करनेमें हमारे वाक्पति आचार्य समर्थ हैं उसका आनन्द तुमको मिलेगा अतएव जब आन्तरिक उपायोदेश मैं कह रहा हू तब विवेकधैर्याश्रयमें से कोई न कोई विवेककी अपेक्षा महाप्रभुजी तुम्हारेसे रख रहे हैं कि यह कि वह विवेकका प्रयोग तुम करो जबकि विवेकधैर्याश्रयकी तरह नवरत्नग्रथमें महाप्रभुजीने प्रार्थनाका निषेध नहीं किया

अतएव अब महाप्रभुजी दूसरे श्लोकमें कहते हैं

**निवेदनन्तु स्मर्तव्य सर्वथा तादृशै जनै ।**
**सर्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेच्छात. करिष्यति ।।२।।**

श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

२. (आन्तरिकोपायोपदेश) : सर्वथा तादृशै. जनै. (साक) निवेदन तु (सर्वथा) स्मर्तव्य [कर्तव्यतिविवेक], सर्वेश्वर सर्वात्मा [भजनप्रक्रियाविवेक] च निजेच्छात करिष्यति

सरल भावानुवाद तादृशीजनोके साथ हिलमिलकर स्वय करे हुवे आत्मनिवेदनका स्मरण तो करते ही रहना चाहिये

बाकी प्रभु स्वय सर्वेश्वर भी हैं और सर्वात्मा भी हैं अतएव अपनी इच्छानुसार सब कुछ करेंगे

इस दूसरे श्लोकका अन्वय, मानस विश्लेषण और सरल भावानुवाद हमने देख लिया इसमें सबसे पहले यह आतरिक उपायोपदेश हैं उनको देखो वास्तवमें नवरत्न ग्रथ सूत्ररूप है और विवेकधैर्याश्रय उसका भाष्य है इस प्रमाणसे विवेकधैर्याश्रयमें महाप्रभुजीने जो चार विवेक समझाये हैं उन चार विवेकोंमें कोई न कोई एक विवेकको महाप्रभुजी यहा उपायके तौरपर बता रहे हैं अतएव जब मैं विवेक शब्द प्रयोग करू तब तुम सावधानीसे इसका मिलान विवेकधैर्याश्रयसे कर लेना यहाका विवेक वहाका कोई विवेक है जब मैं धैर्य कहू तब भी विवेकधैर्याश्रयमें जो चार प्रकारके धैर्य कहनेमें आये हैं उनमेसे कोई एक प्रकारके धैर्यका उपदेश समझ लेना उसी प्रकार जब मैं आश्रय कहू तब भी विवेकधैर्याश्रयमें देखकर आश्रयके चार प्रकार कहनेमें जो आये हैं उनमें से कौनसा आश्रय यहा महाप्रभुजी उपायक तौर पर बता रहे हैं

<u>सप्रदानप्रज्ञाविवेक</u>

यह आन्तरिकोपायोपदेश अर्थात् किसी न किसी विवेकका उपाय महाप्रभुजी बता रहे हैं कि कौनसे विवेक करनेसे तुमको यह चिता नहीं होगी इस आत्मनिवेदनके कर्ताके बारेमें किसी प्रकारकी प्रज्ञा प्राप्त होना विवेक है जो विवेकधैर्याश्रयमें वर्णित की गई हैं इसके विस्तारमे हम अभी नहीं जा सकते लेकिन कभी फुरसतके समय इसे भी हम देखेंगे

<u>निवेदनन्तु स्मर्तव्य (कर्तृस्मृतिविवेक)</u> :

दूसरा ऐसा ही विवेक सर्वथा तादृशै जने निवेदन तु स्मर्तव्य, सर्वेश्वर. सर्वात्मा च निजेच्छात. करिष्यति शब्दोंमे कहनेमें आया है अब देखो जो कापि चिन्ताके अर्न्तगत कही गई

लौकिक गतिकी चिंता तुमको हो रही है, उस चिंताको दूर करनेकेलिये वाचनिक उपदेश महाप्रभुजी क्या देते हैं? वाचनिक उपदेश महाप्रभुजीने अब यहासे शुरु किया है उसे मैंने अन्डरलाईन किया है कि **सर्वथा तादृशै: जनै: (साक) निवेदन तु स्मर्तव्यम्** अर्थात् अपने करे हुवे आत्मनिवेदनको याद करनेसे लौकिक गति होनेके डर अथवा चिंताके ऊपर काबू पाया जा सकता है

पहले जो आर्थिक उपदेश दिया था वह एक अलग बात थी इसमें सयाना कहने जैसी पद्धति थी इसमें वाचनिक उपदेश देकर महाप्रभुजी तुमको कह रहे है कि तुम्हें अपना जो आत्मनिर्धार न होता हो अथवा जो आत्मनिर्भरता आत्मनिवेदनमें न खिली हो अथवा तो तुम्हारा खुदका जो आत्म-तादात्म्यका बोध अच्छी तरहसे न खिला हो तब ही तो कुछ चिंता करने जैसी बात है **तादृशै: जनै: निवेदनमतु स्मर्तव्यम्** इनके साथ बैठकर तुम आत्मनिवेदनकी चर्चा कि चिंतन करो पहले तुम तुम्हारे मनका परमात्माके साथ आदान प्रदान कर रहे थे अब तादृशी जनके साथ तुम तुम्हारे भाव और विचारोंका लेन-देन शुरु करो जिस लेन-देनके कारण तुम्हारी फिरसे निवेदनकी स्मृति सुदृढ हो जाये

तुम आत्मनिवेदन करनेके बाद निवेदनका स्वरूप और प्रयोजन भूल गये कितने सारे वैष्णव मेरे पास आते हैं कि मैं पाच वर्षका था तब ब्रह्मसबध लिया था उसमे क्या तुम्हारे द्वारा देनेमें आया था? तो कहते हैं कि यह तो किस प्रकार याद आये? अच्छा किसने दिया था? तो कहते हैं यह तो मैं कबका भूल गया क्या देनेमें आया था? तो कहते हैं कि यह भी याद नहीं है तो अब जब सब कुछ भूल गये तो ऐसी स्थितिमें क्या हो सकता है? **निवेदन तु स्मर्तव्यम्** जिसको आत्मनिवेदनका स्मरण हैं उनके साथ तुम सगति करोगे, उनके साथ सत्सग करोगे तो वह चिंतन

तुम्हारे निवेदनके सस्कारको फिरसे जागृत कर देगा अर्थात् **निवेदन तु स्मर्तव्य सर्वथा तादृशै जनै..**

अर्थात् **स्मर्तव्यम्**मे कर्तृस्मृतिविवेक है किसे निवेदन किया था? वह स्वय निवेदन किया था कि किसी और ने कराया था? जो किया था उसे तू याद कर, तू खुद याद नहीं कर सकता तो किसीकी हेल्प लेकर याद कर, इस कर्तृस्मृतिका यहा विवेक बतानेमें आया है

**सर्वेश्वर, च सर्वात्मा (सप्रदान के बारेमे प्रज्ञा प्राप्तकरनेका विवेक)**

उसके बाद **सर्वेश्वर सर्वात्मा च** यह सप्रदानकी प्रज्ञाको प्राप्त करानेवाला **विवेक** है किसके सामने आत्मनिवेदन किया था? किसी ले भागूको आत्मनिवेदन नहीं किया था! क्या किसी ऐसे शैतानको निवेदन किया था कि जो तुम्हारा शत्रु था कि किसी कारणसे तुम्हारे साथ दुश्मनी मोल ले? नहीं तुमने निवेदन तो सर्वेश्वर-सर्वात्माको किया है जो ईश्वर हो वह आत्मा हो यह जरूरी नहीं है वैसे ही जो आत्मा हो तो वह ईश्वर हो वह भी जरूरी नहीं है कोई भी परिवार सस्था कि राष्ट्रका प्रमुख स्वय स्वयके आधीन परिवार सस्था कि राष्ट्रके अन्दर ईश्वर ही होता है लेकिन उसका आत्मा होना जरूरी नहीं है वैसेही परिवार सस्था कि राष्ट्रके आत्मा समान कोई संनिष्ठ व्यक्ति, बहुत बार एक छोटासा मनुष्यही होता है, ईश्वर नहीं हम पुष्टिप्रभुको केवल ईश्वरके तौरपर ही नहीं मानते लेकिन आत्माके तौरपर भी मानते है और केवल आत्माके तौरपर ही नहीं मानते ईश्वरके तौरपर भी मानते है

पुष्टिप्रभुके साथ हमारे दो प्रकारके रिलेशन्स् है वह पुष्टिप्रभु मेरी स्वयकी आत्मा है और मेरी स्वयकी आत्मा होते

हुवे भी मैं स्वय पुष्टि प्रभु नहीं हू गलत अर्थ मत लगाना कि मेरी आत्मा पुष्टिप्रभु हैं अर्थात् मैं स्वयं पूर्ण पुरुषोत्तम सिद्ध हो गया श्रीकृष्ण ही मेरी आत्मा भी हैं और मेरा परमेश्वर भी है इन दोनों प्रकारके सबधोसे जब हम पुष्टिप्रभुके साथ बधे हुवे हैं इस प्रज्ञाको जो तुम हमेशाकेलिये जान सको तो तुम्हें विचार आयेगा कि **सर्वं निजेच्छात भवति**के सिद्धान्तोका सच्चा मर्म यह **निजेच्छात करिष्यति** है और वह विवेकधैर्याश्रयमें उपदिष्ट विवेक ही है क्योंकि वहा कहनेमे आया है **प्रार्थिते वा तत कि स्यात्? स्वाम्यभिप्रायसशयात् सर्वत्र तस्य सर्व हि सर्वसामर्थ्यमेव च** (विवेकधैर्याश्रय २) सर्वत्र वह सर्वरूप भी है और सर्वसमर्थ भी है सर्वरूप होनेके कारण सर्वात्मत्व और सर्वसामर्थ्यके कारण सर्वेश्वरत्व यह विवेक आते ही चिता करने जैसी कोई बात रह नहीं जाती फिर फिरकर याद दिला रहा हू कि यह चिता दुश्मन, पुत्र, धन, धन्धा, प्रतिष्ठाके बारेमे होती चिताकेलिये नहीं कह रहा हू, यह तो आत्मनिवेदनकर्त्ता ऐसी परेशानीमें स्वय फसा हुआ हो तो उसके कारण होती लौकिक गतिकी जो चिता होती है उसकेलिये ही कहनेमे आ रही है

उसके बाद आता है तीसरा उपदेश वह महाप्रभुजी इस प्रकार देते हैं

**सर्वेषा प्रभुसम्बन्धो न प्रत्येकमिति स्थिति ।**

**अतोऽन्यविनियोगेऽपि चिन्ता का स्वस्य सोऽपि चेत् ।।३।।**

<u>श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण</u>

३. (आन्तरिकोपायोपदेश) <u>प्रभु सम्बन्धो न प्रत्येकम् (कर्तृकर्मबुद्धिविवेक)</u>; अत *सर्वेषाम् अन्यविनियोगे अपि स्वस्य का चिन्ता! इति स्थिति.*

सरल भावानुवाद अपनी सकल आत्मीय वस्तु और सबंधीयोंके साथ जीवात्माका एक साथ समग्रतासे प्रभुके साथ सबध आत्मनिवेदन द्वारा बधता है, एक एक करके नहीं इस कारण सबका जो अन्यविनियोग होता हो तो उसमे स्वयको चिता करने जैसा कुछ नहीं होना चाहिये सब कुछ समर्पण करने वालेका कभी अन्यविनियोग होता हो तो उसमें भी चिता करने जैसी कोई बात नहीं है

तुम्हारे पास वह कागज हो तो दूसरे पन्नेमें तुम एक दूसरी बात अभी देखो कि दूसरे श्लोकमें तीन और चार आतरिक उपायोंवाला अन्वय है अब सुननेवालोंमे कदाचित सबको यह विचार नहीं आये लेकिन जिन लोगोंने डिबेटमें भाग लिया था उनको इस तकलीफका अच्छी तरह विचार आयेगा ग्रथोंके स्वाध्यायमें तुम्हें रुचि है तो तुम यह बात अच्छी तरहसे समझोगे कि गुसाईजीने इस क्रमसे यह बात नहीं कही जिसे मैं चौथा वाक्य कह रहा हू उसे गुसाईजी तीसरा वाक्य कह रहे हैं जिसे मैं तीसरा वाक्य कह रहा हू उसे गुसाईजी चौथा वाक्य कह रहे हैं मैंने यह गडबड नहीं करी परन्तु यह परिवर्तन मैंने किस कारण किया? इसका एक हेतु तुम स्पष्ट रीतिसे समझ लो

<u>अपनोंका अन्यविनियोग होता हो तो भी चिता नहीं करनी</u>

मेरा अन्यविनियोग कि मेरे गृह कि परिवारका अन्यविनियोग इसमें गुसाईजीने मेरे गृहपरिवारका अन्यविनियोगके कारण चिता नहीं करनी और प्रभुसबध प्रत्येकके साथ नहीं है सर्वेषा है ऐसा कहकर अन्यविनियोगकी चिताका निवारण किया इसमें **प्रभुसबधो न प्रत्येकम्** वाक्याशके साथ अन्डर लाइन करी हैं महाप्रभुजी द्वारा बताया गया यह विवेकका उपाय है इसकारण ही ऊपर ब्रेकेट्में वह कर्तृ-कर्म-बुद्धि-विवेक अर्थात् निवेदन करनेवाला और निवेदनमें किस किस वस्तुका इसने निवेदन

किया है उसमें किसीभी प्रत्येकका अधिकार नहीं है ऐसे विवेकका उपदेश है

निवेदनका भान रखो अभिमान नहीं

तुमने आत्मनिवेदन किया है इस आत्मनिवेदनमें तुमने जो तुम्हार गृह परिवार इत्यादि सबका निवेदन प्रभुको किया, उस निवेदनके उपरान्त प्रभुमें उनका विनियोग नहीं होता हो और दूसरे कामोंमें विनियोग होता है इससे निवेदनकर्ताके तौरपर तुम्हारे किसी अहम्को ठेस पहुचती हो कि मैंने निवेदन किया उसके उपरान्त प्रभु मेरे लडकेस सेवा क्यो नहीं लेते? इसकी बुद्धि क्यो नहीं सुधारते? इसको ऐसी भावना क्यो नहीं देते कि यह प्रभूकी सेवामें प्रवृत्त हो जाये मैंने निवेदन किया है लेकिन मेरी पत्नीमें यह भावना क्यो नहीं जागती अथवा मैंने निवेदन किया है तो मेरे पतिमें यह भाव क्यो नहीं जागता कि यह मेरे साथ सेवामें लगे, जैसे कि दुकानमे लगा रहता है यह सब अहकार होते हैं अपने उसके लिये विवेकधैर्याश्रयका फिरसे पाठ करो तो तुमको विचार आयेगा कि निवेदनकर्ता होनेका अपना जो अभिमान है उस अभिमानको महाप्रभुजी यहा निवृत्त करना चाह रहे हैं ऐसा अभिमान मत रखो तुम निवेदन करो और उस निवेदनका भान रखो लेकिन उसका अभिमान मत रखो कल भी मैंने तुमको उदाहरण दिया था कि तुमने खानेवालेको पाचदस प्रकारकी सामग्री परोसी है, खानेवालेको जो अच्छा लगेगा वह खायेगा, नहीं अच्छा लगेगा तो नहीं खायेगा तुम्हारा कर्तव्य एक गृहस्थके तौरपर कब पूरा होता है कि जब तुम्हारे घर कोई खानेके लिये आया हुवा हो तो तुम उसे एकही सामग्री खिलाकर उसे विदा नहीं कर देते, परन्तु जो तुम्हारे घर खानेकेलिये आया है तो तुम उसके लिये दस सामग्री तैयार करो और उत्साहसे दसोंकी दस सामग्री उसकी थालीमे परोस दो ऐसे नहीं करते कि दो चार परोसकर बाकी सब अपने उपयोगके लिये बचा कर रखो, ऐसा स्वार्थपूर्ण व्यवहार नहीं करते तो

तुम्हारा निवेदन तुम्हारे अतिथिके प्रति ठीक ठाक है अब निवेदन अच्छी तरह हो गया तो उसके बाद कितना खाना कि नहीं खाना, उसे क्या अच्छा लगता है क्या अच्छा नहीं लगता यह उसके ऊपर तुमको छोड देना चाहिये, अगर अभिमान नहीं करते हो तो भान तुमको इतना सहायक होगा, अभिमान तुमको बाधक होगा बात तुमको समझमे आयी लेकिन यह बात चौथे वाक्यमें गुसाईजीने कही है, तीसरेमे नहीं कही

निवेदनके स्वरूपका विचार जरूरी

तीसरेमें गुसाईजीने जो बात कही है वह यह कि मैंने जो निवेदन किया है तो मेरेसे प्रभु सेवा नहीं लेते और मेरे बच्चे बच्ची सेवामे नहाते है मुझे तो कोई दूसरेही काममे अटके रहना पडता है यहा निवेदनकर्ताके तौरपर अपने अहको ठेस लगती दिखती है वहा अपने ममको ठेस लगती है अहतामूलक जो ममता है उसे ठेस लगती है यहा अपनी अहताको डायरेक्ट ठेस लग रही है तो उसका भी उपाय एक महाप्रभुजी बताते हैं कि –

**सर्वेषा प्रभुसम्बन्धो न प्रत्येकमिति स्थिति ।**
**अतोऽन्यविनियोगेऽपि चिन्ता का स्वस्य सोऽपि चेत् ।।**

अर्थात् यहा भी इसका उपाय यह बताया कि निवेदनका नेचर तुम अच्छी तरहसे समझ सको टीकाकारोंने यहा बहुत अच्छी तरहसे विवेचना करी है कोई भी आत्मनिवेदन करनेवाला, आत्मनिवेदन करनेसे पहले अपनी मुख्यताका अनुभव न करे तो आत्मनिवेदन कर ही नहीं सकता मुझे आत्मनिवेदन करना है, आत्मनिवेदनमें मैं प्रभुको क्या कहता हू कि मेरा देह मेरा परिवार, मेरा धन, मेरे मित्र, मेरे जो भी सगे सम्बधी हैं उन सबका निवेदन करता हू जैसे कोई सर्वानुमतिसे प्रस्ताव पास किया जा रहा हो और उसमें कोई हाथ उठाकर विरोध प्रकट करे कि मेरा निवेदन मत करना, तो क्या करना? प्रभुको

ऐसे कहना कि प्रभु मैं मेरा सर्वस्व तुमको निवेदन करता हू लेकिन एकको छोडकर सरदारजीके लिये जैसा कहा जाता है कि **कोना छोडकर भाईयो और बहिनो** ऐसे एकको छोडकर सबका निवेदन करता हू अब एक बार हम ऐसा चान्स दें तो ऐसे दस चीजें पीछेसे छूट जायेंगी यह कहेगे कि मेरा भी निवेदन मत करना, बेकारके लफडेमें मुझे क्यों फसा रहे हो ऐसे पाच दस लोग इक्कठे हो जायें तो सबही कहने लगेंगे किसने कहा तुमको मेरा निवेदन करनेकेलिये? तुम्हें अपना निवेदन करना हो तो करो, मरना हो तो मरो, जीना हो जीओ, मेरा निवेदन क्यों कर रहे हो? ऐसे एक एक जन विरोध प्रकट करता जाये तो मुसीबत हो गई ना! निवेदनका समय ही नहीं आयेगा हमें पहले अखबारमें एक सार्वजनिक सूचना देनी पडेगी कि अमुक दिन, अमुक तारीखको अमुक महाराजके ठाकूरजीके सन्मुख मैं आत्मनिवेदन करने जा रहा हू अतएव सूचना दी जाती है कि इस आत्मनिवेदनमे मैं मेरे सगे सम्बन्धी हरेकका निवेदन करूगा जिसे विरोध करना हो तो वह अमुक तारीखसे पहले अपना विरोध लिखवा दे नहीं तो फिर उसका विरोध मान्य नहीं किया जायेगा

अगर ऐसे ब्रह्मसम्बन्ध लेना हो तो कहीं पार पडेगा? महाराज तो किसी भी समय गाममे आ जायेंगे व्रतभी नहीं कराते और ब्रह्मसम्बन्ध दे देगे आज ब्रह्मसम्बन्ध ले लो कल व्रत कर लेना इसमें इतना अधिक औफिशियल कदम लेने जायें तो तो **वो दिन कहा के मियाके पैरमें जूती** सब पैर पटकते रह जायेंगे ब्रह्मसम्बन्धसे अतएव इतना अधिक कुछ औफिशियल कदम तो अपनने लेना नहीं होता ब्रह्मसम्बन्धके समय यहा तो फटाफट काम होता है अतएव एक बात ध्यानसे समझो कि आत्मनिवेदन करनेसे पहले हमें किसीकी जरूरत है कि किसीका विरोध है कि नहीं? हमें ऐसा समझना चाहिये कि मेरे जो कुछ

सबध हैं उनका सर्वेसर्वा मैं हू अतएव निवेदन करनेसे पहले अपनी प्रधानता है और है ही!

पुराने जमानेमें जब दो देशोके बीचमें झगडा अथवा यूद्ध होता था तब एक देशका राजा युद्धमे हार जाता था तो उस सरेन्डर करना पडता था जब तलक सरेन्डर नहीं होता था वहा तलक वह उस देशका राजा, और जिस क्षण उसने विजेता राजाके आगे सरेन्डर कर दिया तदुपरान्त वह अपने देशका राजा न रह कर प्रजा बन जाता था अब जिसके सामने सरेन्डर किया वह उस देशका राजा बन जाता था

हम सब जानते हैं कि हिन्दूस्तानमें कितने सारे स्टेटस् थे वल्लभभाईने सबको सरेन्डर करा दिया अब यह सब राजा लोग क्या हो गये? प्रजा हो गये बादमें तो इनकी सालाना पेन्शनभी बद कर दी गई तो भी सुप्रीमकोर्टने उनकी शिकायत नहीं सूनी कितने नीचेके दरजेके यह प्रजा हो गये हमारा कोई नुक्सान होता है तो कोर्ट हमको सरकारसे कौम्पनसेशन दिलाती है लेकिन राजाओंको कुछ भी कम्पेन्सेशन नहीं मिला सुप्रीमकोर्ट ने ना कर दी क्योंकि सरकारको अधिकार है तुम्हें सालाना पेन्शन दे कि नहीं? लोग दलील देने लगे कि राजा लोग क्यों नहीं धधा करते किस कारण सालाना पेन्शनके ऊपर निर्भर हैं? यह राजा लोग बिचारे कहते थे कि हमने सारा राज्य दे दिया तो उसकी सालाना पेन्शन मिलती है भीख नहीं कोंग्रेसी लोग कहते थे **दिया होगा, किस कारण दिया? नहीं देने?** राज्य देनेके बाद तुम इस प्रकारकी माग नहीं कर सकते जब सरेन्डर कर दिया तो उसके बाद तुम राजा नहीं रह गये अब कहनेके लिये कोई अपनेको भूतपूर्व राजा लिखे, ऐक्स रूलर लिखे लेकिन ऐक्सका तात्पर्य जो कि अग्रेजीमें नहीं है कि समाप्त हो गया वैसा होता हैं जैसे ऐक्सपार्टी जो मनुष्य चला गया हो अथवा उपस्थित

न हो वह ऐक्स रूलर लिखो तो इसका मतलब यह कि हम तुम्हारे कोई राजा नहीं है

निवेदन करनेसे पहले इसका जो कुछ भी राजापना है लेकिन निवेदन करनेके बाद जैसे राजा सरेन्डर हो जाता है और उसका राजापना नहीं रह जाता है वैसे निवेदनका भी अपना जो कुछ गृह-परिवार जो वस्तु कि जो व्यक्ति है उसके ऊपर अपना राजापना नहीं रह जाता इस प्रकार निवेदन करनेके बाद परमात्माके पास हम सब निवेदित ही है इसमें न तो है कोई निवेदक और न ही कोई निवेदित लेकिन निवेदन करनेके समय एक निवेदक और दूसरा निवेदनीय हो सकता है तुलसीदल हाथमें लेकर निवेदनकी क्रिया करनेवाला व्यक्ति निवेदक होता है और इस निवेदनमें जो गृह-परिवारको निवेदित करे वह निवेदनीय वस्तु है निवेदन अर्थात् ठोस शब्दोमें समझो कि तुलसीदल हाथमे लेकर जो शपथ तुम प्रभुके सन्मुख लेते हो यह तुलसीदल प्रभूके चरणोमें समर्पनेमें आती है अर्थात् तुम्हारा यह शपथका कार्यक्रम पूरा हो गया प्रभुने तुलसीदल चरणमें एक्सेप्ट करी इसका मतलब कि तुम्हारी निवेदनकी प्रक्रिया पूरी हुई और प्रभुने तुम्हारा निवेदन स्वीकार लिया अब निवेदन स्वीकारने के बाद तुम निवेदक नहीं रह गये और न कोई निवेदनीय ही रह गया तुम सब निवेदितात्मा हो गये यह कर्तृ-कर्म-बुद्धिका विवेक अपने लोगोंका अन्यविनियोगके बारेमे लागू पडता है

प्रभुको आत्मनिवेदन करनेके बाद हम हमारे सबधोंके राजा नहीं रह गये, निवेदन नहीं किया था वहा तलक तो हम राजा थे मेरा मेरी पत्नीके साथ जो सबंध है उसका मैं राजा, पत्नि नहीं यह कोई मैं पुरुषप्रधानताकी बात नहीं कह रहा, पत्नीका मेरे साथ जो सबध है उसकी पत्नि राजा, मैं नहीं मेरा मेरी सततिके साथ जो सबध है उसका मैं राजा मेरी सतति

राजा नहीं लेकिन मेरी सततिका मेरे साथ जो सबध है उसका राजा मैं नहीं परन्तु मेरी सतति राजा

निवेदन अपने सबधोका होता है

डिबेटमें जो आपने सुना उसकी मुझे बहुत खुशी हुई हमारे सबधोंका हम समर्पण करते हैं, अपने व्यक्तिका समर्पण नहीं करते व्यक्तिका समर्पण करें तो ऑब्जेक्शन हो सकता है हमारे सबधोंका हम समर्पण करें तो इसमें कोई ऑब्जेक्शन नहीं ले सकता मैं मेरे सबधोको समर्पित कर रहा हू किसी व्यक्तिको समर्पित करू तो विरोध प्रकट करना वाजिव हो सकता है घरको विरोध प्रकट करनेकी सामर्थ्य हो कि न हो, घर भी राजा नहीं रह जाता यह विरोध प्रकट करना घरकी सामर्थ्य, मैं देहधारी कि मनोधारी अर्थमें नहीं कह रहा कानूनके हिसाबसे कह रहा हू उदाहरणके लिये मैं एक किरायेके घरमें रहता हू, मकानमालिक मेरेसे किराया लेता है मेरे रहनेका, मैं इसे किराया देता हू जितनी जगहका किराया देता हू उतनी जगहका मैं किरायेका मालिक हू वास्तविक मालिक नहीं मैं जब आत्मनिवेदन करू तब मेरा यह किरायेका मालिकाना हक मैं प्रभुको आत्मनिवेदनके समय निवेदन कर सकता हू अब जो मेरेमें ऐसी भ्रमणा भर जाये कि अब तो मकान मालिकके इस जजालसे छूट गया, अब मैं किस कारण किराया दू? मैंने तो प्रभुको निवेदन कर दिया है, और प्रभु फ्लेटमें रह ही रहे है जाओ टिल्लिलीली! ऐसा किसी दिन कोर्टमें कोई जज मानेगा क्या? मकानमालिक कोर्टमें जाये कि किराया नहीं देता तो तुम कहो ना ना मैंने तो सब कुछ प्रभुको आत्मनिवेदनमे सौंप दिया! क्योकि गद्यमत्रमे आगार शब्द था कि नहीं! हमारा धर्म ऐसा बताता है कि ब्रह्मसबध लेनेके बाद मकानमालिकको मकानमालिक नहीं मानना, प्रभुको मालिक मानना फिर तो बिचारी कोर्टभी क्या करेगी? जजको अपनी कोर्टमें अविश्वास हो जायेगा कि यह कोर्ट है कि पागलखाना! ऐसा मुद्दा मेरे पास

चर्चाकेलिये आया ही कैसे? अतएव तुम्हारी ऐसी बातें कोर्टमें नहीं चलेगी तुमने ब्रह्मसबंध लेकर भगवानको घर अर्पण कर दिया उससे मकानमालिकका मालिकाना हक खत्म नहीं हो जाता तुम्हारा सबधही तुम निवेदित कर सकते हो अतएव घरको भी कोई कानूनी ऑब्जेक्शन हो तो तुम्हारे निवेदनमें, तो घरभी विरोध प्रकट कर सकता है लेकिन यह घर किस कारण प्रकट नहीं करता क्योंकि ऐसा दावा तुम करते नहीं एक बार ऐसा दावा करो तो फिर मकानमालिक तुमको नोटिस देगा कि ब्रह्मसबध लेना हो तो इसके तीन महीने पहले हमें बताना पडेगा. और तीन महीने पहले मैं घर खाली करा लूगा. फिर तुमको ब्रह्मसबंध लेना हो तो ले लेना यहा तुम्हें रहनेकेलिये घर देनेमें आ रहा है, निवेदन करनेकेलिये नहीं दिया जा रहा. रेन्ट एग्रीमेन्टमें फिर यह लिखा मिलेगा तुम्हे कि कृपा करके इस रेन्ट एग्रीमेन्टका गलत उपयोग ब्रह्मसबंध लेते समय नहीं करना. क्योंकि हमारे घरका भी कोई कानूनी बधन हो तो घर भी विरोध प्रकट कर सकता है लेकिन यह प्रकट नहीं करता उसका मूल कारण यह ही है कि घरके कायदोंका जो विरोध सकता है उसके औपोजिशनमें निवेदन करा ही नहीं जा रहा अतएव मकानमालिक घर खाली कराये तो हमें खाली भी करना ही पडेगा और तब हमारे माथे बिराजते ठाकुरजीको भी खाली करना पडेगा

हम ऐसा भी नहीं कह सकते अरे पागल! यह ब्रह्माडका नायक है और तू इसे नोटिस कैसे दे सकता है? यह मकानमालिक घबडा जायेगा कि यह कैसा धर्म प्रकट हो गया? मैंने तो तुम्हें किरायेदार समझा था, मैंने तुमको घर किराये पर दिया और तुम कह रहे हो कि ब्रह्माडनायकसे कैसे खाली कराया जाय? अरे, ब्रह्माडनायकके साथ मेरा क्या लेना देना? मेरे यहा तो रेन्टएग्रीमेंटमें ब्रह्माडनायकका नाम नहीं है तुम्हारा नाम है यह तो ऐसे ही कहेगा कि नहीं? अतएव ब्रह्माडनायकका

ब्रह्माडनायकपना इस बारेमें काम नहीं आयेगा ब्रह्माडनायकको तुम पूछने जाओगे ना तो वह भी ऐसे ही कहेगा कि **तुम्हारा फ्लेट छोड़कर ब्रह्माडका नायक हू** वह यह नहीं कहेगा कि तुम्हारे ही फ्लेटका नायक हू यह बात तुम्हे स्पष्ट रीतिसे समझ लेनी चाहिये

यह सब बारीकिया हम समझते नहीं है ब्रह्मसबध ले लिया, ब्रह्मसबध दे दिया, और कुछ पता ही नहीं होता कि क्या हो रहा है और क्या नहीं हो रहा अरे! समझो तो सही कि गाडी कहा जा रहीं है, कौनसी गाडीमें बैठे हो अतएव जो हम निवेदन करते हैं वह अपना सबध निवेदन करते है वस्तु कि व्यक्तिका तो समर्पण करते है ना कि निवेदन अर्थात् हम जो कुछ भी प्रयोग कर रहे हैं जिस किसी वस्तुको नियमानुसार रीति से प्रयोग करनेका हमें है उसे ही हम अपने प्रभुको भी समर्पित करेंगे, उसी प्रकार विनियोग करेंगे

फिरसे एक अलग प्रकारके विवेकका यहा उपदेश है किसी प्रकारका आर्थिक उपदेश देनेमें आया है आर्थिक उपदेश अर्थात् क्या? कि **प्रभवतीति प्रभु** जो समर्थ होता है उसे प्रभु कहते है जो स्वयको सब प्रकारोंमें ढालनेमें समर्थ न हो उसे पभु नहीं कहते मोटे तौरपर हमे क्या प्रोब्लम हो जाती हैं कि हम किसी प्रकारका अभिमानतो मानलेते है कि मैं आत्मनिवेदी हू, मैं पुष्टिमार्गीय हू लेकिन इस अभिमानको हम जी नहीं सकते क्योंकि कोई न कोई परिस्थिति ऐसी आ जाती है कि वह हमारे अभिमानको तितर बितर कर देती है अतएव हमको अपने अभिमानके साथ कुछ छूट लेनी ही पडेगी

अभी मैंने एक बहुत अच्छा लेख पढा था यहा की बात नहीं है अमेरीकाकी बात है कोई एक स्त्री जो अपने स्वयके रूपवती होनेके बारेमें बहुत आश्वस्त थी, अपने यहांकी

परिभाषामे रूपगर्विता-नायिका थी तो इसे सध्या समयके कामकाजके बाद कहीं डिनरमें जाना था अब दफ्तरमें से निकले तो सबका हाल-बेहाल होता है, अतएव घर पहुचकर मेकअप करके हेयर स्टाईल करके फिर डिनरमें जाना था अतएव यह बहुत तेज कार चला रही थी वहा कोई सिगनल तोडनेका अपराध हो गया तो वहासे पुलिस इसके पीछे पडी अर्थात् इसकी गाडीके पीछे पीछे पुलिसकी लाल लाईटकी चमचमाहट चालू हो गई लेकिन यह तो गाडी ड्राईव करती ही रही अब पुलिस भी घबरा गई कि क्यो बेकार गाडी चला रही है पुलिसने ओवरटेक करके उसे रोककर पूछा बैक मिररमें लाल बत्ती नहीं दिखती क्या? उस स्त्रीने कहा तुम भी कैसी बात कर रहे हो? इतनी देर दफ्तरमें काम करनेके बाद थोडे बाल तो बिखर ही जाते हैं, घरमे जाकर सवार लूगी. लेकिन कार ड्राईव करते समय शीशेमे कहा बाल बाने बैठू. अभिमान रखा हुआ था कि मैं रूपवती हू, मेरे बाल ठीक ठाक ढगसे सेट रहने चाहियें पहले तो लालबत्तीका सिगनल नहीं समझती और फिर पूछनेपर भी समझती नहीं इसे याद दिलाओ तो भी याद नहीं आती ऐसा ही समझती हैं कि हा ये तो दफ्तरमें इतनी देर कामकरनेके बाद तो बाल बिखरही जाते हैं न इसमे शीशा देखनेकी क्या जरूरत है? घर जाकर देख लूगी गलत जल्दबाजी क्यों करते हो? अरे भाई! मुद्दा यह नहीं है, तू गलत ढगसे कार चला रही है, पीछे आती ट्रैफिक पुलिसकी गाडीके सिगनलको देखनेके लिये कारके बैक मिररको क्यों नहीं देख रही? ऐसे ही हम बहुत सारे अभिमानोंको मान लेते हैं कि मैं आत्मनिवेदी हू, मैं कालकर्मातीत पुष्टिमार्गीय हू और फिर ऐसे अभिमान बादमें जीते नहीं हैं सरकारी टेक्सेशनके कायदोंके चुगलसे बचनेकेलिये अपने सेव्य स्वरूप पुष्टिप्रभुको भी अपना माननेके स्थानपर सार्वजनिक कि सरकारी मन्दिरोंमें बिराजती मूर्तिके तौरपर स्वीकार लेते हैं

परमात्मा ऐसा नहीं है यह तो प्रभु है तुम परमात्माकेलिये जैसा भाव रखो तो भी उस रूपमें प्रकट होनेकेलिये समर्थ है और यह तुम्हारे प्रति जो भाव रखे वैसा भी रूप धरनेकेलिये समर्थ है इस अर्थमें परमात्मा प्रभु होनेके कारण जो तुम यह भाव रखोगे मनमें कि **प्रभुसम्बन्ध**. तुमने जो करा है तो वह वैसा होनेमें समर्थ है परन्तु बादमें तुम्हें केवल तुम्हारे लिये उसके सेव्य होनेका भाव रखना पडेगा वह निभता नहीं है तो महाप्रभुजी कहते हैं कि ऐसा गलत अभिमान रखना ही नहीं **अभिमान च सन्त्याज्य स्वाम्यधीनत्वभावनात्** (विवेकधैर्याश्रय ३) स्वामीकी सेवामें तो बहुत कुछ जुडे हुवे होते हैं उनमेंसे किसके पास क्या काम कराना यह तो उसकी स्वतन्त्र इच्छाके ऊपर निर्भर है

हम किसी के साथ सबंध जोडे, डाक्टरके साथ सबंध जोडे कि बहुत बीमार पड गये है मुझे एक बार ऐसा हुवा रातको सूपारी खाकर सो गया सुबह दातमे दर्द होना शुरु हो गया मैं डाक्टरके पास गया, डाक्टरने मुझे कहा कि तुम्हारे सारे दात सड गये हैं निकालने पडेंगे, मैं तो घबरा गया मैंने कहा कि मरा, एक सूपारी क्या खाई कि लेनेके देने पड गये बादमें रघूनाथलालजी दादाभाईके पास गया दादाभाईने कहा कि निकलवाना ही नहीं, क्योंकि एक एक दातके निकालवानेके अस्सी कि सौ रूपया, तो सब दात निकालवानेके कितने? इसके बाद दादाभाईने मुझे एक मजन दिया कि यह मजन करो, रोग मिट जायेगा वास्तवमे रोग मिट गया और आज तलक दात नहीं निकलवाये तो हम किसीको डाक्टरके पास डाक्टर समझ कर जायें लेकिन यह डाक्टर किस बातका प्रभु है यह पता नहीं चले और सारे दात निकाल डाले, इलाज करनेके बजाय **रोयगे हम हजार बार कोई हमे रुलाये क्यों?** किसी न किसी दिन यह दात गिरेगे तो सही यह मुझे पक्का पता है लेकिन कभी तो

गिरेंगे अतएव आज ही तू उन्हें निकाल डाल यह तो नहीं भायेगा ना!

तो प्रभु ऐसे नहीं हैं कि तुम डाक्टरके पास दातोका इलाज कराने जाओ और वह इलाज करनेके बजाय सारे दात ही निकाल डाले प्रभु हैं, तुम जैसा भाव रख कर जाओगे वैसा स्वरूप धारण करनेमे वह समर्थ हैं, और तुम्हारे प्रति जैसा भाव रखते हैं वैसा रूप भी धारण करनेमे समर्थ है अतएव प्रभु शब्दमें बहुत मीठा एक आर्थिक उपदेश महाप्रभुजीने दिया है कि तुमने सबध किसके साथ जोडा है? प्रभुके साथ जो रूप चहे वह ले सके उसके साथ किसी भी सबधको निभानेमे तुम्हें जो कठिनाई आ रही है वैसी कठिनाई उसको नहीं आती हमारा कृष्ण इस बारेमें प्रत्यक्ष प्रमाण है कि तुम्हें पढना हो तो इसे गीता भी आती है तुम्हे पढाना हो तो सान्दीपनीके आश्रममें एडमिट होनेकेलिय तैयार है तुम्हे पिटाई करनी है तो यशोदासे मार खानेकेलिये भी तैयार है मरना हो तो मारनेकेलिये तैयार है कसकी तरह जीना हो तो डरा भी सकता हैं और अगर डराना हो तो स्वय रणछोडराय बनकर इसे भागना भी आता है तुम तय करो कि तुम्हें क्या करना है? जो तुम्हे करना है तदानुसार रूप धारण करनेको प्रभु तैयार है

**सर्वेषा प्रभुसम्बन्धो** हरेकके साथ सबध निभानेमें कुछ परेशानी हो सकती है लेकिन किसी भी प्रकारका सबध निभानेमें कृष्णको कभी भी कोई परेशानी नहीं होती अर्थात् हम जानते है बालीने जब रामचद्रजीको कहा **मैं बैरी सुग्रीव पियारा कारण कवन नाथ मोहि मारा** भगवानने कहा **ले ना तू मेरे पैरमे तीर मारले. इसमे मुझे कुछ परेशानी नहीं है** किसीकी ताकत है ऐसा कहनेकी? नहीं, कृष्ण जो सर्वज्ञ है वह सान्दीपनीके यहा पढनेकेलिये जा सकता है, है किसीकी ऐसी ताकत? जिस कृष्णने कितनो ही को भगाया वह स्वय भाग जाय,

रणछोडरायकी जय करा कर इतनी ताकत इसमे है इसी कारण हम इसे प्रभु कहते है प्रभुके साथ संबध बाधा है तुमने, तुम्हे अगर भागना है तो यह भागनेमें भी तुम्हारा साथ देग लडना है तो लडनेमें भी साथ देगा अर्जुन भागू कि लडू ऐसी किमकर्त्तव्य विमूढावस्थामें था तब कृष्णने कहा नहीं! **लड, मैं तुझे भागने नहीं दूंगा.** लेकिन वास्तवमें तुम्हारी भागनेकी वृत्ति है तो भागेगा तुम्हारे साथ ऐसा कुछ नहीं है कि भगवान् तुम्हारे साथ भाग नहीं सकता

हमारे पुष्टिमार्गका इतिहास इस बारेमें प्रमाण है कि औरगजेबके सामने जब हम लडनेके लिये समर्थ नहीं रहे तो हम श्रीनाथजीको लेकर भाग गये तो श्रीनाथजी भागे कि नहीं हमारे साथ? उसके पहले भी **भावत तोहे टोडको धनो, कांटा लागे गोखरु लागे फाट्यो जात तनोक** प्रसंगमें भी भागे कि नहीं भैंसेके ऊपर चढकर श्रीनाथजी? तो यह भाग भी सकता है, भगा भी सकता है हरेक प्रकारका सबध निभा सकता है तुम तय करो कि तुम्हे क्या करना है? प्रभु तुम्हारे हाथमें आये है, जो सबध तुम बाधोगे वैसा संबध तुम्हारे साथ बांधनेको तैयार है भगवानको कोई पति कहता है तो कोई पिता तो पति कहना कि पिता? अरे तुम तय करो ना? तुम इसके बच्चे हो तो यह तुम्हारा पिता है तुम इसकी पत्नी हो तो यह तुम्हारा पति है तुम इसके दोस्त हो तो यह तुम्हारा दोस्त है तुम इसके गुरु हो तो यह तम्हारा शिष्य है तुम इसके शिष्य हो तो यह तुम्हारा गुरु है तुम इसके शरीर हो तो यह तुम्हारी आत्मा है लेकिन तुम अगर आत्मा हो तो यह तुम्हारा परमात्मा है

## भक्तिके सबधसे हम कृष्णकी आत्मा बन सकते हैं

एक बार भूले चूके भक्तिको खिला कर देखो तो कदाचित परमात्मा कृष्ण भी ऐसे कह सकता है कि वास्तवमें मेरी आत्मा तो मेरा भक्त है अर्थात् तुम कृष्णके परमात्मा हो

सकते हो यह बात कभी भी भूल मत जाना कृष्णके परमात्मा बन सकते हो तुम एक बार ऐसे सबंधसे जुड़कर देखो कि कृष्ण तुम्हारी आत्मा और तुम कृष्णकी परमात्मा, कृष्ण तुम्हारा सर्जनहार और तुम कृष्णके सर्जनहार बन सकते हो क्योंकि **सर्वेषा प्रभुसम्बन्धो** जितनी वेराइटी **सर्वेषा** द्वारा कहनेमे आती हैं उन सबही वेराइटीको ग्रहण करनेवाला ऐसा मल्टीफेसेट, मल्टीडायमेन्शनल फिनोमिना कि पर्सन है

किस सबधको यह निभा नहीं सकता? **सर्वेषा प्रभुसम्बधो न प्रत्येकम्.** प्रत्येक अर्थात् तुम ऐसा सोचकर कैसे बैठ गये कि तुमने निवेदन किया अर्थात् तुम्हारा निवेदनही मुख्य है किसी दूसरेका यह अगीकार नहीं करेगा? अरे तुम मुख्य हो तो वह दूसरेको मुख्य बना सकता है तुम गौण हो **तो** तुमका मुख्य बना सकेगा यह प्रत्येकके साथ नहीं सबके साथ बंधने बांधनेकेलिये समर्थ है **मल्लानाम् अशनि, नृणा नरवर, स्त्रीणा स्मरो मूर्तिमान्, गोपाना स्वजनो, असता क्षितिभुजा शास्ता, स्वपित्रो. शिशु, मृत्यु भोजपते, विराड् अविदुषा, तत्त्व पर योगिना, वृष्णीना परदेवता** (भागवत पुराण १०/४३/१७)

**सर्वेषा प्रभुसम्बध** किस प्रकार यह समझमें आया कि नहीं?

**<u>प्रभुकी प्रभुतामें विरोधाभास नहीं है</u>**

कंसके मल्लयुद्धके अखाडेमें वास्तवमे किसने तूफान मचाया इस बारेमें इन्क्वारी कमीशन बैठे और साक्षीके तौरपर लोगोंको बुलाया गया होता तो हरेककी बातोंमें विरोधाभास छलकता मिलता! कोई कहता **वज्र जैसा कोई पहलवान आया था** तो दूसरा कहता **ना ना कोई श्रेष्ठ पुरुष आया था** स्त्रीयोकी गवाही लेने जाते **तो** मिलता **कोई कामदेव आया था** इसके साथ जो वहा गोपबालक थे उनसे पूछा जाता **तो** वह बताते **हमारा साथी वहा गया था** कंसको पूछा जाता तो वह

कहता मृत्युरूपी अतिशय भयकर पुरुष आया था. जनसाधारण कहते ना जाने कौन आया था अथवा तो ऐसे भी कहते कितना सुदर कोमल बालक लोहूके कपडोमें कैसा खराब लग रहा था योगीजन कहते साक्षात् परमतत्व मूर्तिमान होकर प्रकट हो गया. सारे वृष्णि जो वहा विद्यमान थे उनके अनुसार तो साक्षात् देवाधिदेव ही दर्शन दे रहे थे. वास्तवमें सारी रिर्पोट अन-रिलायेबल ही हो जायेगी! लेकिन यह कोन्ट्राडिक्शन हमारी इस छोटी खोपडीके कारण है महाप्रभूजी कह रहे हैं कि प्रभूकी प्रभूताके बारेमें कोन्ट्राडिक्शन नहीं है यह तो प्रभुके स्वरूपको शृगारित करनेकी प्रभुकी सामर्थ्य ही है विरुद्धधर्माश्रय होनेके कारण नहि विरोध. उभय भगवति अपरिगणितगुणगणे ईश्वरे अनवगाह्यमाहात्म्ये वादिना विवादानवसरे' (भागवत पुराण ६/९/३६)

तो इसमें किसी प्रकारका कोन्ट्राडिक्शन नहीं है इसमें तो सब रूप-गुण-धर्म परस्पर विरुद्ध होते हुये भी ऐसे ही रहते हैं इसके अतिरिक्त इसमें एक और खास बात समझनेकी है कि जब तुम्हारे परिवारके लोगोका अन्य विनियोग हो रहा है किसी भी कारणसे तो इसमें दो सम्भावनाये हो सकती है एक सम्भावना यह हो सकती है कि यह बिचारा तुम्हारे साथ सेवामे जुडना चाहता हो लेकिन किसी कारणवश नहीं जुड सकता कोई भी सामाजिक कि पारिवारिक जिम्मेदारी इसके ऊपर हो सकती है दूसरी सम्भावना यह भी हो सकती है कि यह तुम्हारे साथ जुडना नहीं चाहता क्योंकि यह ऐसा समझता है कि निवेदन तुमने किया है तो ठाकुरजीकी सेवा करना यह तुम्हारा कर्तव्य है. मैंने तो निवेदन नहीं किया तो मेरे गलेमें किस कारण जबरदस्ती घटी बाध रहे हो? एक ऐसा भी अभिगम इन लोगोका हो सकता है इन दोनों अभिगमोमें महाप्रभूजीके सिद्धान्तके अनुसार अगर तुम इनसे जबरदस्ती ठाकुरजीकी सेवा लेते हो तो यह अनुचित बात है महाप्रभूजीने निबधमें इस बातको खोला है

पाच प्रकारके प्रतिबंधोमें सेवा छोड देनी चाहिये

**विक्षेपाद् अथवा अशक्त्या प्रतिबन्धादपि क्वचित्। अत्याग्रहप्रवेशे वा परपीडादिसम्भवे. पूजा त्यक्तव्या।।** (नदी नि प्र २/२४७)

(१) विक्षेप अर्थात् आन्तरिक
(२) अशक्ति अर्थात् शारीरिक
(३) प्रतिबन्ध अर्थात् पारिवारिक
(४) अत्याग्रह अर्थात् आहंकारिक
(५) परपीडा अर्थात् मामकारिक

ऐसे यह पाच परिस्थितिया महाप्रभुजीने सेवा-पूजामें प्रतिबधरूपमे बताई हैं

(१) **विक्षेप** अर्थात् किसी मानसिक कारणसे सेवा-पूजामें निरतर मनोविक्षेप रहना अर्थात् प्रतिबध होना (२) **अशक्ति** अर्थात् किसी प्रकारकी बीमारी कि अतिवार्धक्यके कारण होता शारीरिक प्रतिबध (३) **प्रतिबंध** अर्थात् परिवारमे कोई हमें रोकना चाहे कि सेवाकी मुसीबत घरमें मत घुसाओ बहुत मुसीबत खडी हो जायेगी घरकी सारी शान्ति भग हो जायेगी अगर सेवाका कम यहा चालू करोगे तो वह हमको रास नहीं आयेगा यह **प्रतिबन्धादपि क्वचित** कहलाता है (४) **अत्याग्रह** अर्थात् तुम्हारे मनमें किसी प्रकारका अहकार घुस गया हो कि नहीं इतना नेग तो धरना ही है यह पलना तो झुलाना ही है, हिंडोला आ गया तो केसरका हिंडोला तो करना ही है अब नहीं होता तो किसीकी जेब काटकर करो, किसीकी चापलूसी करके करो, अखबारमें विज्ञापन देकर करो यह सब अत्याग्रह ग्रथेके रूपमें चलती हवेलिओंमे घर कर जाती हैं इसके सन्दर्भमे महाप्रभुजी कह रहे हैं कि ऐसे मनोरथ करनेसे पहले सेवा छोड दो भाई साहब! इस अध्यायको बद करो, यह अध्याय चालू रखने

जैसा नहीं है **अत्याग्रहप्रवेशे त्यक्तव्या.** तुम्हारा कोई अहकार तुम्हे प्रभुकी सेवा करनेमे आडे आ रहा है तुमने एक गलत अहकार सोच लिया है कि यह **तो मुझे करना ही है, ऐसे तो करना ही है.** अब किस प्रकार? या तो भिखारीपना करके या फिर व्यापारिक तरीकेसे ऐसा अहकार क्यों नहीं छोड देते? छोड दो क्योंकि तुमसे सहज रीतिसे सेवा नहीं निभ रही ऐसा अहकार तुम्हें सताता हो और तुमसे ऐसा अहकार छूटता भी नहीं हो तो श्रीकृष्णके सेव्यस्वरूपको छोड दो महाप्रभुजी कहते हैं कि तुम सूखी रहोगे ऐसे अहकारके साथ कृष्णको पकडोगे तो कृष्ण भी दुःखी होगे और तुम भी दुःखी होगे (५) **परपीडा** अर्थात् जिन्हें मैंने अपना मान लिया है वह सेवा क्यों नहीं करते? अर्थात् जबरदस्ती सेवा करानी अरे किसीने सेवा नहीं करनी तो जबरदस्ती सेवा क्यों कराते हो? पीछे ही पड जाना, खून चूस लेना जोक बन कर, किसने तुमको यह छूट दी है? तुम किसीको अपना मानते हो तो अर्थात् जबरदस्ती सेवा कराओ यह तुम्हारी ममताका कोई बडा अतिरेक ही है जो सेवामें आडे आ रही है अर्थात् यह मामकारिक समस्या प्रतिबध है. तुम्हारा ममकार तुम्हें सेवा करनेमे कठिनाई खडी कर रहा है. तुम्हारी सेवाके कारण कोई कष्ट पाता हो सेवामें आनन्द नहीं ले पा रहा, बावजूद इसके तुम सेवा करवानेका दुराग्रह रखते हो... तुम अपने लडकेके कि अपनी पत्नीके कि अपने भाईके कि अपने पिताके कि पतिके पीछे पड जाओ कि **मैंने सेवा पधराई है तो तू सेवामें ना करनेवाला कौन?** ऐसी मनोवृत्तिमे तुम्हारी ममताका अतिरेक तुम्हारी सेवाके आडे आ रहा है क्योंकि तुम्हारे परिवारके सदस्योका एक ही अपराध कि तुम उनको अपना मान रहे हो जो कि तुम्हारे सेवाके कार्यक्रमको अपने भावोंके अनुरूप नहीं मान रहे इस कारण उन लोगोंको तुम इस सेवाकी पीडा दे रहे हो नहीं तो किस कारण पीडा दो? अतएव यह **मामकारिक** प्रतिबध है सेवामें

यह पाचो प्रतिबध महाप्रभुजी आज्ञा करते हैं सेवाको छोड कर पहले झगडा तो मिटा दो, फिर दूसरी बात एक घर तो डाकिनी भी छोडती है ऐसे एक प्रभुकी सेवाको तो झगडे बिनाकी आनन्दरूप रहने दो परमानन्दात्मक प्रभु हैं इस परमानन्दात्मक प्रभुकी सेवाको दूसरोको पीडा देनेवाली क्यों बना रहे हो?

तुमने मान लिया कि मैंने निवेदन किया है सबका और मैंने जिनका निवेदन किया है वह सेवा न करें और अन्यमें उनका विनियोग हो यह मैं कैसे सह सकता हू? अर्थात् तुम समझते हो क्या अपने आपको? ऐसे पूछनेकी इच्छा हो रही हो तो महाप्रभुजी कहते हैं **अभिमान च सन्त्याज्य. स्वाम्यधीनत्व-भावनात्.** तुम अपनेको स्वामी मान रहे हो कि ठाकुरजीको स्वामी मान रहे हो? बताओ तो सही वन्स् एण्ड फोर आल इसका खुलासा तो करो ठाकुरजीको निवेदन करनेके बाद भी तू प्रभुको अपना स्वामी मान रहा है तो दूसरेकी चिंता करके उनको तुम भगवत्सेवाके बहाने पीडा देनेवाला कौन? जबरदस्ती दूसरोंसे सेवा कराने वाला तू कौन? ठाकुरजीको लेनी होगी तो लेंगे, नहीं लेनी होगी तो नहीं लेगे जो अहकारिक समस्या है यह अत्याग्रहात्मिका कि **ना ना ! निवेदनतो मैंने किया था, यह तो सब सेवामें ऐसे ही चालू हो गया** वास्तवमे निवेदन करनेवाला कौन? **मैं** लो तुम्हारी इस **मैं** ने ही तो मार रखा है ना फिरसे मैं तूमने कैसे किया? स्वामी तुम कि वह? अगर तुम प्रभुको स्वामी मान रहे हो तो ऐसा मैं करनको तूमसे किसने कहा? किसने अक्कलका ठेकेदार बननेको कहा? निवेदन करनेके बाद तुम निवेदक नहीं परन्तु निवेदित हो गये तुम निवेदित हो और तुम्हारे द्वारा निवेदित किये गये भी सब निवेदित हैं उन सबमेंसे जिनसे प्रभुको सेवा लेनी होगी लेगे, जिनसे नहीं लेनी होगी उनसे नहीं लेंगे

अब कभी कबाद ऐसा सिद्धान्त सुनाई दे जाता है कि तुरन्त अच्छा अच्छा अब समझा कि लेनी होगी तो लेगे नहीं लेनी होगी तो नहीं लेगे, महाराज! तुम अच्छे आये, यहा सबको ब्रह्मसम्बन्ध तो देते जाओ. अगर तुम ऐसा सोचने लगो तो महाप्रभुजी नवरत्नको पृथ्वीमें ही गाड देना चाहेंगे कि भाईसाहब! गलती करी कि नवरत्नका उपदेश दिया एक बात ध्यानसे समझो कि यह उद्वेगके निवारणका उपाय उपदेशित नहीं किया यह तो चिताके निवर्तनकेलिये चितनका उपाय महाप्रभुजी बता रहे हैं कि सर्वेषा प्रभुसम्बन्ध ऐसा चितन करोगे तो यह उद्वेग चितामें परिवर्तित नहीं होगा, यह चितन अगर नहीं करोगे तो उद्वेग तो बहुत ही स्वाभाविक है मैंने निवेदन किया हो और मुझे जो भान हो कि मैंने केवल अपना ही निवेदन नहीं किया बल्कि अपनी समस्त आत्मीय वस्तुओंका और व्यक्तियोंका भी निवेदन किया है, और प्रभुकी सेवामें इनका विनियोग नहीं होता तो इसका उद्वेग होना तो अत्यंत स्वाभाविक है अगर तुम भक्त हो तो होगा, होगा और होगा ही उद्वेग होनेमें कोई तकलीफ नहीं है लेकिन उस उद्वेगकी इतनी अधिक धुनाई या जुगाली मत करो कि चिताके रूपमें बदल जाये अतएव महाप्रभुजी फिरसे इस बारेमे प्रभूके पोइन्टका प्रेशर देते हैं कि सर्वेषा प्रभुसम्बन्ध इस पोइन्टको दबाओ फिर तुमको समझमें आयेगा कि जिनसे लेनी होगी, उनसे लेनेके लिये यह तुम्हारे घरमें बिराजते ठाकुरजी सर्वसमर्थ प्रभु है अब निवेदन करनेके बाद तुम तुम्हारे अहकारके पाइन्टको दबा रहे हो, इस पोइन्टको मत दबाओ सर्वेषा प्रभुसम्बन्ध इसलिये प्रभु शब्दको कन्डेन्स किया है न प्रत्येकम् इति स्थिति. अतो अन्यविनियोगे ऋपि चिन्ता का स्वस्य सोऽपि चेत्

सर्वेषा प्रभुसम्बन्धो न प्रत्येकम् इति स्थिति ॥

अतो अन्यविनियोगे अपि चिन्ता का स्वस्य सोऽपि चेत्।।

<u>श्लोकान्वय और श्लोकका भानसशास्त्रीय विश्लेषण</u>

४ {आन्तरिकोपायोपदेश} : <u>सर्वेषा प्रभु सम्बन्धो न प्रत्येकम्</u> (कर्तृकर्मबुद्धिविवेक) , अतः *स्वस्य अन्यविनियोगेऽपिका चिन्ता* इति स्थिति.

सरल भावार्थ प्रभुके आगे आत्मनिवेदन करनेप्र सबका ही प्रभुके साथ सबंध बध गया, अतएव अपना भी अगर अन्यविनियोग होता हो तो चिता करने जैसी कोई बात नहीं समझनी

<u>अपने अन्यविनियोगके बारेमे भी चिता नही करनी</u>

उसी प्रकार यह अपने बारेमें भी लागू पडता है कि मैंने निवेदन किया था और मैं सेवा नहीं कर सकता और बाकी घरके सब सेवा कर रहे हैं तो मेरे अहकारको ठेस लग रही है मेरे निवेदनकर्ताके प्रकारके अहकारको ठेस लगती है और इस ठेस लगे हुवे अहकारकी धुनाई या जुगाली करके हम फिरसे कोई चिता करें तो इस चिताका निराकरण महाप्रभुजी फिरसे इसी रूपमें कहेंगे कि निवेदन करनेके बाद तुम और तुम्हारा परिवार निवेदित हो तुम सबही निवेदित ही हो न है कोई निवेदक और न ही कोई निवेदनीय अतएव तुम्हारा भी अन्य विनियोग होता हो तो उसमे चिता करनेका कुछ रह नहीं जाता यह फिरसे कर्तृ-कर्म-बुद्धि-विवेक यहा भी जैसे ऐक्यूप्रेशरमें जो पाइन्ट दबानेमें आता है ऐसे ही पोइन्ट फिरसे दबानेमें आ रहा है तुम अपने कर्तृ-कर्म-बुद्धिका विवेक प्रयोगमें लाओ तो तुमको समझमे आ जायेगा कि यह सब बाते क्या हैं?

मैंने आत्मनिवेदन किया लेकिन मेरे घरमें पत्नी-बेटी सेवा करती है परन्त मेरेसे प्रभु सेवा लेते ही नहीं अब अगर ऐसी चिंता होने लगे, नहीं सेवा ले रहे तो सब धंधोंको छोडकर बैठ जा घरमें, पत्नीको ऑफिसमें बैठने दे, तेरेसे सेवा लेने लगेंगे. ऐसा कह दे तो कहेगा कि यह तो नहीं चलेगा तो नहीं चलता तो फिर चिंता करनेका लाभ क्या? या तो तू इसे भेज दफ्तरमें और तू घरमें बैठकर सेवा कर जा हमे तो तेरेसे ही सेवा लेनी है तो कहेगा कि यह नहीं रास आता, फिर चिंता करनेका फायदा क्या? आनन्द कर ना तू ऐसे क्यो नहीं समझता कि तेरी पत्नी सेवा कर रही है, यह तेरी अर्धांगिनी है यह क्या छोटी बात है कि तेरा आधा अग सेवा कर रहा है, और उस आधे अगकी सेवा तू कर रहा है तू ऐसा चिंतन करेगा तो चिंता निवृत्त हो जायेगी

## आत्मनिवेदनका कर्ता और उसमें प्रभुको निवेदित हुवे कर्मके बारेमे सच्ची बुद्धि रखनेके विवेकसे चिंता त्यागी जा सकती है

यह कर्ता, कर्म, बुद्धि और उसका विवेक अर्थात्? आत्मनिवेदन करनेवाला कौन? और तुमने किसको निवेदन किया है? यह तुमको विवेक समझा रहा है कि तुमने सर्वका निवेदन किया है प्रत्येकका नहीं किया और वैसी ही बुद्धि प्रयोगमें लाओगे तो **अत: सर्वेषा भगवद्विनियोगे स्वस्य च आत्मनिवेदनकर्तु: अन्यविनियोगेऽपि स्वस्य का चिन्ता.?** अपनेको किसकी चिंता होनी चाहिये? प्रभु हैं कि नहीं? यह जो प्रभु है और हमने आत्मनिवेदन किया हो तो हमारे किसीका अपनी सेवामें प्रभु विनियोग कराते हों और हमारा नहीं कराते हो तो भी अपनेमें विनियोग करानेमें प्रभु समर्थ हैं कि नहीं? **प्रभवति न वा?** अगर प्रभवति तो फिर तुम्हें चिंता किस कारण करनी चाहिये? तुमने निवेदन किया अतएव तुम प्रसन्न रहो

अविवेकीकेलिये चिंता निवारणका उपदेश नहीं है

अब तुम फिर यह नहीं कहना कि यह तो रामबाण मिल गया, ब्रह्मास्त्र मिल गया हमें तो खाली ब्रह्मसम्बन्ध दे दो सेवामें नहानेको मत कहो क्योंकि सेवामें नहाना रास नहीं आता, सेवामें नहायेंगे तो फिर धंधे कि नौकरीके लिये कौन जायेगा? सेवामें नहायेंगे तो दुकान कि ऑफिस कैसे जायेंगे? अतएव सेवातो मेरी पत्नी कर लेगी, इसेही ब्रह्मसम्बन्ध दिला दू, पूरे दिन घरमें ही रहती है घरसे छूटी तो हवेलीमे और हवेलीसे छूटी तो घरमें रसोईसे चबूतरे तक और चबूतरेसे रसोई तक तो अब तो अकेलीको ही भगवत्सेवाकी आज्ञा दो बाकी हम किसीको भगवत्सेवाकी गरज कि जरूरत नहीं है क्योंकि **सर्वेषा प्रभुसम्बन्धो न प्रत्येकमिति स्थिति.** यह तो महान अनर्थ हो गया ना! लेकिन ऐसा भाव जागता किसमें है? जो निवेदितात्मा है उसे तो उद्वेग ही होगा कि जबकि मेरे परिवारके जो लोग हैं उनसे भगवत्सेवा निभ रही है लेकिन मैंने भी तो ब्रह्मसबध लिया है लेकिन मेरा भगवत्सेवामे विनियोग क्यो नहीं हो रहा? मैंने सबका प्रभुको निवेदन किया उनका तो अन्यविनियोग नहीं हो रहा तो मेरा ही क्यो हो रहा है? उसे ऐसा उद्वेग होता है उद्वेग है तो उसकी चिंताका निवारण ऐसे चिंतनसे हो सकता हैं कि **सर्वेषा प्रभुसम्बन्धो.**

ऐसे चिंताका निवारण करनेके बजाय तुम **सैंया भये कोतवाल अब डर काहे का,** करो कि केवल पत्नीको ही ब्रह्मसम्बन्ध दिलाओ क्योंकि पुष्टिमार्ग स्त्रीओंका धर्म है **पुरुषोंको तो धंधेपर जाना पडता ही है, आप भी जानते हो कृपानाथ!** कृपानाथ भी समझ जाते हैं कि दे दो चलेगा सबही जीव ब्रह्मसबध लेते हैं, सेवा करनेकी जरूरत कहा है? क्योंकि प्रभूमें विनियोग हो कि अन्यमें विनियोग हो **सर्वेषा प्रभुसम्बन्धो**

प्रभु तो सर्वसमर्थ हैं, ईश्वर हैं, सर्वात्मा हैं इन्हें तो कोई गरज है ही नहीं, लो लेते जाओ सब जीव ब्रह्मसम्बन्ध, आ गया हू तो ले लो तुम लेने नहीं आओ तो हम तुम्हारे घर आकर दे देंगे वह भी नहीं भाता हो तो सार्वजनिक सूचना अखबारमे छपा देते हैं कि अमुक मैदानमें हम हमारे ठाकुरजीको पधराकर उपस्थित रहेंगे ब्रह्मसम्बन्ध देनेके लिये अपने अपने घरोंसे नहा कर आ जाना व्रत भी दीक्षा लेनेके बाद करोगे तो चलेगा! क्योंकि हम नहीं देंगे तो कोई दूसरा दे देगा और पब्लिक तो ले ही लेगी तो सब ले जायें और हम रह जायें तो कैसे चलेगा? अतएव लेते जाओ! अरे! क्या धंधा खोल लिया है भाईसाहब! यह कैसी नौटंकी है? नवरत्नमे ऐसी चिंताको दूर करनेके लिये कहा गया है? नहीं ऐसी चिंताको दूर करनेके लिये नहीं कहा निवेदितात्माकी चिंताको दूर करनेके लिये कहा गया है गलत रीतिसे निवेदन करवानेवाले हम गोस्वामी बालकोकी और गलत रीतिसे निवेदन करनेवाले ऐसे प भ की गलत चिंता कि निश्चितताकेलिये कुछ भी नवरत्नमें कहनेमें नहीं आया है यह बात ध्यानसे समझोगे तो तुमको कर्तृ, कर्म, बुद्धिका विवेक लगेगा और प्रभुका अर्थ भी तुमको समझमे आयेगा तो एक सच्चे आत्मनिवेदीके तौर पर तुमको जो चिंता होगी वैसी चिंताओंका निवारण इस चिंतन द्वारा महाप्रभूजी कर रहे है बाकी ऐसो लेभागू चिंताओंका निवारण महाप्रभूजी नवरत्नमें नहीं कर रहे

अतएव इस चौथे प्रकारकी चिंताके निवारणकेलिये महाप्रभुजीके वचन तो वही के वही हैं केवल अन्वय यहा बदल जाता है

इसमें एक शंका फिरसे उद्भवित होती है एक समस्या तो मैंने तुमको बतायी कि गूसाईजीने इसे तीसरा कहा और मैं इसे चौथा कह रहा हू ऐसा घोटाला मैंने क्यों किया? यह घोटाला इन्टेन्शनली किया हैं इसका मूल कारण यह कि इस

श्लोकमें दो समाधान एकही साथ महाप्रभुजी करना चाहते है तो एक समाधान तो तीसरे श्लोकमें कहा गया जो समाधान है वह ही समाधान है, और उससे आगे बढकर एक समाधान महाप्रभुजी कह रहे हैं कि अहकारकी समस्या ममताकी तुलनामें बहुत अधिक गभीर है अतएव एक समाधानसे अहकारका समाधान नहीं होता दो-चार समाधान दो तो धीरे धीरे अहकार थोडा घटेगा ममताका समाधान तो बहुत जल्दी हो जाता है समझे हम किसीको अपना बहुत करके मानते हो लेकिन जब कोई ऐसा रोग लग जाये कि जिस रोगकी छूत हमको लगती हो तो बहुत प्यार तुरन्त खत्म हो जाता है ऐसे तो तुम बहुत प्यारे हो परन्तु जरा दूर रहना समझे भाई साहब! पासमे नहीं आना छूत लग जायेगी तो कहा जाऊगा? अतएव ममता तो बहुत हल्की है ममताको ओवरकम करना बहुत मुश्किल बात नहीं है लेकिन अहताको कन्ट्रोलमें लाना तो बहुत कठिन काम है हम बहुत सी बातें करते है, बातोंके बडे बनाते है लेकिन वास्तवमें अहताको किसी समय कन्ट्रोलमें लाना सोचो तो पता चलेगा कि वास्तवमें पहाडपर चढने जैसा कठिन काम है पैरोंमे बूट न हो, आखोंमें नीला चश्मा न हो शरीर ऊपर गरम कपडे न हो, ऑक्सिजनका सिलिन्डर न हो और हिमालयपर चढना हो, अर्थात् बहुत मुश्किल काम है अहताको कन्ट्रोलमें लाना ममता तो थोडा सा झगडा हो तत्काल टूट जाती है बहुत लाडप्यारसे अपने लडकेको हम बडा करते है और एक बहूके आते ही झगडा हो जाता है ममता तो बहुत कमजोर डोरा है, तत्काल टूट जाता हे लेकिन जो नहीं टूटता वह है अहताका डोरा इसमें कौन जाने कितने बल दिये गये होते है कि इसे काटो तो भी मुश्किलसे ही कटता है, कैंची भी कई बार खुडी हो जाती है लेकिन अहताका डोरा सरलतासे नहीं कटता

अहता इतनी बडी प्रोब्लम है अतएव महाप्रभुजी ओवर प्रिकोशन, ओवर कॉशस होकर इसके एक नहीं दो उपाय बताते

हैं कि अच्छा भाई ऐसे नहीं तो ऐसे, लेकिन समझ महाप्रभुजीके कहनेका स्टाइल देखो कि कितनी खूबसूरतीसे उस अहन्ताके पोइन्टको जैसे किसीको इस प्रकार गरदनसे पकडकर हम घरसे बाहर निकालते हैं इसी प्रकार महाप्रभुजीने अहन्ताकी गरदन पकड ली है जिसे तूने निवेदन किया है उसका महत्व तेरी तुलनामें अधिक है कि नहीं? **यै कृष्णसात्कृतप्राणै. तेषा का परिदेवना**! इस आत्मनिवेदनकी प्रक्रियामे अपने आपको इतना अधिक महत्व अगर तुम देते हो कि जिसे निवेदन किया है उसमे तुम अपने आपको खपा न सको तो तुम तो बहुत बडे पभ लगते हो, ऐसा महाप्रभुजी कह रहे हैं समझे? तू वास्तवमें बहुत बडा पभ है. क्योंकि तूमने अपने प्राणको कृष्णके साथ सान लिया है, जैसे दालचावलको सानते हैं, इस प्रकार तुम समझते हो कि तुम्हारे उस प्राणको कृष्णके साथ सान लिया, तुम्हारे जो ममतास्पद हैं वह कृष्णके साथ नहीं सने तुमने अपने आपको कृष्णके साथ सान लिया है **मेरो मन और वा ढोटाको एकमेक कर सान्यो**. इस प्रकार तूने कुछ सान लिया लगता है अरे! कबूल करता है कि नहीं बोल, अब अहकार होगा तो कबूल करेगा ही कि हा कबूल करता हू ना! अब महाप्रभुजीने तुरन्त तुमको पकड लिया **तो फिर चिताकरनेकी क्या बात है?** जो कबूल न करे तो अहकारको ठेस लगती है ऐसा डायलेमा खडा हो तो सब समझमें आये! अहकारके मूडमें आये हुवेको यह बात कबूल करनेमें जरा भी देर नहीं लगेगी कि **मै आत्मनिवेदिनकर्ता पभ. हू और दूसरे सब मेरे द्वारा निवेदित हैं. मैं परमनिवेदी परमभगवदीय हू.** यह कबूल करते देर नहीं लगेगी और महाप्रभुजी पकड लेंगे कि बोल अब स्पष्ट कर कि अच्छा! पभ है तो अहकार क्यों करता है पभ होनेका? यह तो स्पष्ट कर

आगेका श्लोक जो बात हमे समझाता है वह है अन्यविनियोगकी समस्या

अज्ञानाद् अथवा ज्ञानात् कृतमात्मनिवेदनम्।
यै कृष्णसात्कृतप्राणै तेषा का परिदेवना।।४।।

श्लोकान्वय और श्लोकका भानसशास्त्रीय विश्लेषण

५. {आन्तरिकोपायोपदेश} ज्ञानाद् अथवा अज्ञानाद् यै: कृष्णसात्कृतप्राणै (रूतूबुद्धिविशेष) आत्मनिवेदनम् कृत तेषा का परिदेवना!

सरल भावानुवाद ज्ञानपूर्वक कि अज्ञानपूर्वक जिन्होंने आत्मनिवेदन द्वारा अपने प्राण श्रीकृष्णके साथ एकमेक कर लिये हों उनको किसी बातकी चिता करनेकी नहीं होती

महाप्रभूजी बहुत चतुराईसे पूछते है कि तूने ज्ञानसे निवेदन किया कि अज्ञानवश? आपश्री जानते हैं कि मनुष्यके साथ अहकार कैसे-कैस खेल खेल सकता है हम कहनेके लिये अह ब्रह्मस्मिका जप-प्रवचन करते है परन्तु वास्तवमे हमें ब्रह्म होनेका आनन्द नहीं आता लेकिन अपने अहकारका ही आनन्द आता है अतएव उपदेश सुननेवालोंके तुलनामें उपदेशकको अपनेही ब्रह्म होनेकी हकीकत अधिक प्रिय लगती है हम भी दासो अह करते है लेकिन वास्तवमें दा बहुत हल्केसे बोलते है हमको भी सोहम्का ही आनन्द आता है तुम कौन? मैं भगवानका दास! ब्रह्मसम्बन्ध लेकर मरजादमें सेवामें पहुचनेवाला अतएव हर समय अहकारका जो आनन्द है यह तो बहुत गजबका आनन्द है सर्वातिशायी आनन्द है जिसमें पारमात्मिक आनन्द भी इस आहकारिक आनन्दके आगे छोटा पड जाता है

तो महाप्रभुजी कहते हैं कि पोसिबिलिटि तो तुम्हारी दो हैं कि तुमने प्रभुके आगे निवेदन किया हैं कि नहीं? अब पहलेसे अगर स्पष्ट करे तो बादमे फिर बदल जाता है कि ना ना मैंने जब ब्रह्मसबध लिया था तब यह तो पता ही नहीं था कि निवेदन करनेके बाद मैं निवेदित हो जाऊगा और मैं निवेदक नहीं रहूगा. यह ज्ञान मुझे नहीं था इसलिये चिता कर रहा हू महाप्रभुजी कहेंगे, कोई बात नहीं, तूने ज्ञानसे अथवा अज्ञानसे अगारेको हाथमें उठाया तो वह जलायेगा कि नहीं? यह तो स्पष्ट कर क्या हम ऐसे कह सकते हैं कि ना ना अज्ञानसे उठाया था इसलिये बहुत ठडा लग रहा है. क्या कभी ऐसी हो सकता है? अगारेको हम हाथमें अज्ञानसे उठालें तो क्या हाथ नहीं जलेगा? ज्ञानसे उठाओ कि अज्ञानसे उठाओ अगर आग है तो जलेगा, जलेगा और जलेगा ही ऐसही आत्मनिवेदन तूने किया हैं और तू इस आत्मनिवेदनमें दूसरोको ऐसा मानता है कि दूसरे सभी जघन्याधिकारी हैं इसलिये सेवा नहीं करते तो चलेगा परन्तु मैं तो उत्तमाधिकारी हू इसलिये सेवा नहीं करू तो कैसे चलेगा? इसलिये बाई हुक और बाई क्रुक मुझे तो किसी न किसी तरह सेवा करनी ही है घरमें नहीं करू तो गोवालकोंके मदिरमें मनोरथ कराकर सेवा कर लूगा मनोरथ नहीं कराऊ तो कोई पथको पैसा दूगा कि तूम सेवा कर लेना मेरी ओर से भी लेकिन सेवा तो करनी है ही यह सब अहकार अपने हैं समझे! भूल नहीं जाना

ब्रह्मसबध ले रखा है और हम कहते हैं दासानुदास लेकिन सबके लिखनेमें दादा ही आता है दासानुदास लिखना ही अच्छा नहीं लगता अतएव भगवानके साथ भी दादागिरी करनेके लिये दादा हम लिखते हैं दासानुदास होनेके अर्थमें या दादा के अर्थमें यह सब बातें बेकार ह भीतरकी, बाहरकी कुछ अलग है भीतरमें हमको पता है कि आ गया हाथमें अब, अब मैं दादा हू तुम्हारा, अब कहा जायेगा? हमको यह सब रास आता हैं

क्योंकि हमारा अहकार हमको यह सब प्रेरणायें अच्छी तरहसे देता है बहुत डायनेमिक फोर्स है हमारे भीतर अहकारकी

अतएव महाप्रभूजी दोनों बातोको ध्यानमें रखकर अच्छी तरहसे कहते हैं कि कोई बात नहीं ज्ञानसे लिया कि अज्ञानसे लिया तू अपने आपको आत्मनिवेदनकी प्रक्रियामें निवेदित कि दूसरे निवेदितोंकी तुलनामे विशेष मानता है कि नहीं मानता? तो अहकार बोलेगा ही कि **हा मैंने तो आत्मनिवेदन किया था इन लोगोंको होश कहा था कि मुझे आत्मनिवेदन करना चाहिये.** महाप्रभुजी कहेगे कि तो फिर तू कृष्णसात्कृतप्राण हो गया अब तूने तेरे प्राणोंको कृष्णके साथ सान लिया है अब चिता करनेकी क्या जरूरत है? अतएव फिसल जाता है पहला अहकारी क्योंकि करने तो हमको दोनोंही है आत्मनिवेदन करनेके बाद अहकार भी करना है और दादा भी होना है तो इस बातको महाप्रभुजी यहा पकड रहे है इस बातको मैं चोथे क्रममें नहीं रखू तो इसके साथ जुडेगी नहीं श्रीगुसाईजीने तो पक्तिमें फिरसे एक उत्थापिका इन्ट्रोड्यूस करके सिहावलोकन करके इस पक्तिका सदर्भ फिरसे ले लिया है अब यह सब मैं यहा करू तो फिर विस्तार बहुत हो जायेगा इसलिये मैंने शौर्टमें इसका क्रम बदल दिया है यह क्रम गुसाईजीने तीसरा लिया है और मैंने चौथा लिया है क्योंकि चौथा जो केस है वह पहली तरफ जुड रहा है और इस ओर भी जुड रहा है देहली दीपक न्यायसे इस रूममे भी प्रकाश करता है और उस रूममें भी प्रकाश करता है इस कारण इसको बीचमें रख दिया है अतएव दोनों जगह इसको जूडा हुवा तुम समझो

यहा फिरसे आतरिक उपायका उपदेश है कर्तृबुद्धिके विवेकके पाइन्टको महाप्रभूजी प्रेशर दे रहे हैं कि निवेदनकर्ता तू था तो मुझे तू अपना आडिटेड् एकाउन्ट दे कि निवेदनकर्ताके तौरपर तू अपनेको उत्तमाधिकारी समझता है, मध्यमाधिकारी समझता है कि जघन्याधिकारी समझता है? जघन्याधिकारी या

मध्यमाधिकारी समझता हैं तो जैसे साधारण दूसरे निवेदित थे वैसा तू हैं फिर किस कारण तू चिंता करता हैं? अगर तू अपने आपको उत्तमाधिकारी मानता हैं तो उत्तमाधिकारी कौन हो सकता हैं? जो **कृष्णसात्कृतप्राण.** हो वह अब जो **कृष्णसात्कृतप्राणे तेषा का परिदेवना**' अतएव फिरसे इसी बातको टाकनेके रूपमें महाप्रभुजीने अहकारको फिरसे पकड लिया है गरदनसे कि अब कहा जाता है बोल स्पष्ट कर तू जो स्पष्टीकरण देगा वह मुझे मान्य है, उसके बादही फिर मैं अपनी बात कहूगा तू जो पक्षग्रहण करेगा बात उसके आगे ही बढेगी **परिदेवना** अर्थात् चिंता, सक्षेपमें उद्वेगजनित चिंता

हमारे किशनगढमे एक ऐसी दुर्घटना घटी किशनगढमें एक हनुमानजीका मंदिर, इस हनुमानजीके मंदिरमें सब फटे हुवे नोट भेंट रूपमें धर जायें इसका पुजारी बिचारा रोता रहता कि क्या करें जमाना खराब ऐसा आ गया है कि सब फटे नोट यहा धर जाते हैं मैंने कहा **हनुमानजीको कहो ना किसी दिन अपनी गदा चलायें** वह बोला **गदा नहीं चलाते यही तो तकलीफ है एकाद बार गदा चलादे फटें नोट धरनेवालोके ऊपर तो फिर फटे नोट कौन धरेगा?** लेकिन जिसके नोट फट जायें वह हनुमानजीकी गोलकमें धर जाये अब इस बिचारेको बैन्कमें जाना पडे और हनुमानजीकी पूजा भी करनी और फटे हुये नोटोंको भी बैन्कमें बदलनेके लिये जाना पडे

हर बार हम इतने चतुर होते हैं कि फटे हुये नोट भगवानको धरते हैं खोटा सिक्का भेंट धरते हैं **जलता घर कृष्णार्पण** कर देते हैं यह बहुत ईजी कोर्स है क्योंकि अपने गाममें भी पथ के तौरपर खपते है और अपनेको भी एक सतोष हो जाता है कि हा भाई जो कुछ करना था वह यथाशक्ति कर दिया ना' सानुत नहीं तो फटे नोट ही सही कुछ तो चढाया ना' ना करते **जो करा वह भला** अतएव दोनों

प्रकारका सतोष हम ले लेते हैं फटे नोट कहीं जो न चलते हो वह भगवानके यहा नहीं चलेंगे तो कहा चलेंगे? प्रभु तो सर्वसमर्थ प्रभु तो सर्वत्र तत्य सर्व हि सर्वसामर्थ्यमेव च हमारी पूजाकी अथवा सेवाकी भी बात तो जाने दो तुम एक दूसरेके स्नेहोपहार देनेकी डीसेन्सी कि जो सूघडता होती हैं वह उसमें रही हुई है जो मेरे पास अच्छे से अच्छा हो वह तुम्हें मैं दू किसके पास अच्छेसे अच्छा क्या हैं वह तो व्यक्तिके स्तरके ऊपर निर्भर करेगा लेकिन ऐटलीस्ट देनेवाले व्यक्तिको जो अपनेपास अच्छे से अच्छा हो वह देना चाहिये, पूजामे कि प्रेमोपहारमें कि सेवाम

इसी कारण जो हमारे यहा ऐसे कहनेमें आता है कि प्रभु उत्तमोत्तम वस्तुके उपभोक्ता हैं हम अपनी बडाई दिखानेके लिये इसका गलत अर्थ समझते हैं कि ठाकुरजीको अमुक प्रमाणमे केसर अमुक प्रमाणमे घी, अमुक प्रमाणमें शक्कर, अमुक प्रमाणमें मठडी, मोहनथाल बिना नहीं चलता प्रभु उत्तम वस्तुके भोक्ता हैं अतएव भिखारीपन करके भी धरना ही पडेगा धरनेकेलिये उपयोगमें आती वस्तुकी उत्तमताके चक्करमे प्रभुकी उत्तमताको नीचे पैरोपर पटक दिया यह तो वास्तवमें सामने धरी सब वस्तु ठाकुरजी आरोग नहीं लेते इसलिये भोग-सामिग्रीका भिखारीपना करके उस सामिग्रीको बेचकर मिलता लाभ होनेके कारण यह सब हमे अच्छा लगता है ठाकुरजी भी ऐसा कुछ लेनेके लिये शनि-राहु-केतु जैसे पापग्रह नहीं हैं कि जिनकी दशा लगनेके कारण दान देनेमें आता हो तेल चढाना ही पडेगा नहीं तो दशा उतरेगी ही नहीं शनिकी दशा जैसे लगती है वैसे अपने ठाकुरजीकी दशा नहीं लगती वह तो उत्तम वस्तुके भोक्ता होनेके कारण केवल तुम्हारे भावको सबसे उत्तम मानते है अतएव तुम जिसे उत्तम मानते हो उसे तुम प्रभुको समर्पित करते हो तो प्रभु वैसे उत्तम भावनाके भोक्ता हैं तम जिसे उत्तम नहीं समझते, तुम ऐसे समझ रहे हो कि

ऐसा भिखारीपना तुम्हारे नामपर करना अच्छी बात नहीं है तो तुम तुम्हारे ठाकुरजीके नामपर ऐसा जघन्य भिखारीपना करो तो वैसी जघन्य सामिग्रीके प्रभु भोक्ता नहीं है भिखारीपना कैसे करें इसलिये ठाकुरजीके नामपर करते हैं भिखारीपन अच्छा है तो अपने नामपर करो फिर ठाकुरजीको भोग धरोगे तो वह आरोगेगे यह तो कोई दूसरी योग्यता न होनेके कारण घरका खर्चा नहीं चलता इस कारण भिखारीपन करके अपना घर जला रहे हैं अतएव कृष्णार्पण कर दिया लो ना तुम्हे कब मौका मिलेगा? कृष्णार्पणम् अस्तु! चलो बात खत्म हो गई जलता घरतो कृष्णार्पण किया इसमें उत्तम वस्तुके भोक्ता ठाकुरजीको तुमने क्या माना? भिखारीपन उत्तम होता तो हम गोबा को पहले अपने नामपर करना चाहिये था तुम्हारी झोपडपट्टी हो, गटरके किनारेपर हो लेकिन तुम उसमें रहना चाहते हो कि नहीं? स्पष्ट करो तुम यह बात दिलसे मान रहे हो कि नहीं कि मेरे रहनेकेलिये ताजमहलकी तुलनामें मेरी झोंपडी अच्छी हैं तुम अगर इसे अच्छी वस्तु मानते हो तो इसे प्रभूको समर्पण करो यह उत्तम वस्तुके भोक्ता हैं तुम्हे जो ऐसा भाव हवा कि मरजाद तो पलती नहीं, कुआका जल भी नहीं है, इतना अधिक पैसा कहासे लायें, तो फिर हम सेवा करें तो कैसे करें?

अब सेवा तो निभती नहीं अतएव मिश्री धरे कि नागरी धरें दूसरा तो हम क्या कर सकते हैं बाकी सब तो हवेलीमें धर सकते हैं तो जो तुम धर रहे हो उसमें तुम्हारा अपनी उत्तमताका भाव है ही नहीं तो फिर प्रभु कोई भुख्खड तो हैं नहीं कि तुम्हारी मिश्री कि नागरीकेलिये भुख्खड बनकर वहा बैठे रहे तुम्हारे घरमे जो तुम इसे उत्तम मानते हो तो जैसे प्रभूको भोग धरते हो वैसे स्वय भी इसके ऊपर टिक रहो तुम धरनेसे पहले जो इस प्रकार घिघिया रहे हो, अपना कगलापन दिखा रहे हो कि हम यह सब कहा से लायें? तो फिर प्रभु ऐसी वस्तुके भोक्ता नहीं हैं क्योंकि तुम्हारा खुदका भाव इनमें उत्तम

होनेका नहीं है, जघन्यताका भाव है ठाकुरजीको मिश्री भोग धरके तुम भी मिश्रीपर रहते हो, कि मिश्रीही मेरे लिये उत्तम है, तो कोई बात नहीं लेकिन तुम ढोकला फाफडा सब कुछ खाते हो अब ठाकुरजी कहा जायें इसके लिये पिछली बार एक धौल बनाया था कि **मुझे ठाकुरजी नहीं बनना. कोई मुझे भजता नहीं है पुष्टिकेभावसे. क्यो फिर ठाकुरजी बनू. वल्लभ मुझे ठाकुरजी नहीं बनना.**

जिसे हम उत्तम नहीं मानते, मोटे तौरपर हम लोगोकी हवेलियोमें ठाकुरजीको जो सखडी भोग धरनेमें आती है वह तो हमारे स्टाफको तनख्वाहके तौरपर दी जाती है हम जो आरोगते हैं वह हमारी तपेलीमे अलग बनती है यह अच्छी होती है, अगर स्टाफको दें तो पोसाती नहीं इतना उत्तम कि ठाकुरजीका भोग स्टाफकी तनख्वाहकी तरह और हमारे पेटमे तपेलीमे सिद्ध करी हूवी अच्छी क्वालिटीकी होती है क्योंकि इसमें घी कुछ अच्छा क्वालिटीका होता है, गेहू कुछ अच्छी क्वालिटीका होता है, यह उत्तम वस्तु होती है ठाकुरजीको अब इसकी क्या गरज? ठाकुरजीतो भावके भूखे है अतएव जो ठाकुरजीके नेगके नामपर भोग धरा जाता है यह स्टाफकी तनख्वाहके नामपर दिया जाता है अब ठाकुरजी क्या इसके भूखे हो सकते है? देखनेवाली बात यह कि फिर ऐसा भाव मठडी-मोहनथालमें नहीं रखते क्योकि तपेलीमे मठडी मोहनथाल सिद्ध नहीं होते यह तो मन्दिरका भीतरिया करे तो ही सिद्ध हो अतएव इसके प्रसादमे हमें वह **असमर्पितवस्तूना तस्माद् वर्जनम् आचरेत्** भाव जाग जाता है ऐसा होता है आधुनिक पुष्टिमार्गका दिव्य भाव कि असमर्पित वस्तुओका त्याग किस प्रकार हो सकता है?

ऐसा भाव हमारा ही है ऐसा नहीं है तुम वैष्णवोंका भी ऐसा ही है, भूलना नहीं जब तुम मदिरमें जाते हो तब मठडी-मोहनथालका ही प्रसाद लेने जाते हो कोई नमक कि

हल्दीका प्रसाद लेता है क्या? किसी दिन प्रसाद लेने आये और किसी पभ को एक दोनेमें नमक दें दो और कहो लो भाई प्रसाद ले जाओ तो वह कहेगा कि यह तो घरमे भी है महाराज मठडी कहा है? मठडी लाओ. मोहनथाल कहा है प्रसादका, साईज् कैसे घट गया? रुपये तो सौ लिये थे हमारे पाससे. आओ भाई हरखा! हम दोनो सरखा! ऐसे नहीं समझना कि तुम कोई बहुत उत्तम कक्षाके भगवदीय हो हम सब ही जघन्यकोटिमें ही विचर रहे हैं यह बात अच्छी तरहसे समझ लो कि तुम्हें भी सखडीका प्रसाद अच्छा नहीं लगता सखडी तो तुम भी तुम्हारी किचनमें अलग ही सिद्ध करा रहे हो यह मठडी तुम्हारे यहा सिद्ध नहीं होती, मुश्किल इसकी है मोहनथाल तुम्हारे यहा सिद्ध नहीं होता, मुसीबत इसकी हैं अतएव प्रसादका भाव जाग रहा हैं

तुम्हारे घरमें तुम सखडी ठाकुरजीको भोग धरते हो, इसलिये सखडी जिसे तुम उत्तम मानते हो? वह तो बासमती चावल, अच्छे गेहू और इसकी रोटी ठाकुरजीको धरनेकी होती है! यह तो हमसे अपरस पलती नहीं तो इन्हें किस प्रकार धर सकते हैं? फिर कहासे धरनी अतएव मंदिरमें भटक-भटककर मठडी मोहनथाल, पेडा, बरफी, मैसूर भोग धरवाओ मेरे ऊपर लोग गुस्सा करते हैं कि प्रसाद लेनेकी मना क्यों करते हो? अरे भाया किसका प्रसाद लेना हैं स्पष्टतो कर प्रसाद लेना हो तो तुम्हारे यहा जो कुछ बनता उसे क्यों नहीं भोग धरते? यह तो बासमती चावल हैं नीचे मदिरमें कैसे दें? यह तो ऊपर तपेलीमें ही खानेके होते हैं पता लग गया ना! हम बहुत होशियार हो गये है ठाकुरजी सबकी बुद्धिको प्रेरणा देते होंगे लेकिन किसी समय हम ठाकुरजीको कैसी कैसी प्रेरणा दे रहे हैं! किसी समय ठाकुरजी बालभावसे हमारी प्रेरणा ग्रहण कर ले तो ठाकुरजी भी हमारे दुसगसे शैतान बन जाये इतने होशियार

हम हैं अतएव हमको प्रसादरूपमें मठडी मोहनथाल ही अच्छा लगता है बाकी कोई प्रसाद अच्छा नहीं लगता

हमारे यहा एक मेरी प्रश्नोत्तरी चल रही थी अपने अनुभवकी बात बता रहा हू सब ही मानो ए के ४७ लेकर मेरे सामने बैठे हुवे थे और मुझसे पूछना चाहते थे कुछ पूछना है. मैंने कहा **पूछो जो कुछ पूछना हो** तो उन्होंने पूछा **तुम प्रसाद लेनेकी ना क्यों करते हो? मैंने कहा मैं प्रसाद लेनेकी ना नहीं कर रहा केवल प्रसाद लेनेकी ही बात कर रहा हू लेकिन प्रसाद बिकता नहीं और प्रसाद खरीदा नहीं जाता. इतना ही कहना चाहता हू.** मैंने भूलसे ऐसे भी कह दिया कि जब बेचा जाता है और तुम खरीदते हो तो होटलकी कोई डिश या प्रसादमें फरक क्या रह गया? तो मेरे पास बैठी एक माजीने कहा **जानेदो ना तुम यह बात सब होटलोमें मैंने खाकर देखा है (असमर्पितवस्तूना तस्माद् वर्जनम् आचरेत् नहीं)** सारे अच्छेसे अच्छे होटलोंमें, लेकिन अमूक हवेलियोके प्रसादका जो स्वाद है वह तो यहा मुहमें अब भी आ रहा है!

मैं भी ध्वस्त हो गया मैंने कहा इसका जबाव मेरे पास नहीं है मुहमें स्वाद फिरता हो तो फिर इस स्वादको कैसे जाने दें? अतएव ऐसे स्वादकी मैं तुमको ना नहीं करता, तुम आनन्दसे प्रस्वाद लो भगवान डायबिटीस् करे तब तलक तुम प्रसाद लो दूसरी तो क्या शुभकामना तुमको मैं दे सकता हू?

हम बहुत होशियार हैं, सब व्यवस्था होशियारीकी स्नेहमें होशियारी नहीं होनी चाहिये लेकिन हम लोग होशियारीके अतिरिक्त और कुछ प्रयोगमें ही नहीं लाते स्नेहका एक भी छींटा प्रयोगमें नहीं ला रहे होशियारी पूरी दुनियाकी हम प्रयोगमें लाते है पुष्टिसबध आत्मनिवेदनका होता हैं और **असमर्पितवस्तूना तस्माद् वर्जनम् आचरेत्**के ऐसे सब सबध

महाप्रभुजीने हमको पुष्टिप्रभुके साथ बाधकर दिये हैं हम परन्तु कितने होशियार और हमारे ठाकुरजी बिचारे कितने भोले हैं जो कि इसमें फस गये! इसलिये मुझे लिखना पडा कि **वल्लभ मुझे ठाकुरजी नहीं बनना, कोई भजे ना मुझे पुष्टिके भावसे क्यों ठाकुरजी बनना. ओ वल्लभ! मुझे ठाकुरजी नहीं बनना.** ठाकुरजी बिचारे ठगा गये बालभावसे सेवित होनेके कारण अतएव जो हम ऐसी उत्तम वस्तु प्रभुको भोग नहीं धरते, तुम स्वय कन्विन्स् हो कि यह साधारण कक्षाकी वस्तु है तो फिर प्रभुको भोग धरनेकी जरूरत कहा हैं? फिर **असमर्पितवस्तूना तस्माद् वर्जनम् आचरेत्**का नियम तुम्हें लागू ही नहीं पडता **निवेदिभि समर्प्यैव सर्वं कुर्याद्** अतएव जो निवेदी हो और तुम्हारे पास जो उत्तम वस्तु हो, जिसे तुम उत्तम मानते हो, जैसे शबरी अपने बेरोंको उत्तम मानती थी और बेर उत्तम हैं कि नहीं इसे जाचनेके लिये, खा-खाकर जूठे करके रामको आरोगाती थी इसके मनमे ऐसे कि कोई कडवा बेर मेरे रामको **मैं न आरोगा दू** अतएव स्वय चख लेनेकी सीमा तक जाकर इसकी जाच करी जो उत्तम बेर जाचनेके बाद लगा वह बेर उसने प्रभुको समर्पा अब श्रीरामने आरोगे कि नहीं?

एक बार शात चित्तसे विचारोगे तो तुम्हें समझमें आयेगा कि किस प्रकारकी उत्तम वस्तुके प्रभु भोक्ता हैं और किस प्रकारकी अधम वस्तुके भोक्ता प्रभु नहीं हैं उत्तम वस्तुके भोक्ता अर्थात् जो तुमको उत्तम लगता हो वह, शबरीको बस यह ही उत्तम लगता था, इसके सिवाय बिचारी शबरीकी कोई और बुद्धि ही नहीं थी शबरीको कोई विवेकही नहीं था तो जिसके पास जो विवेक हैं उसमें जो उसे उत्तम लगता हैं वह उसे निवेदन करना चाहिये गदाधरदासजीको जलकी लोटी उत्तम लगी तो उन्होंने वह भोग धर दी जो तुमको उत्तम लगता है वह भोग धरो पद्मनाभदासजीको महाप्रभुजीके घरसे आया सीधा उत्तम नहीं लगा, क्या महाप्रभुजी कोई हल्की क्वालिटीके चावल

खाते थे कि हल्की क्वालिटीके गेहू खाते थे? महाप्रभुजी कोई इतने दरिद्र नहीं थे, सब प्रकारसे समृद्ध थे सोमयाग करते थे सोमयाग करनेमें आज दो-चार लाख रुपये लगते हैं तो उस समय भी इतने ही लगते होंगे आजके लाख नहीं तो उस समयके पाचसौ हजार होंगे तो उस समय पाचसौ कि हजारकी कीमत लाख ही होगी ना! अर्थात् महाप्रभुजी कोई दरिद्र नहीं थे उत्तम वस्तु ही ठाकुरजीको भोग धरते थे लेकिन पद्मनाभदासजीको ऐसा लगा कि ऐसी सामिग्री मेरे लिये उत्तम वस्तु नहीं है अतएव श्रीमथुराधीशजीसे पूछा यह आरोगना हो तो सुखेन यहा बिराजकर आरोगो नहीं तो मेरे पास तो उत्तमोत्तम सामिग्री छोले हैं. श्रीमथुराधीशको कहना पडा नहीं तेरे पास जो उत्तमोत्तम सामिग्री है वह ही मैं आरोगना चाहता हू. तो इसके बाद दूसरी क्वालिटी जो कुछ उत्तमोत्तताकी हो वह खानेके लिये ठाकुरजी बधे नहीं हैं अतएव हर समय उत्तमताको तोलना यह है कि तुम्हारी सहज भावना, तुम्हारी विशुद्ध समझ और तुम्हारी सच्ची सामर्थ्य तदानुसार जो सामिग्री उत्तम हो उसके भोक्ता प्रभु बनते हैं अब बताओ कि तुम अपने आपको उत्तम मान रहे हो कि अधम मान रहे हो, पहले इसको तो स्पष्ट करो!

## भक्ति और चिंता परस्पर विरोधी होते हैं

तुम क्या कह रहे हो कि निवेदनतो मैंने किया लेकिन प्रभु मुझे अपनी सेवामें विनियोग क्यों नहीं होने देते? ऐसी चिंता तुम्हे सताती है अब ऐसी चिंताको रखकर तुम विनियोग करने जाओगे कि सेवा निभाने जाओगे तो भी भक्ति नहीं निभा सकते कल मैंने तुमको बहुत विस्तारसे इस बारेमे समझाया था जब हम चिंता करते हैं तब स्नेहका भाव खंडित हो जाता है चिंताके साथ सेवा हो सकती है लेकिन चिंताके साथ भक्ति निभ नहीं सकती भक्ति और चिंताका आपमारेका बैर है

तुम्हारा कोई प्रियजन बीमार पडा हो और तुम्हें छूतकी बीमारी लगनेकी चिंता होती हो तो तुम भक्तिपूर्वक उसकी अच्छे प्रकारसे सेवा नहीं कर सकते अगर तुम्हें चिंता नहीं सताती हो कि छूतकी बीमारी लग जायेगी तो कितना ही रोग छूत वाला हो तो भी तुम भक्तिपूर्वक सेवा कर सकते हो स्नेह और चिंता इस प्रकार एक दूसरेसे विपरीति स्वभाववाले है अर्थात् जैसे हम गरमीमे मुरझाये फूल प्रभुको समर्पित नहीं करते, अगर फटे हुये नोट हम प्रभुको समर्पित नहीं करते तो हमारी चिंतातुर अवस्थाका भी प्रभुकी सेवामें विनियाग नहीं करना चाहिये अगर तुमको चिंता हो रही है तो फिर सेवा छोड दो **तदा त्यक्तव्या** ऐसा महाप्रभुजी कहते हैं

<u>जिसने प्राण कृष्णसात् किये हो उसे परिदेवना नहीं होती</u>

बहुत सुंदर शब्दोंमे बाधकर महाप्रभुजीने यह बात कही है कि **यै कृष्णसात्कृत्प्राणै तेषां का परिदेवना!** परिदेवनासे मुरझाया हुवा तुम्हारा व्यक्तित्व प्रभुकी सेवामें जुडने लायक नहीं रहता अतएव चिंता जो होती हो तो भगवत्सेवाका दुराग्रह रखे बिना एक बार शुरुआतसे आखिर तककी चिंता कर लो और जब तुमको उसे दूर करनेका दूसरा अच्छा उपाय मिल जाये तो उससे चितानिवृत्त होकर फिरसे भगवत्सेवाका उद्यम करो वास्तवमें तो तुम अपनेको **कृष्णसात्कृत्प्राण** मानते हो तो परिदेवनाको छोड देना चाहिये परिदेवना एक ऐसी गरमी है कि इसमें तुम्हारा यह तन, तुम्हारा मन सब मुरझा जायेगा धूपमें जैसे जैसे फूल मुरझा जाते हैं उसी प्रकार अतएव इसे अगर प्रभुको समर्पने लायक तुम्हें रखना हो तो निश्चय करो कि तुम्हें उत्तम कोटिका पुष्प बना रहना है इसकी सावधानी रखो कि तुम्हारा तन-मन ताजा रहे

तुम उत्तम बनते हो, इसमे महाप्रभुजीके पेटका पानी हिलता नहीं हमारी तरह कि वैष्णवोंमे कोई हमारी तुलनामें

अच्छी सेवाभक्ति करता है तो हमें डर लगने लगता है कि कहीं यह हमसे अधिक भक्त ना माना जाना लगे! दामोदरदास सभलवाले महाप्रभुजीकी तुलनामें अधिक नेगभोगवाली सेवा करते थे उसमें महाप्रभुजीके पेटका पानी हिलता नहीं था कि कहीं दूसरे वैष्णव दामोदरदासजीको महाप्रभूजीकी तूलनामे ऊची कक्षाका भगवत्सेवापरायण समझकर श्रीगुसाईजीके पेटका पानी किसी भी दिन नहीं हिला तभी तो गुसाईजी अच्युतदासजीके दर्शन करनेके लिये रोज रोज पधारते थे इतना भाव था गुसाईजीका अच्यूतदासजीमें वार्ता कहती है कि लाकव्यवहारमें ऐसे जनाते थे कि दर्शन देने जाता हू वास्तवमें गुसाईजीके अपने हृदयका भाव ऐसा था कि अच्युतदासजीमें महाप्रभुजी बिराजते हैं इसकारण इनके दर्शन करने मूझे जाना चाहिये

आज हमारे बीचमें जिस प्रकारके कटु सबध बंध गये हैं उस प्रकारके कटु सबध मूल आचार्योंमें और मूल अनुगामी वैष्णवोंमें नहीं थे वैष्णव आचार्योंके लिये थे - आचार्य वैष्णवोके लिये थे एक दूसरेसे आगे बढनेकी एक दूसरेको डर लगे ऐसे अविश्वास भरे कटु सबध, ऐसे जटिल सबध, उस समय नहीं होते थे अतएव महाप्रभूजीको डर नहीं लगता था कि कोई कृष्णसात्कृत्प्राण उत्तमाधिकारी हो गया तो अब मेरा क्या होगा? अब मूझे कोई आचार्य मानेगा कि नहीं? अतएव आज नेगभोगराग-अपरसके बहाने बनाकर वैष्णवोंको उनके घरोंमे सेवाकरनेकी छूट देनेमें नहीं आती अथवा तो कोई न कोई बहाना बनाकर हमारी हवेलियोंमें बिराजते ठाकुरजीओंकी तुलनामे वैष्णवोके घर बिराजते ठाकुरजीओंको हलका बताया जाता है जिससे आखिरमे वैष्णव हमारी व्यावसायिक रूपमें चलती हवेलियोंमें चक्कर मारता रह जाये! इसमे डर काम कर रहा है कि हमारी तुलनामें वैष्णव कहीं अधिक भगवत्सेवापरायण न बन जाये किसी वैष्णवके कारण बालकको कोई छोटा मानने लगे तो इससे पहले ही सेवापरायण वैष्णवको पाखडी घोषित कर दिया

जाता है ऐसे छलकपटसे रहित श्रीमहाप्रभुजी एक शुद्ध बात तुम्हे समझाना चाह रहे हैं कि तुम तय करो कि तुम कृष्णसात्कृतप्राण हो कि नहीं जो हो तो परिदेवना मत करो और जो तुम्हे परिदेवना करनी है तो अपने आपको कृष्णसात्कृतप्राण नहीं मान लेना समझ लो कि तुम्हारी हैसियत क्या है? जैसे सब निवेदित हैं ऐसे तुम भी हो प्रभुको तुमसे सेवा लेनी होगी तो लेंगे नहीं लेनी होगी तो नहीं लेंगे चिंता करनी छोड दो

**अज्ञानाद् अथवा ज्ञानात् कृतम् आत्मनिवेदनम् ।**
**यै कृष्णसात्कृतप्राणै तेषा का परिदेवना ।।**

कैसे काव्यात्मक शब्दोंसे कितनी गभीर बात हमको श्रीमहाप्रभुजीने समझायी है एक बार इसे हृदयसे सुनोगे ना, आख-कानसे तो पढा सुना होगा ही लेकिन मैं तुमको रिक्वेस्ट कर रहा हू कि एक बार महाप्रभुजीका हृदय क्या है, इस उपदेशमें उसे तुम हृदयसे ऐक्सेप्ट करोगे तो रोमान्च अनुभवित होगा ऐसी बात महाप्रभुजीने यहा हम लोगोंको कह दी हैं

<u>अज्ञानाद् अथवा ज्ञानात्का अनर्थ</u>

इस विधानका आज गलत अर्थ हो रहा हैं कि ब्रह्मसम्बन्ध लेनेके बाद आवश्यक बनते ब्रह्मसंबधीको सच्चे कर्तव्यको समझे कि समझाये बिना ब्रह्मसंबध देदो और लेलो ऐसे कैसे? तो **अज्ञानाद् अथवा ज्ञानात् कृतम् आत्मनिवेदनम् । यै कृष्णसात्कृतप्राणै तेषा का परिदेवना** अरे मूर्खों ! किसने तुम्हें ऐसी उलटी पट्टी पढादी? जो भगवत्सेवा अपने घरमे नहीं करनी तो वैष्णव परिवारमे केवल जन्म कि विवाहके कारण ब्रह्मसबध ले लेनेसे अपनेको कृष्णसात्कृतप्राण मान लेनेके लिये किसने कहा? क्या तूनें साने हैं अपने प्राण कृष्णके साथ? तूने साने है अपने प्राण धधेके साथ, तूने साने है अपने प्राण अपने

परिवारके साथ, तूने साने हैं अपनी बढती लौकिक प्रतिष्ठावाले ससारके साथ

हम गोस्वामी बालकोंको पूछो तो कहेंगे कि यह तो महाप्रभुजी देखतेके साथ ही पहचान जाते थे कि कौन देवी जीव है और भगवत्सेवा निभानेमे समर्थ कि असमर्थ है ऐसे हम कैसे समझ सकते हैं लेकिन जो ब्रह्मसबध नहीं देंगे और जीव दैवी हो तो उसे विमूख रखनेके अपराधी बन जायेंगे अरे भाई इतने अगर तुम अबुध हो तो सर्वज्ञ पुरुषोत्तम बनकर किस कारण गाममें अपनेको पुजवा रहे हो? तो उसका जबाब देते हैं कि **श्रीमद्वल्लभवंशमें सबही वल्लभरूप** लेकिन अगर यह बात ठीक है तो कौन दैवी होनेके कारण भगवत्सेवा निभा सकेगा और मर्यादी कि प्रवाही होकर भगवत्सेवा नहीं निभा सकेगा वह क्यों नहीं पहचान सकते? तो कहते हैं कि **ऐसा करेंगे तो सम्प्रदाय उच्छिन्न हो जायेगी** अरे जब भगवान स्वय आज्ञा करते हैं कि **दैवी सम्पद् विमोक्षाय निबन्धाय आसुरी मता** तो भगवानकी व्यवस्थाका उच्छेद करके अपनी सम्प्रदाय कैसे टिक सकती है? अतएव इस सम्प्रदायको टिकानेके बहाने वास्तवमें तो अपनी आजीविकाको जिन्दा रखनेकेलिये सृष्टिको टिकाकर रखनेका छल कपट है आज अपनी सम्प्रदायमें **कृष्णसात्कृतप्राणे** कहा हैं? हम इस श्लोकको क्वोट कर सकें ऐसे उत्तम अधिकारी कहा हैं? ओऽहोऽ जरा अपनी शोभाको महाप्रभुजीके उपदेशकी आरसीमें तो देखो! किस कारण ऐसे उलटे सीधे अर्थ हमको स्फुरायमान होते हैं? अतएव ब्रह्मसबध देते रहो क्योंकि अज्ञान अथवा ज्ञानसे ब्रह्मसबध देनेके बाद **कृष्णसात्कृतप्राण** हो जाते हैं किसी प्रकारकी चिंता करनेकी रह ही नहीं जाती अर्थात् **दाईका घोडा खेलता खाता छूटा** इतना हलकापन कैसे ले लिया इस प्रकरणने? वास्तवमे इतना हलका प्रकरण नहीं है बहुत गभीर प्रकरण है

कृष्णसात्कृतप्राण यह आर्थिक+वाचनिक उपदेश है

महाप्रभुजीका हृदय और वाणी दोनो यहा बोल रहे है किसी प्रकारका छलकपट महाप्रभुजी यहा नहीं कर रहे यह उपदेश कब लागू होगा और कब लागू नहीं होगा? जो व्यक्ति ऐसे समझ रहा है कि मैं कृष्णसात्कृतप्राण हू उसे कुछ उद्वेग हो रहा है उसकी धुनाई या जुगाली करके इस चिताके शिकजेमें कहीं फस न जाये कि मैं कृष्णसात्कृतप्राण होते हुवे भी भगवत्सेवामे क्यों नहीं विनियुक्त हो सकता? उसकी ऐसी चिताके निवारणके लिये महाप्रभुजी कृष्णसात्कृतप्राणै ऐसे आर्थिक एव वाचनिक दोनों उपदेशों द्वारा करते है इसलिये मैंने इन अक्षरोंको अडरलाईन कन्डेन्स किया है कल मैंने कहा था ना कि कहना बेटीको सुनाना बहूको उसी प्रकार यह आर्थिक उपदेश है

इसमें फिरसे मैंने ब्रेक्रेट लगाया है कर्ता, बुद्धि और विवेकके उपदेशके लिये जिससे कि आत्मनिवेदन करनेवालेको अपनी बुद्धि अच्छी तरहसे प्रयोगमें लानी पडेगी ऐसे केसमें इसे निश्चय करना पडेगा या तो तू परिदेवना छोड दे अथवा तो तू अपनेको कृष्णसात्कृतप्राण. होनेकी धारणाको छोड दे यह दोनों धारणाये एक साथ नहीं निभ सकतीं वाचनिक उपदेश जो महाप्रभुजीने दिया है वह तो इतना ही है कि यै. आत्मनिवेदन कृत तेषा का परिदेवना. जिसने आत्मनिवेदन किया है उसे क्या चिता करनी? इतने अशसे इतना ही उपदेश दिया है उसके साथ अर्थगर्भित उपदेश कृष्णसात्कृतप्राण. मे धडक रहा है, हृदयकी धडकनकी तरह अतएव यह श्लोककी जान है जो भीतर कन्डेन्स् होकर धडक रहा है
अब आगेका श्लोक देखते हैं

**तथा निवदने चिन्ता त्याज्या श्रीपुरुषोत्तमे।**

**विनियोगेऽपि सा त्याज्या समर्थोहि हरि: स्वत.।।५।।**

६ {आन्तरिकोपायोपदेश} तथा श्रीपुरुषोत्तमे (सम्प्रदानबुद्धिविवेक), ***निवेदने चिन्ता त्याज्या*** हरि हि स्वत समर्थः

सरल भावानुवाद उसी प्रकार मैंने जो अपना आत्मनिवेदन किया वह श्रीपुरुषोत्तमने स्वीकारा कि नहीं, ऐसी चिता भी नहीं करनी चाहिये क्योंकि श्रीहरि स्वय किसीको भी स्वीकारनेमें समर्थ हैं

विवेकधैर्याश्रयमें कहनेमें आया है कि **प्रार्थिते वा तत कि स्यात् स्वाम्यभिप्राय सशायत् सर्वत्र तस्य सर्व हि सर्वसामर्थ्यमेव च** इस उपदेशसे सबध रखनेवाला यह छटा वाक्य है यह भी एक आन्तरिक उपाय ही है वह शुरुआतमें ब्रेकेटके कारण पता चल जायेगा ***निवेदने चिन्ता त्याज्या*** इसमें निवेदन और चिन्ताके अक्षरोंको तिरछा किया गया है अर्थात् इस श्लोकमें जो रोग है वह निवेदनके बारेमें चिताका है इसे त्याज्या कहकर महाप्रभुजी कहते है कि छोडो और उसमें फिर दो पाईन्ट पकड रहे है महाप्रभूजीका यह वाचनिक उपदेश हरि स्वत समर्थ है तुम्हारे निवेदनको स्वीकारनेके लिये हरि स्वत समर्थ है अतएव इस बारेमें तूम्हे चिता नहीं करनी चाहिये अब स्वत समर्थ कहो कि सर्वसमर्थ आखिरमें बात तो एकही कहलायेगी

दूसरे शब्दोंमें कहना हो तो जब तूम रेलगाडीमें रातकी यात्रा करनेके लिये बैठ गये तो उसके बाद गाडीमे सोना कि नहीं सोना इसकी चिता अगर करो तो महान मानसिक उपाधि पैदा हुई कहलायेगी क्यों? अगर हम सो जाये और इतनेमें गाडीका ऐक्सीडेन्ट हो जाये तो? हमें पता ही नहीं चलेगा! अब

सोचो कि तुम सो नहीं रहे और जागते रहो तो क्या तुम गाडीके ऐक्सीडेन्टको रोक सकते हो? अर्थात् भलेही सारी रात डिब्बेमें चक्कर मारते रहो कि सोऊगा नहीं क्योंकि अगर सो गया और गाडी कहीं भटक गई तो? लेकिन गाडी अगर भटकनेकी है तो तुम्हारे जागनेसे क्या तुम उसे रोक लोगे? गाडी पटरीपरसे कब उतर जाये इसका पता तुम्हे कैसे चलेगा, गाडीमें बैठनेके बाद तुम असमर्थ बन जाते हो जो ड्राईवर चला रहा है उसे अगर नींद आये तो ही गाडी भटकेगी लेकिन तुम्हारे जागनेसे कि सोनेसे गाडीका ऐक्सीडेन्ट न हो यह बात तुम्हारे हाथमे नहीं है

**समर्थो हि हरि स्वत**

सबसे पहल महाप्रभूजी **समर्थो हि हरि स्वत** ऐसा कहकर तुमको वाचनिक उपदेश दे रहे हैं कि आत्मनिवेदन करनेके बाद आत्मनिवेदनकी गाडीमें तुम सवार हो गये फिर मैं प्रभू तलक पहुचूगा कि नहीं, इसकी चिता तुम मत करो प्रभूको तुम्हारे पास जब जिस क्षण पहुचना होगा, तब उसी क्षण उसी प्रकार वहा स्वय पहुचनेमें समर्थ हैं ही इसीकेलिये वार्तामें कहनेमे आया हैं **साहिब कैसे मिले? जैसे हम तुम!**

प्रभूको तुम्हारे पास पहुचना होगा तो पहुच ही जायेंगे अभी तुम गलत जल्दबाजी मत करो कि पहुचूगा कि नहीं पहुचूगा तुमने आत्मनिवेदन स्वत समर्थ श्रीहरिके सामने किया है कि नहीं किया? अपने दिलके ऊपर हाथ धरकर देखो तुम्हें ऐसा लगे कि तुमने आत्मनिवेदन किया है बस तो पर्याप्त बात हो गई अब तुम्हें निवेदनके बारेमें चिता करनेकी कोई जरूरत नहीं है **समर्थो हि हरि स्वत** वह सब सावधानी तुम्हारे लिय ले लेगा

सोचो कि तुम ऑपरेशन टेबलके ऊपर जाकर सो गये डॉक्टर तुमको ऐनेस्थेसिया देकर ऑपरेशन करने जा रहा हो

और इसके पहले तुम दूसरी चिंता स्टार्ट करो कि डॉक्टर ठीक तरहसे काटेगा कि नहीं नहीं काटेगा तो मैं क्या करूंगा? अरे तुमको तो बेहोश कर देगा, अतएव तुम्हारे करनेके लिये रह क्या जायेगा? तुम मुरदेकी तरह पडे होगे ऑपरेशन टेबलके ऊपर जो करेगा तो डॉक्टर करेगा उसमें तुम चिंता करने लगो तो ऑपरेशन करनेमें दिक्कत आयेगी क्योंकि तुम्हारा ब्लडप्रेशर बढ जायेगा ऑपरेशन टेबलके ऊपर अगर ऐसी चिंता करने लगो कि डॉक्टरको ऑपरेशन करना है लेकिन इस मेरे शरीरमेसे निकालने वाले हिस्सेको छोडकर कोई दूसरा ठीकठाक हिस्सा ना निकालदे, कुछ ऐसा ही घोटाला कर दे तो फिर क्या होगा? अब इसकी धुनाई या जुगाली ऑपरेशन टेबलके ऊपर चालू करोगे तो सबसे पहले तो ब्लडप्रेशर बढ जायेगा ब्लडप्रेशर बढेगा तो डॉक्टरको अपनी पचायत हो जायेगी कि अब ऑपरेशन करना किस तरह बी.पी बढ गया तो अर्थात् चिंता छोड दो तुमको डॉक्टरके ऊपर विश्वास नहीं (आत्मनिवेदन मत करो) तो ऑपरेशन टेबलके ऊपर सोनेकी जल्दबाजी मत करो डॉक्टरके पास या तो तुम जाओ मत और अगर चले गये हो तो आनन्दसे सोते रहो जो होगा वह तो होगा ही मर भी जाओगे तो बेहोश ही मरोगे मरनेका दु:ख तुम्हें पता ही नहीं चलेगा लेकिन अगर ऑपरेशन टेबलके ऊपर तुम चिंता करने लगोगे तो ऑपरेशन फेटल हो जायेगा

## *Jhiq#"kksÙkes rFkk fuonus fpUrk R;kT;k %*

**श्रीपुरुषोत्तमे** यह हरि स्वत समर्थ हैं तुम्हारेमेसे क्या काटना है और क्या नहीं काटना इन सबकी जानकारी इसे ठीकसे पता है कि नहीं? और दूसरी बात **श्रीपुरुषोत्तमे** द्वारा महाप्रभूजी आर्थिक उपदेश दे रहे है कि तूमने किसे निवेदन किया है? तुम्हे कुछ होश है कि नहीं कि रास्तेके ऊपर रखडते

किसी अमथालाल कि फोकटलालको तुमने आत्मनिवेदन किया है? श्रीपुरुषोत्तमको निवेदन करा है और इसे निवेदन करनेके बाद तुम्हें किस कारण चिता करनी चाहिये? श्रीपुरुषोत्तम सब प्रकारसे समर्थ है निवेदन तुम्हारा सूननेकेलिये, निवेदन तुम्हारा स्वीकारनेके लिये, निवेदन करनेके बाद जो कुछ तुम्हारी प्रोग्रेस है उस प्रोग्रेसको निभानेकेलिये भी

तो फिर हम भी होशियार हैं अच्छा यह बात तो पहले ही कह देनी चाहिये थी ना कि निवेदनकी चिता ही नहीं करनेकी ब्रह्मसबध लेते रहो और देते रहो यह तो पुरुषोत्तमके साथ निवेदन हुवा है, इसमें सेवा करनेकी बात आई कहासे? **चिन्तासमर्थो हि हरि**, स्वत श्रीहरि स्वत समर्थ हैं सेवा स्वीकारनी होगी तो स्वीकारेगे नहीं स्वीकारनी होगी तो नहीं स्वीकारेगे **समर्थो हि हरि**. स्वत. इसमें अपनेको चिता करनेसे फायदा क्या? ऐसे हमारे विचार सुनकर तो महाप्रभूजीको भी चिता होने लगेगी कि यह नवरत्न मैंने किन्हें बता दिया! यह अर्थ नहीं है, तुम्हे आत्मनिवेदन करनेके बाद चिता उद्वेगके कारण हो रही है कि निवेदन करनेके बाद मेरा निवेदन प्रभुने ऐक्सेप्ट किया कि नहीं किया इतना जेन्यूइन केस तुम्हारा हो तो तुमको उद्वेग होगा ही

आजके चालू खातेका आत्मनिवेदन होगा तो तुमको क्या चिता होती है? क्या उद्वेग होता है कि प्रभूने स्वीकार किया कि नहीं किया स्वीकार? मैं भूल नहीं कर रहा और गलत गणना नहीं कर रहा तो मुझे ऐसा लगता है कि ब्रह्मसबध लेनेके बाद सत्तरसे अस्सी परसेन्ट वैष्णव कठी पहरनेकी सावधानी नहीं रखते दूसरी बात तो जाने दो मुश्किलसे चालीस परसेन्ट ऐसे वैष्णव होंगे कि जो ब्रह्मसबध लेनेके बाद कठी पहरनेकी सावधानी रखते हैं शादीके बाद कडे पहरनेकी सावधानी रखते हैं, शादीके बाद अगूठी पहरनेकी सावधानी रखते हैं, शादीके बाद

बिन्दी लगानेकी सावधानी रखते है, सब लटके मटके करें लेकिन ब्रह्मसंबध लेनेके बाद किसीको कहो कि कंठी पहरो तो कहते हैं कि गलेमें चुभती हैं कैसे पहरें? बात खत्म हो गई ना, मगलसूत्र कि टाई क्यों नहीं गलेमें चुभती? क्योंकि शादीकी है हमने, क्योंकि रिसेप्शनमें जाना है हमको, यह सिन्सीयर निर्धारण है ब्रह्मसबधमें सच्चा निवेदन किया है कि चालू खातेका निवेदन किया है? हमे उसका निर्धार करनेकी भी जरूरत नहीं है कि हुवा कि नहीं हुवा, अब जरूरत ही नहीं है तो कोई उद्वेग इस बारेमे तुम्हें क्यों होगा? उद्वेग नहीं होगा तो इसकी चिता तुमको क्योकर होगी? चिता नहीं होगी तो यह उपदेश तुम्हारे लिये कैसे हो सकता है? यह मुद्देकी बात तुम समझो कि यह उपदेश तुम्हारे लिये है कि नहीं? तुम गलत समझ रहे हो कि यह उपदेश तुम्हारेलिये है **तथा निवेदने चिन्ता त्याज्या श्रीपुरुषोत्तमे** निवेदनके बारेमें चिता नहीं करनी यह चिता न करनेका उपदेश तुमको कहनेमे नहीं आ रहा

जिन्हे कहनेके लिये आ रहा है वह कोई दूसरेही विरले अधिकारी होंगे कि जिन्होंने वास्तवमें निवेदन सिन्सीयर्ली किया है जो व्यक्ति कन्विन्स्ड् है, मान रहा है कि मैंने निवेदन किया और निवेदन करनेके बाद उसका उद्वेग हो रहा है कि प्रभुने मेरा निवेदन अगीकार किया कि नहीं किया जो निवेदनको इतनी सिन्सीयर्ली ले रहा है उसके लिये यह उपदेश है हमने शादीकी हो और वह लडकी पीहरमें ससुराल आती ही न हो तो पेटमें खलबली मच जाती है कि क्या हो गया? क्यों नहीं आ रही? कुछ लफडा हो गया कि क्या हो गया? भाग गई आखिर हुवा क्या? यह शादीशुदा आदमीको चिता होती है जिसने शादी ही नहीं की, तो ससुरालमें रहना हो तो कोई लडकी ससुरालमें रहे पीहरमें जाना हो तो पीहरमें जाये! चिता भी नहीं हो और उद्वेग भी नहीं हो

मैंने एक जोक पढा था एक भाईने शादीके बाद कौन जाने क्या चिंता हो गई कि इसकी पत्नी इसको वास्तवमें चाहती है कि नहीं अतएव एक दिन अपनी पत्नीसे पूछा **मैं तुझे कैसा लगता हू**? पत्नी होशियार थी अतएव इसने जवाब देनेके बजाय पूछा पहले तुम बताओ कि **मैं तुमको कैसी लगती हू**? वह भाई बोला **भलेही तू अतिशय रूपवती नहीं है तो भी खराब तो नहीं लगती** पत्नी बोली **तुम भी कोई हीरो जैसे सुन्दर तो नहीं हो लेकिन मुझे तुम अच्छे लगते हो**. अब तो भाईके पेटका पानी हिल गया कि मेरी पत्नीको कोई हीरो मेरी तुलनामें अच्छा लगता होगा अतएव जो फिल्म देखनेके लिये पत्नी इच्छा दिखाये तो तूरत उससे पूछे कि **इस फिल्मका हीरो तुझे कैसा लगता है**? वह हरेक बार ऐसे ही कहे कि **ठीक है लेकिन मुझे बहुत अच्छा नहीं लगता**. अतएव एक दिन थककर पतिने पूछ ही लिया **किस हीरोकी तुलनामे तू मुझे कम आकर्षक मानती है**? पत्नीने पूछा **किस कारण यह प्रश्न कर रहे हो**? तो वह बोला कि **उस दिन तूने मुझे नहीं कहा था कि हीरो जैसे सुन्दर नहीं हो फिर भी तुम मुझे अच्छे लगते हो**. अब पत्नीने फिर जिद पकडली कि **पहले तुम बताओ कि कौनसी हीरोइन कि रूपवती स्त्रीकी तुलनामे तुम मुझे कम सुन्दर मानते हो**? अब बाततो वहींकी वहीं खडी रह गई अतएव शादीके बाद ऐसी बेकार चिंतायें करनेसे आपसी अविश्वासके सिवाय दूसरा कुछ भी मिलने वाला नहीं है

हमने प्रभुको सर्वस्व माना ही नहीं तो फिर हमारा आत्मनिवेदन ऐक्सेप्ट हुवा कि नहीं हुवा इसका उद्वेग होनेका ही नहीं उद्वेग नहीं होगा अतएव चिंताभी नहीं होनेकी ये बात ध्यानमें रखो, और चिंता नहीं होनेकी तो यह उपदेश तुम्हे देनेमें आ ही नहीं रहा यह बात तुम हृदयमें स्पष्ट तरीकेसे समझ लो

यहा महाप्रभूजी **श्रीपुरुषोत्तमे** कहकर सप्रदानबुद्धिके विवेकको प्रयोगमे लानेको कह रहे हैं कि तुमने किसे आत्मनिवेदन किया है, उसे तुम बुद्धि प्रयोगकरके अच्छी तरहसे समझो श्रीपुरुषोत्तमको तुमने निवेदन किया है एक बार यह बात समझोगे तो तुम्हारी सारी चिताये निवृत्त हो जायेगी

एक दूसरा भी भाष्य विवेकधैर्याश्रयमें इसका हमें खोजना हो तो **आपद्गात्यादिकार्येषु हठस् त्याज्यश्च सर्वथा** वचनमे भी खोज सकते है तुमने निवेदन किया है लेकिन तुम्हारे जीवनमें कोई ऐसी आपत्ति आ गई कि जिसके कारण तुम्हे निश्चय नहीं हो पा रहा कि तुम्हारा आत्मनिवेदन हुवा कि नहीं? तो इस बारेमें तुम हठ मत रखो कि मेरा आत्मनिवेदन हुवा और मुझे वह स्पष्ट नहीं हो रहा अर्थात् क्या प्रभुको एक दिन आकर तुम्हें कहना चाहिये कि तेरा **आत्मनिवेदन मैंने स्वीकार किया** पूतनासे बोले थे और कसको मारने गये थे तो **मैंने** तो आत्मनिवेदन किया है मुझे क्यों नहीं कहते कि **मैंने तेरा आत्मनिवेदन स्वीकार किया है.** ऐसा गलत हठ तुम मत रखो **आपद्गात्यादिकार्येषु हठस् त्याज्यश्च सर्वथा**

अतएव विवेकधैर्याश्रयको देखोगे तो यह जो मनोभूमि है इसके पीछेका हेतु तुम्हारे विचारमें आयेगा वहा यहा की तुलनामे व्यापक सदर्भमे यह बात कही गई है लेकिन इसे उस सदर्भको थोडा सकुचित करके, निवेदनके बारेमे भी, इसको व्यवहारमें कैसे लाना चाहिये यह हम समझ सकते है

<u>श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण</u>

७ {आन्तरिकोपायोपदेश} : <u>हरि, हि स्वत. समर्थ.</u>, (तस्मात्) श्रीपुरुषोत्तमे (सप्रदानबुद्धिविवेक) *विनियोगे अपिसा* **त्याज्या.**

सरल भावानुवाद श्रीहरि सब प्रकारसे स्वय समर्थ होनेके कारण श्रीपुरुषोत्तमको आत्मनिवेदन करनेवालेको उनकी सेवामें अपने विनियोगके बारेमे भी चिता नहीं करनी चाहिये

उसके बाद जिस प्रकार यहा निवेदनके बारेमें चिता हुई उसी प्रकार विनियोगके बारेमें भी ऐसेका ऐसा ही सारा प्रकार, इसके इसी पोइन्टको प्रेशराइज् करना अर्थात् सप्रदानबुद्धिके विवेकका पोइन्ट प्रेशराइज् करना हरि स्वत. समर्थ (तस्मात्) श्रीपुरुषोत्तमे विनियोगेऽपि सा त्याज्या यह बात भी कहनेमें आई है तदानुसार ही है

अब इसके बाद आता है छटा श्लोक

**लोके स्वास्थ्य तथा वेदे हरिस्तु न करिष्यति।**
**पुष्टिमार्गस्थितो यस्मात् साक्षिणो भवताखिला.।।६।।**

<u>श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण</u>

*८.* {आन्तरिकोपायोपदेश} (यूयम्) <u>अखिला साक्षिणो भवत!</u> (स्वैर्बुद्धिविवेक-धैर्य), यस्मात्, पुष्टिमार्गस्थितो हरि (सम्प्रदानबुद्धिविवेक), (तस्मात्) *लोके तथा वेदे स्वास्थ्य तु न करिष्यति* (सम्प्रदानमतिविवेक)

सरल भावानुवाद तुम सब इस वास्तविकताके साक्षी बनो कि श्रीहरिने तुम्हारे पुष्टिमार्गमें अगीकार किये होनेके कारण वह तुम्हें लोकमें कि वेदमें स्वस्थ नहीं रहने देगे

इसमें ध्यानसे तुम देखोगे तो यूयम् अखिला साक्षिणो भवत् ऐसा उपदेश महाप्रभुजीने दिया है कि तुम इस बारेमे

साक्षी बनो अब साक्षी शब्दके दो अर्थ होते है १ कोई मनुष्य कुछ काम करता हो और तुम उसे देख रहे हो दूसरा एक बहुत विशिष्ट अर्थ भी साक्षीका होता है तुमने किसी घटना या वस्तुका अनुभव किया हो तो तुम **अक्षिभ्या सह अय साक्षिन्** तुमने तुम्हारी आखोसे जो कुछ देखा और जाना है, अथात् सुनी हुई बात नहीं कि रयूमर फैलनेके कारण कि लोग भाग रहे हैं और हम भी भागने लगे ऐसे नहीं अपनी आखका उपयोग करके देखी जानी वस्तुका जो बयान करता हो वह साक्षी तो जो आखों वाला हो, जिसने अपनी आखोंका प्रयोग किया हो घटनाका तारतम्य निकालनेके लिये वह साक्षी तो उस अर्थमें महाप्रभुजी कह रहे हैं कि **यूयम् अखिला साक्षिणो भवत** तुम साक्षी बनो साक्षी बनो अर्थात् किस अर्थमे कि तुम स्वय इस बातको देखलो, जानलो अच्छी तरहसे ऐसे होना है और तुम तुम्हारे स्वयके अनुभवके तौर पर देखलो कि एसे होता है कि नहीं इस अर्थमें तुम स्वय साक्षी बनो दूसरा कोई काम कर रहा है और तुम उसके साक्षी हो इस अर्थमें नहीं साक्षीका एक अर्थ विटनेस भी होता है और दूसरा अर्थ एक्जाम्पल भी होता है तो यहा विटनेसके अर्थमें नहीं, लेकिन एक्जाम्पलके अर्थमें है तुम इसके एक्जाम्पल बन जाओ.

अब हमारे पेटमें दर्द उठ जाता हैं कि अगर ब्रह्मसम्बन्ध लेते ठाकुरजीकी सेवा करते लोक और वेद दोनोंही बिगडने हैं तो ऐसी गलत मुसीबतमे पडना ही क्यों? उसमें फिर कहते हैं कि तुम साक्षी बन जाओ कि लोकवेदमें अच्छा नहीं होता तो बुद्धि जिसकी दिवालिया हो गई हो तो वह साक्षी बने! ब्रह्मसबध लेना ही नहीं!

यह अर्थ लेकिन यहा नहीं है क्योंकि यह बात तुमको कहनेमें आ ही नहीं रही जिसे कहनेमें आ रही है वह कोई विरला अधिकारी है यह बात किसे कहनेमें आ रही है? जिस

व्यक्तिने, अपनी जो कोई लौकिकता कि जो कोई वैदिकता है उन सब कर्मोंको त्यागे बिना साक्षात् पुष्टिप्रभुको अपने माथे पधराया है अब लोकवेदात्मक ससारमें प्रभुको पधराया हैं फिर लोक-वेदमें इसे किसी प्रकारकी कष्ट होता हो तो इस लोकवेदरूपी ससारमें पधराये हुवे प्रभुकी सेवा किस प्रकार निभानी? लोकवेदमे जब मैं स्वस्थ होऊगा तो प्रभुकी भक्तिमयी स्वस्थता कैसे निभानी? और अगर लोक-वेदानुसार स्वस्थ नहीं रहता होऊ तो वह मेरे प्रभुकी सेवामें लोक-वेद प्रतिबध उत्पन्न कर सकेगे कि नहीं? इस प्रकारका कोई बहुत गभीर उद्वेग किसी अधिकारीको इसमे वर्णित हो रहा है इस गभीर उद्वेगकी धुनाई या जुगाली करके किसीको चिता होती हो कि **अब मैं सेवा किस प्रकार निभाऊ?** महाप्रभुजी ऐसे मुझे नहीं कहते कि दुनियाको छोड़कर हिमालयमें जाओ और वहा बैठकर सेवा करो महाप्रभुजी मुझे ऐसी आज्ञा देते हैं **गृहे स्थित्वा स्वधर्मत अब्यावृत्तो भजेत् कृष्णम्** (भक्तिवर्धिनी-२) और घरमे रहकर मैं करता हू, तो उस घरमें रहनेके लिये महाप्रभुजी स्वधर्मत अर्थात् वेदकी मर्यादाओंको निभानेका भी उपदेश दे रहे हैं अब इस परिस्थितिमे मैंने ठाकुरजी पधराये, सेवा शुरु करी और अगर लोक और वेद मुझे रास नहीं आया, कोई न कोई मुसीबत लोकवेदकी खडी ही रहती हो तो मुझे सेवा करनी किस प्रकार? यह बहुत उच्च अधिकारीकी समस्या कि उद्वेग है

## लीलात्मक सरस साक्षिभाव और ज्ञानात्मक साक्षिभावका भेद

उस उद्वेग द्वारा होती चिताको दूर करनेके लिये महाप्रभुजी कहते हैं कि यह भगवल्लीलोपयोगी साक्षिभाव तुम अपने भीतर लाओ और इसे ज्ञानमार्गीय साक्षिभाव समझनेकी भूल कभी मत करना

सोचो कि एक विवाहके लिये तुम्हारे पास तीन विवाहार्थी उपस्थित हों प्रकृत सदर्भमे एक विवाहार्थी हरि है दूसरा वेद और तीसरा विवाहार्थी लोक है अब उनमेंसे तुमने एकको अपने वरके रूपमें चुना तत्पश्चात् दूसरे विवाहार्थीके ऊपर आख चलाओ तो विचारो यह विवाहार्थी सहन किस प्रकार करेगा? इसे ऐसे लगेगा ही कि इस ओर तुम्हें जाने ही नहीं दू अर्थात् तीन विवाहार्थीयों मेंसे हमने एकको अपना हाथ कन्यादानमें सोप दिया है अब यह तुमको दूसरेकी ओर कैसे ताकने देगा? ऐसा भाव क्यों नहीं विचारते? तुमको इसमे किसी प्रकारका कच्चापन लगता है तो इस (हरि) विवाहार्थीको नहीं दूसरे विवाहार्थीयोंको वर लो, कौन ना करता है तुम्हें तुम्ह वेदके साथ ब्याह जाना चाहिये था, तुम्हें लोकके साथ ब्याहना चाहिये था तुम्हारे पास तीनों केन्डिडेट खडे थे, उनमें से तुमने जो स्वय सिलेक्ट किया है उस केन्डिडेटको तो अब इसका भी कुछ अधिकार, तुम्हें मान लेना चाहिये कि वह लोक कि वेदमें तुम्हें ताकने न द उसमें तुम्हें बुरा नहीं लगना चाहिये

जैसे कि मुसलमानों या अपनी भी मध्यकालीन प्रथानुसार शादीके बाद घरकी बहू घूघट ताननेका नियम पाले, वैसे ही यहा लोकवेदका घूघट पालनेकी प्रेरणा दी जा रही है घूघटमेसे परपुरुषको जितना देख सकते हो उतना लोकवेदको देखनेमें तकलीफ नहीं है लेकिन लोकवेदके साथ आख मिलानेकी मनाही करनेमे आ रही है लोकवेद तुम्हें दिखाई दे रहा है लोकवेदके बीच जीवन जीने कि मिलने जुलनेकी मनाही नहीं है लेकिन आखमें आख डालनेकी मनाही है तुम्हे उसके साथ हाथमे हाथ डालकर घमना है कि जिसके साथ तुम्हारी शादी हुई है, उसके साथ घूमना है लोकवेदके हाथमे हाथ डालकर हमे नहीं घूमना है अब आसपासमें लोकवेद हो और इसके हाथमे हाथ नहीं डाल सके तो इसकी चिता क्यों करनी? आसपास कहीं लोक होगा, कहीं वेद होगा, जितना व्यवहार होता हो उतना कर

लेना बाकी तो दूसरेके साथ घनिष्ठता बढानेका झझट करे तो इसके साथ शादी क्यों की थी अतएव फ्रीलान्सर अगर हो तो एकके साथ ब्याहना नहीं चाहिये उसके बाद तो जहा जिसके साथ घूमना फिरना हो तो चलेगा लेकिन फ्रीलान्सिग अगर नहीं करनी हो और किसी एकके साथ कमिट होना हो तो इसका भी कोई अधिकार तुम्हें स्वीकार करना चाहिये इसकारण लोकवेदमें प्रभु तुमको स्वस्थ नहीं रहने देते

प्रेमके बारेमे प्रवर्तमान आधुनिक फैशनके कारण लोगोमें पुराने जमाने जितनी प्रेमकी सामर्थ्य नहीं रह गई इस कारण पर-असहिष्णु कि परप्रति ईर्ष्या रहित प्रेमका गुणगान आधुनिक उपदेशकों द्वारा अधिक गाया जाता है *लव् विदाउट् कम्टिमेंट् कि नॉन कम्टिड् लव्* अर्थात् किसीके साथ बधे बिना उससे स्नेह करनेकी मनोवृत्ति आज आदर्श स्नेहके तौरपर अच्छी लगती है अतएव पुराने जमानेकी, अनन्याश्रय कि अनन्यासक्ति कि एकान्तिक भक्ति अथवा तो अनन्यसाप्रदायिक निष्ठा, यह सारी बातें हमारी आधुनिक मानसिकता, आधुनिक व्यवहार कि आधुनिक चिंतन कि हमारी जीवनशैलीमे रास ही नहीं आती अतएव इस मुद्देको समझने कि समझानेमे थोडी तकलीफ तो स्वीकारनी पडेगी ही अतएव इस मुद्देकी सच्ची समझके लिये प्रेमतत्वकी पुरानी दृष्टि लाये बिना बात समझमें नहीं आ सकती

यह उद्वेग किसे होता है? जिसने वास्तवमें प्रभुके श्रीहस्तमें अपना हाथ सोप दिया हो और वह कन्विन्स्ड् है कि मैंने प्रभुको अपना सब कुछ अर्पण किया है और वह लोकवेदके बीचमें ही करा है उसके बाद लोकवेदमें हमको डिफिकल्टी आती हो तो ऐसी भावना करनेकी होती है कोई हमे देखे वह हमे अच्छा लगता हो कि हमे किसीको देखना अच्छा लगता हो तो हम ब्यूटीकोन्टेस्टमे ही भाग क्यों न ले। विवाहके लिये क्यों

जाये? वहा सबही देखते हैं और आनन्द आनन्द हो जाये तालिया भी बजें! हमें लेकिन ब्यूटीकोन्टेस्टमे भाग नहीं लेना- अपनी ब्यूटीको किसीको समर्पित करना है अब जब किसीको समर्पण करना है तब इस ब्यूटीको सब एन्जोय करे ऐसा हमारा कोई अभिगम होना नहीं चाहिये और जिसको अपनी ब्यूटीका समर्पण किया है उसे भी यह अच्छा नहीं लगता. समर्पण सबको करना था तो मुझे क्यों पकडा? अतएव **लोके स्वास्थ्यं तथा वेदे हरिस्तु न करिष्यति पुष्टिमार्ग स्थितो यस्मात्.**

भगवानने कोई चालू खातेमें जैसे द्रौपदीके पाच थे, ऐसे तुमको द्रौपदी मानकर दोमे एक अपनेको शामिल नहीं किया कि लो मैं तीसरा भी आ गया! ऐसे भगवानने अपने आपको लोकवेदके बीचमें शामिल नहीं किया लोकवेदमें शामिल नहीं किया इसका अर्थ कि तुम्हारी लोकासक्ति और तुम्हारी वेदासक्तिमें अपनी आसक्तिको खडा नहीं किया लेकिन तुम्हारी लोकासक्ति और तम्हारी वेदासक्तिका अपनी आसक्तिमें उदात्तीकरण करा है अतएव जब तुम्हारी लोकासक्ति और तुम्हारी वेदासक्तिका धीरे धीरे भगवदासक्तिमें उदात्तीकरण अभिप्रेत है उस समय भगवान भी लोक कि वेदमें तुम अधिक आसक्त होओगे तो तुमको स्वस्थ नहीं रहने देंगे ऐसा भाव विचार करोगे तो जो कुछ लोक कि वेदासक्तिके कारण तुमको जो कुछ भी मुसीबत खडी हो रही है, उसमे तुम्हारा एक बहुत सुदर भाव विचारनेको मिल जायेगा कि पुष्टि प्रभु मुझे अपना अनन्य बनाना चाह रहे हैं ऐसे भावके कारण फिर तुम्हें लोकमें कि वेदमें होती कठिनाई भगवदासक्तिकेलिये किसी भी दिन चिता नहीं खडी कर सकेगी इसी कारण महाप्रभुजी आज्ञा करते है कि **लोके स्वास्थ्य तथा वेदे हरिस्तु न करिष्यति पुष्टिमार्गस्थितो यस्मात्.**

इस लोक वेदकी मर्यादाके भीतर किसी प्रकारका आपसमें एक करार है एक दूसरेके साथ बंधे रहनेका पुष्टिप्रभुभी इस लोकवेदमर्यादाके भीतर तुम्हारे साथ पुष्टिमार्गकी रीतिसे सेव्य होनेके करारसे बंधे हैं जैसे तुम प्रभुके साथ पुष्टिमार्गके करारसे बंधे हुवे हो इसमें तुम्हें लोक वेदमें स्वस्थ कैसे होने दें? जब आधुनिक फैशनानुसार तुमको लोकवेदमे प्रभु स्वस्थ होने दें, तो स्वय प्रभुकी भी लोकवेदमें स्वस्थ होनेकी इच्छा हो जायेगी फिर वह तुमसे बंधे हुवे नहीं रहेंगे, फिर वह तुम्हारे माथे नहीं बिराजेंगे, पब्लिक ट्रस्टमें बिराजेंगे फिर पर्पेच्युअल माईनोरिटी राईटके प्रोटेक्शनकेलिये चेरीटि कमिश्नरका भी इन्टरफियरेन्स् प्रभु मागेगे क्योंकि फिर तो प्रभुभी समझ जायेंगे कि तुम लोकवेदमें स्वस्थ रहना चाहते हो **तो मेरे लिये तुम्हारे माथे बिराजनेकी बजाय चेरिटी कमिश्नर क्या खराब है? ट्रस्टी क्या खराब हैं? लोकवेद दोनो मेरे बनेगे मठडीया आयेगी, मोहनथाल आयेगा, सेवा आयेगी, भेट आयेगी सब आयेगा और महाराज रहें तो रहें और जायें तो जायें मैं कहा बधा हुवा हू महाराजके साथ.** फिरतो प्रभु भी आधुनिक युगके प्रेमके इस गूढरहस्यको समझ जायेंगे लेकिन मूलमे तो तुम प्रभुके साथ ऐसी रीतिसे बधे हुवे नहीं हो तुम तो प्रभुके साथ पुष्टिमार्गके सबधसे बधे हुवे हो प्रभु हमारे माथे बिराजते हैं यह स्वीकारेंगे तो प्रभु भी कहेंगे कि **मैं अगर तेरे माथे बिराजता होऊ तो तुझे मेरे साथ बिराजना पडेगा मुझे छोडकर अब तू किसी दूसरे लक्ष्मीवाहनकी चापलूसी नहीं कर सकता' करेगा तो तेरा सत्यानाश होगा.**

**यदा बहिर्मुखा यूय भविष्यथ कथचन। तदा कालप्रवाहस्था देहचित्तादयोऽपि उत।। सर्वथा भक्षियिन्ति युष्मान् इति मति मम।** (शिक्षाश्लोकी १-२)

ऐसे हमारा सत्यानाश होनेका है और प्रभु भी ऐसी लीला आधुनिक पुष्टिमार्गमें जहा तहा दिखा ही रहे हैं, नहीं दिखा रहे ऐसा नहीं है चिंता हो तो करो, न चिंता होती हो तो न करो उद्वेग होगा तो चिंता होगी, उद्वेग ही नहीं होगा तो इसकी चिंता भी नहीं होगी!

हमारे मुम्बई समाचारमें अपनेही एक वैष्णवपुत्र श्रीसौरभभाईका एक सुंदर लेख आया था **गुडमॉर्निंग** कौलममे वास्तवमें इससे अच्छी मोर्निंग क्या हो सकती है? इसमे वह कहते है कि किस कारण दर्शन बंद करनेमें आते हैं? खुले रहने दो दर्शन अठारह घंटे, सुबहसे लेकर रात तलक ठाकूरजीका शृंगार करना हो तो हमारे सामने शृंगारो, भोग धरने हो तो हमारे सामने भोग धरो यह भाई लिखता है इसमें, कि दर्शन करनेमें रामकृष्ण मंदिरमें जाओ तो आख मींचकर ध्यान धरनेकी कितनी सहूलियत है ऐसी सहूलियत पुष्टिमार्गीय हवेलियोंमें कहा मिलती है?

अगर आख मींचकर मंदिरमें जाना हो तो फिर टेरा खुलाहो कि टेरा बंद हो इसमे क्या फरक पडता हैं? गुड मार्निंग पढकर मैंने विचारा कि महात्मा गांधी ऐसी आज्ञा कर गये हैं **ग्राहकको हर समय भगवान समझो.** हमने ग्राहकोंको आमंत्रित किया है, भक्तोंको आमंत्रित नहीं किया अतएव अब भगवान स्वरूपमेंसे बाहर निकल कर उन दर्शनार्थी ग्राहकोंमें बस गया है. अब यह जो डिमान्ड करे तो तदानुसार सप्लाई तो करनी ही पडेगी उन्हें कैसे ना कर सकते हो? ग्राहक ऑल्वेस् भगवान है महात्मा गांधीने भारत स्वतन्त्र होनेसे पहले ही सब दूकानदारोंको बोध पाठ दिया था कि ग्राहकको किसी भी दिन दूसरी प्रकारसे मत देखो ग्राहकको भगवान समझो ग्राहक किसी भी दिन गलत नहीं हो सकता अब ग्राहक अगर ऐसे कहे कि अठारह घंटे खोलो तो अठारह घंटे खोलने पडेंगे ग्राहक कहेगा

कि बद ही मत करो तो बद नहीं कर सकते तुम, ग्राहक कहेगा कि भगवानको क्यों पोढाते हो? यह तो स्वय रातको जागकर दुनियाकी सावधानी रखता है तुम्हारे खाये हुवेको खून बनानेके लिये तो तुम पोढानेवाले कौन? तो अब तुम्हें जगाना ही पडेगा श्रीनाथजीको ग्राहकको किसी भी दिन तुम निराश नहीं कर सकते क्योंकि मदिरकी दुकान जो खोली है तो देवमूर्तिको नहीं लेकिन ग्राहकको ही भगवान मानना पडेगा!

अब तुम्हें यह तय करना है कि महात्मा गाधीने जिन ग्राहकोंको भगवान कहा उन ग्राहकोंकी सेवा तुम्हें करनी है कि महाप्रभुजीने जिन्हें भगवान माना उनकी सेवा करनी है? यह तुम्हे ही तय करना पडेगा इन बिचारोका दोष नहीं है यह तो ग्राहक है इन्हे जो वस्तु चाहिये उसीकी माग करेंगे इस टेरेको खुलानेके बाद अपनी आख मींच लेंगे लेखका मूल मुद्दा समझो कि टेरा खुला रहना चाहिये और मैं आख मींचूगा

किसी दिन तुम्हारी पत्नी ऐसा करे तो? तुम आओ और वह आख मींच ले कि **पतिदेव साझे घेरे आवीया रे लोल!** और जब ऑफिस जाये तबही आखे खोले, घरमें आये अर्थात् आख मींच कर बैठ जाये कि ध्यान धर रही हू क्योंकि मुझे अतिशय प्यार आ रहा है फिर तो सास अपने बेटेकी सावधानी लेनेकेलिये कुछ निर्देश करे तो सासको भी धमका दे कि क्या समझा है मेरे पतिको! क्या तुम्हारे बापकी पूजी है? मैं आख मींचकर बैठूगी इसके सामने अब सास-बहूके झगडेमें पति बेचारा कहा जाये? ऑफिससे आनेके बाद पत्नी आख मींच कर बैठ जाये तो यह क्या करे? अतएव ग्राहकको उदास नहीं कर सकने वाली इस सबधकी गरिमा पति-पत्निके बीच हो तो इसमें राईट कि रौंगको हम डिसाइड कर सकते है लेकिन ग्राहक और विक्रेताके सबधोंमें तो हमेशा ग्राहकके आधीन ही रहना पडेगा इसका कोई उपाय कि जवाब नहीं है अपने पास मुम्बई

समाचारका आर्टिकल पढकर देखो वास्तवमें सच्चा आर्टिकल है लेकिन यह सच्चा कब है कि जब हम पुष्टिप्रभुको बेचना चाह रहे हो तब बेचना नहीं हो तो हम छाती ठोक कर कह सकते हैं कि हमारे पुष्टिप्रभुके साथ तुम्हारा क्या लेना देना? तुम्हें ध्यान धरना जहा अच्छा लगता हो वहा जाकर ध्यान धरो, पुष्टिमार्गीय हवेलीमें कहा चढे जा रहे हो? लेकिन यह कहनेका अपना साहस आज क्यों नहीं रहा? प्रसाद बेचना है, तुलसी फूल बेचने है, मनोरथकी झाकिया बेचनी है, ब्रह्मसबधकी कठी बेचनी है, हरेक चीज बेचनी है, तो फिर हम इनको किस प्रकार अप्रसन्न कर सकते है यह तो बेसिक कमजोरी बन गई है अपनी ग्राहकको जो माल चाहिये वह ही उसे सप्लाई करना पडेगा

हम लोक और वेदमे स्वस्थ रहना चाहेगे तो फिर प्रभु भी लोकवेदमें स्वस्थ बन जायेंगे अगर हम प्रभुसे ऐसी अपेक्षा रखेंगे कि आप लोकवेदमें स्वस्थ मत बनो आप हमारे घरमे हमारे माथे महाप्रभुजीन जो पद्धति बताई है तदानुसार हमारी सेवा अगीकार करो आपको दुनिया अच्छी लगती है तो सार्वजनिक हवेलियोमें पधारकर बिराजो हम तो दुनियाके सामने आपको स्नान नहीं करा सकते क्योंकि आपको नजर लग जानेका भय है! दुनियाके सामने आपको भोग नहीं धर सकते ठड पडती हो तो हमें लगता है कि तुम्हें भी गर्माहट चाहिये किवाड खोलकर उघाड नहीं सकते गरमीमें हमे लगता है कि आपको भी गरमी सताती होगी अतएव दर्शनार्थी लोगोंकी अधिक होती भीडके धूलके कारण तुम्हें भी गरमी अधिक सतायेगी ऐसे महाप्रभुजीके पुष्टिप्रभुको गरमी और ठड लगती है सर्वोद्धारक परमात्माको ठड नहीं लगती और ना ही भूख लगती है और ना ही नींद आती है और वह ना ही जागता सोता है बात समझो कि भक्तोद्धारक प्रभुको यह सब लगता है भक्तके मनोरथको सतुष्ट करनेकेलिये और महाप्रभुजीके भावानुसार भावनासे जो

तुम इसे बाधोगे तो फिर यह भी तुमसे कुछ तो अपेक्षा रखेगा कि मैं तेरेसे पुष्टिमार्गमे बधा हुवा हू तो तू मर्यादामें जायेगा तो वह मुझे कैसे अच्छा लगेगा? तू प्रवाहमे जाये तो मुझे कैसे अच्छा लगेगा? इसका स्पष्टीकरण तू कर मुझे तो हाथ पकडकर बाध लिया किसीके पास जाने नहीं देता और तू सबको आख मार कर इशारे करता है ऐसी रीतिसे कैसे चलेगा यार! नवरत्नकी गभीर बात है समझे इसे हलकेपनसे मत लेना चिंता करने जैसी बात है **लोके स्वास्थ्य तथा वेदे हरिस्तु न करिष्यति पुष्टिमार्गस्थितो यस्मात् साक्षिणा भवत अखिला.**

तुम इसके एक्साम्पल् बनो अगर तुमने प्रभुको पुष्टिमार्गके सबधसे ऐसी रीतिसे पकडा है तो तुमने पाणिग्रहण किया है तो इस पाणिग्रहणकी प्रक्रिया ही ऐसी है कि तुम्हारा हाथ इसके हाथमें है और इसका हाथ तुम्हारे हाथमे है तुम दोनोंका पुष्टिमार्गीय पाणिग्रहण हुवा है पुष्टिमार्गीय पाणिग्रहणके बाद यह ऐक्स्ट्रा केरीक्यूलम् एक्टिविटी नहीं चलेगी लोकमें लौकिक फैशनको अनुसरो कोई बात नहीं परन्तु यह समझ लो कि पुष्टिप्रभुके लिये तो पुष्टिफैशन ही तुम्हें जीना पडेगा आज नहीं समझ रहे हो तो कल समझना पडेगा परसोके दिन समझ लो नहीं तो पचास साल बाद समझना तो पडेगाही पुष्टिमार्गीय रीतिनुसार हमें जीना है तो हमें यह बात समझनी पडेगी, समझनी पडेगी और समझनीही पडेगी

यहा तुम्हारे अन्दर भगवत्सेवाका कर्ता तरीके जो विवेक और धैर्य अपेक्षित है उसे जगानेकेलिये वाचनिक उपदेश महाप्रभुजी दे रहे है उससे अडरलाईन वाले अशके पीछे **कर्तृबुद्धिविवेक+धैर्य** का ब्रेकेट् लगाया है वहा **पुष्टिमार्गस्थितो हरि** अक्षरोंको कन्डेन्स् किया है जिससे आर्थिक उपदेशकी बात याद कर लेना वैसे ही *लोके तथा वेदे स्वास्थ्य तु न करिष्यति* वह हमने अपना समर्पणका सप्रदान किसे अर्थात् लोकवेदातीत पुष्टिप्रभुको बनाया है वह सप्रदानमतिका विवेक सूचित किया है

अब उसके बाद आता है

**सेवाकृतिर् गुरो आज्ञा बाधन वा हरीच्छया।**
**अत सेवापर चित्त विधाय स्थीयता सुखम्।।७।।**

इलोकान्वय और इलोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

९. {कायिकान्तरिकोपायोपदेश} **सेवाकृति गुरो आज्ञा** *(नृसारिणी भवति)*, हरीच्छया **बाधन,** वा[क्रियाप्रज्ञाविवेक] **अत सेवापर चित्त विधाय सुख** [कर्तृप्रतिभाविकविवेक+धैर्योपदेश] **स्थीयताम्**

सरल भावानुवाद भगवत्सेवाकी शुरुआतमें गुरुकी आज्ञा निभानेका आग्रह रखो परन्तु उसे निभाते हुवे भगवदाज्ञा गुरुकी आज्ञासे विपरीतभी कुछ करनेकी हो तो गुरुकी आज्ञाका बाध हो सकता है अतएव भगवत्सेवासुख हमसे जैसे बनता हो वैसे बनाना महाप्रभूजी अपने पूजापेको बढानेके लिये नहीं लेकिन पुष्टिजीवकी पुष्टिप्रभूपरता बढानेकेलिये सेवाका उपदेश देना चाह रहे है

विवेकधैर्याश्रयमें इस बारेमें **विशेषत. चेद् आज्ञा स्याद् अन्त करणगोचर तदा विशेषगत्यादि भाव्य भिन्नन्तु दैहिकाद् आपद्गत्यादिकार्येषु हठ त्याज्य च सर्वथा** (विवेकधैर्याश्रय ३-४) इन शब्दोंमें इस सूत्रका भाष्य श्रीमहाप्रभुजीने किया है लेकिन हमने पहले यहा देखा कि यह कायिक उपदेशभी है और आन्तरिक उपदेश भी है **सेवाकृति गुरो आज्ञा** सेवा किस प्रकार करनी? जैसे गुरु आज्ञा करे तदानुसार करनी यह कायिक उपदेश है और **बाधन वा हरीच्छया** इसमें वाके ऊपर अन्डरलाइन करी है तुम्हे इसका विचार होगा कि **वा** इतनेही

अशपर अन्डरलाईन क्यो करी लेकिन मूल वामे हरेक बात महाप्रभुजीने कह दी है तुम्हे गुरुकी आज्ञानुसार सेवा करनेका ऐसा दुराग्रह नहीं रखना कि जिसमें भगवान स्वय असतुष्ट हो जायें और भगवानको सतुष्ट करनेका ऐसा भी मनेवांछित स्वच्छदतापूर्ण दुराग्रह भी नहीं रखना कि तुमको गुरुकी आज्ञाका भान या परवाह ही न रह जाये यह बहुत ही डेलीकेट बेलेन्स तुमको निभाना है अतएव तुमको एक विकल्प देनेमें आ रहा है कि दोनोंमे से यह कि वह यहा जो उपदेश महाप्रभुजीका है यह विकल्पका उपदेश है दोनोमें से कोई भी एक प्रकार सभव हो सकता है लेकिन यह किस रीतिसे सभव है, इसका तुमको अवसर, इसकी समति तुम्हें समझनी पडेगी अर्थात् मुख्य उपदेश जो विकल्पमें है इसमें एक बात आई अत सेवापर चित्त यह आर्थिक उपदेश है

मूलमें यह अतिशय सावधानीके साथ ध्यानम रखनेवाली बात है कि गुरु आज्ञानुसार तुमको सेवा करनी है वैसे करते तुम्हारा चित्त सेवापर रहता है अथवा अहकारपर, ममतापर, लोकपर, कि वेदपर रहता है? किसमें तत्पर रहता है? क्योंकि सेवापर चित्त नहीं रहता तो गुरुकी आज्ञानुसार सेवा भी कर रहे हो वह भी व्यर्थ है और गुरुकी आज्ञाका बाध करके सेवा कर रहे हो तो भी व्यर्थ है **दाईका घोडा खेलता खाता ही बात करते ही छुट्टा पड जाता है** अब प्रभुकी इच्छासे गुरुकी आज्ञाका बाध हो सकता है, अतएव सबही ऐसे कहेंगे कि हमें तो साक्षात् प्रभुने आज्ञा करी अब हम कहा पूछने जायेंगे?

कितनेही शास्त्री लोग ऐसे ही करते हैं यद्वा तद्वा कोई भी कथा करे और **प्राचीन भगवदीयोंके मुखारविन्दसे ऐसे सुना** ऐसा कह देते है अब पूछना किस प्रकार कि **तुमने ऐसा सत्सग** किया था कि नहीं किया था? हरेक बातको प्राचीन नित्यलीलास्थ पूज्य प्रात स्मरणीय महाराजश्रीके मुखारविन्दसे

सुनी हुई बताते हैं भूतलस्थित महाराजश्रीके वचनामृत कहे तो हम स्पष्टीकरण करवा सकते हैं नित्यलीलास्थितके वचनामृत कहें तो, कौन साहस करे वहा नित्यलीलास्थ प्रात स्मरणीय महाराजश्रीसे पूछनेकेलिये जानेका कोई साहस करता ही नहीं

आखिरमें हम सब बहुत ही होशियार व्यक्ति हैं स्नेही नहीं स्नेह हो तो तदानुसार सब व्यवहार हों और चतुरता हो तो चतुराई अनुसार सब वर्ताव होता है, अतएव ऐसी आज्ञा हमको कहते हैं बाधन वा हरीच्छया फिरतो लोग रोज नई नई प्रक्रिया लेकर आयेगे कि प्रभुने साक्षात् मुझे आज्ञा करी कि मेरे आगे नमाज पढो, कैसे ना करनी? महाप्रभूजी ना करते होंगे तो भी बाधन वा हरीच्छया प्रभूने स्वय मुझे आज्ञा दी कि मुझे स्कूटरके फ्रट पोकेटमें बिठा, फ्रोक पहरा, मिनी स्कर्ट पहरा अब कैसे ना करनी? ना करे तो कहते हैं ना ना श्यामा सखीका शृंगार है. साड़ी और चोली तो पुरानी सखीया पहरती थीं अब नई तो मिनी स्कर्ट पहरती हैं साक्षात् प्रभुने आज्ञा करी कि नहीं तो कैसे पता चलता! क्योंकि बाधन वा हरीच्छया पर कोई नकेल नहीं पड सकती

महाप्रभूजी कसौटी बताते हैं अतःसेवापर चित्त महाप्रभुजीने जो सेवाका प्रकार वर्णन किया है उस सेवामें तुम्हारी चित्तकी तत्परता बढती हो तो इसके अन्तर्गत महाप्रभुजीकी कोई सेवाकी प्रणालिकाका कि कोई आज्ञाका बाध करके भी सेवा हो सकती है और महाप्रभूजीने जो सेवा वर्णन नहींकी उस प्रकार जो सेवा करोगे तो वह सेवा ही नहीं है, तब चित्त सेवापर कैसे माना जा सकता है? ठाकुरजीके आगे नमाज पढनी सेवा हैं कि नहीं? हा या नामें तुम जबाव विचारो क्यों सेवा नहीं है? जो सेवा नहीं होतो मस्जिदमें ये लोग क्या भगवानको गाली देते हैं? गालीतो नहीं देते ठाकुरजीको जूते पहरकर कुरसीके ऊपर बैठकर पार्थना करनी सेवा है कि नहीं

चर्चकी तरह? सब क्रिश्चियन क्या गधे है कि भगवानका अपमान करते है? किस प्रकार निर्णय लें इसका? निर्णय लेनेकी एकही कसौटी कि महाप्रभुजीने यह प्रकार प्रार्थनाका वर्णनही नहीं किया कि ठाकुरजीके सामने जूते पहरकर हम कुरसीके ऊपर बैठकर प्रभुको प्रार्थना करें **ब्रज भयो महेरके पूत जब यह बात सुनी. सुनि आनंदे सब लोग गोकुल गनित गुणी.** पदकी ताल जूते बजाकर दें अरे बैठकर आलती पालती मारकर झाझ बजाओ जूतेको क्या बजा रहे हो? तो बोलेंगे हमें जोश आ गया साक्षात् आज्ञा करी **बाधन वा हरीच्छया** तो फिर कहा जाना? अतएव **सेवापर चित्तम्** महाप्रभुजीने जो सेवाका प्रकार वर्णित किया है उस सेवामे तुम्हारा चित्त तत्पर होता हो तो तुम प्रभुकी आज्ञासे महाप्रभुजीकी आज्ञाका भी उल्लघन कर सकते हो और महाप्रभुजीने जो सेवाका प्रकार वर्णित नहीं किया उस प्रकारसे जो तुम सेवा करना चाहते हो तो तुम्हारा चित्त ही सेवामे तत्पर नहीं है तो यह उपदेश तुम्हारे लिये नहीं है समझलो यह कोई दूसराही व्यक्ति है जो सेवामे महाप्रभुजीकी आज्ञानुसार व्यवहारमें लानेकेलिये बधा हुवा है तुमतो महाप्रभुजीके उपदेश और भावसे अलग होकर छुटकारा पाना चाह रहे हो महाप्रभुजीने कहा है **तनुक्तिजा** लेकिन हमे साक्षात् प्रभुने आज्ञा करी है कि तू मेरे लिये छप्पनभोगका मनोरथी खोजके ला, तो फस गये ना बिचारे महाप्रभुजी! साक्षात प्रभु आज्ञा करें तो जायें कहा महाप्रभुजी? जब महाप्रभुजीने आज्ञा करी है तदानुसार सेवाप्रकार करनेकेलिये जो व्यक्ति बंधा हुवा है उसके स्वयके हृदयमें ऐसा भाव रहेगा ही कि महाप्रभुजीने जो आज्ञा करी है तदानुसार ही मुझे सेवा करनी है इतने कमिटेड् व्यक्तिको जब प्रभु कोई आज्ञा करें कि **मेरी सेवा ऐसे नहीं ऐसे कर** तब महाप्रभुजी द्वारा वर्णित सेवा करनेके बजाय इस प्रकार जो तत्परता चित्तकी बढती हो तो महाप्रभुजीकी आज्ञाका भी बाध हो सकता है

भोजनकरनेसे शरीरमें शक्ति रहती है लेकिन किसी समय उल्लंघन करनेसे भी, उपवास करनेसे भी, शरीर स्वस्थ रह सकता है यह कहनेका अधिकार किसे? जो नित्यप्रति अच्छी तरह खाता हो उसे ही ना जिसे कुछ खाना ही नहीं है, जिसके पेटने जबाब ही दे दिया हो, पेटमे केन्सर हो गया हो कुछ भी खाया ही नहीं जाता शरीरमें नलियों द्वारा ग्लुकोस दिया जाता हो, वह कहे कि उपवास करनेसे शरीर स्वस्थ रहता है तो उसकी बातमें दम कितना! **अत सेवापर चित्त विधाय स्थीयता सुखम्.** इसके बादमें मिलती कोई भी सेवा और मिलता कोई भी प्रकार और मिलती कोई भी आज्ञा और मिलता कोई भी सानुभाव और मिलता कोई भी स्वप्नदर्शन होगा ही जैसे नित्य हम भोजन करते हैं तो किसी दिन उपवास करनेसे शरीरका स्वास्थ्य अच्छा होता है नित्य तुम सोते हो तो किसी दिन तुम्हारे विवाहके प्रसग कि किसी सेवाके प्रसंगमें जागनेका मजा आयेगा नित्यप्रति इन्सोम्निया हो ना तो तुम्हें जागनेका मजा ही नहीं आयेगा यह जागना तुम्हारे लिये मुसीबत बन जायेगा ऐसे ही महाप्रभुजीद्वारा उपदिष्ट सेवाके प्रकारमें तुम्हारा चित्त तत्पर हो और उसमे तत्पर रहना भी चाहते हो तो, और उसमे तत्पर रहनेकेलिये एकाद महाप्रभुजीकी आज्ञाका उल्लंघन भी हो जाता है तो कोई दिक्कत नहीं है जैसे किसी घरमें अपनेको रहना है और किसी समय हमें दीमकका ट्रीटमेंट करना पडे, तो एकाद दिन दीमकका ट्रीटमेंट करानेकेलिये घरको खाली भी करना पडता है क्यों? क्योंकि जिस घरमें रहना है वह दीमकके कारण खत्म न हो जाये अथवा तो कईलोग दिवालीके पहले रगरोगन फिरसे कराते हैं तो भी घरको खालीतो करना ही पडता है हेतु अतमें यह कि घरमें अच्छी तरह रहना ही है तो एक दिन अगर घरमें नहीं रहे तो उसका अर्थ यह नहीं है कि घरमें रहना ही नहीं चाहते अतएव इस सारे उपदेशका जोर **सेवापर चित्तम्**के ऊपर फिर रहा है क्योंकि महाप्रभुजीद्वारा उपदिष्ट प्रकारानुसार जिसका चित्त सेवापर बन जाता है वह

महाप्रभुजीकी आज्ञा पाले कि महाप्रभुजीकी आज्ञा बिनाभी कभी विपरीत प्रकार बरत सकता है प्रभुका कोई सानुभाव, प्रभुकी कोई अन्त प्रेरणासे भी ऐसा हो सकता है आज्ञाका उल्लघन बहुत डेलीकेट सिच्युएशन है एकदम गुलाबके फूलको पकडने जैसी उसे डालीसे पकडोगे तो पुष्प साबुत रहेगा और पखुडीया जानदार रहेंगी अन्यथा पखुडी झड जायेंगी इतनी डेलीकेट् सिच्युऐशन है

अतएव महाप्रभुजीकी आज्ञाको अन-नेसेसरी अपने ऊपर लागू करके अपनेको इतना उच्च अधिकारी नहीं मान लेना चाहिये क्योंकि जिसे यह उद्वेग हो रहा है उसने तो व्रत लिया है कि महाप्रभुजीकी आज्ञानुसार सेवा करूगा अतएव प्रभु उसके विपरीत आज्ञा करते भी हों तो उद्वेग होना स्वाभाविक है कि अब मैं क्या करू? तो महाप्रभुजी कहते है चिंता मत करो अतमे सेवा करनेकी आज्ञा प्रभुसुखके लिये तो दी है प्रभु सुख निभता हो तो मेरी आज्ञाकी आज्ञा है हरिइच्छा नहीं है वन्स् एन्ड फोर ऑल यह पहले समझ जाओ आखिरमें यह महाप्रभुजीकी ही आज्ञा है हरिइच्छाका इसमें प्रश्न नहीं है

हरि भी तुमको अपनी इच्छा जतायेंगे तो कुछ न कुछ महाप्रभुजीसे कानाफूसी करके, पूछकर ही तुमको जतायेंगे यह महाप्रभुजीसे पूछेगें कि तुमने इसे आत्मनिवेदन कराया है कि नहीं? तुम्हारे उपदेशानुसार यह सेवा कर रहा है कि नही? यस कि नो? महाप्रभूजी कहे कि यस तो फिर कहेंगे कि अच्छा तो मैं तुमको दोचार ऐसी बात भी बताऊगा कि जो महाप्रभुजीने तुमसे नहीं कही! अगर महाप्रभुजी ना करदें कि नहीं मैंने इसे आत्मनिवेदन नहीं कराया, मैं इसकी जिम्मेदारी लेनेको तैयार नहीं क्योंकि मेरे उपदेशानुसार यह सेवा नहीं कर रहा और करना भी नहीं चाहता तो तुम जो कुछ जता रहे हों तो तुम पुष्टिप्रभु नहीं हो बाकी कोई भी दूसरे स्वरूपसे ऐसा हो सकता

है अल्लाह हो सकता है, गॉड हो सकता है, अहूर मझ्दा हो सकता है, महादेव हो सकतें हैं, गणपति हो सकते हैं, लेकिन पुष्टिप्रभु नहीं हो सकते इतना डेलिकेट इश्यु यह है अतएव हर समय एक बात खास दिमागमें रखो कि जो वास्तवमे भक्त है वह अगर ससारमें भी रहता है तो भी इसमें भक्तिकी रग दिखाई देगा यह कोई वैदिक कर्म भी करेगा तो भी इसमें भक्तिका मूड जागरूक रहेगा क्योंकि स्वय भक्त है यह बात महाप्रभुजीने निरोधलक्षणमें समझायी है कि **पुत्रे कृष्णप्रिये रतिः** विवाह **मुझे** इसलिये करना है कि मेरे ठाकुरजीका कोई वारसदार मुझे चाहिये इसके ससारमें भी भक्तिकी सुवास है यह बात भूलनी नहीं चाहिये पुत्रकी उत्पत्ति यह ससार है लेकिन इसमें भी एक भक्तिकी सुवास आ सकती है जब मेरा पुत्र मुझे इसलिये चाहिये कि मेरे ठाकुरजीकी सेवाका कोई वारसदार होना चाहिये पत्नी **मुझे** चाहिये किसलिये कि हम दोनो हिलमिलकर ठाकुरजीकी सेवा कर सकें पति मुझे चाहिये इसलिये कि हम दोनों हिलमिलकर सेवा करे तो इस ससारमें भी एक भक्तिकी सुवास होती है

भक्त कोई भी कार्य करेगा उसमें भक्तिकी सुवास रहेगी इसी कारण ही हमारे पुष्टिमार्गकी प्राचीन परम्परा है कि जो शास्त्रके हिसाबसे जो हमें सोलह सस्कार करने होते हैं यज्ञोपवीत विवाह इत्यादि उन सबमें हम सकल्प लेते हैं कि **श्रीगोपीजनवल्लभायप्रीत्यर्थम्** ! यह भक्तिकी सुवास लानेकेलिये ही है मैं विवाह कर रहा हू गोपीजनवल्लभकी प्रीतिकेलिये, मैं लडका उत्पन्न कर रही हू गोपीजनवल्लभप्रीतिकेलिये उनमें भी लौकिक कोई कर्म हम सकल्पपूर्वक नहीं करते तो भी उनमें शाब्दिक सकल्प नहीं होते लेकिन तुम्हारे ऐसे मानसिक सकल्पकी अपेक्षा तो महाप्रभुजी तुमसे रखते ही है मैं व्यापार कर रहा हू, मेरे ठाकुरजीकी सेवा सुखसे कर सकू किसीके पास हाथ पसारे बगैर मैं बाहर गाम जा रहा हू इसलिये कि मेरे ठाकुरजीकी सेवा अच्छी तरहसे हो सके लौकिक वस्तु हो कि

लौकिक क्रियाकलाप हों कि वैदिक क्रियाकलाप हों भक्तकी हरेक क्रियामें भक्तिकी सुवास तो आयेगी, आयेगी और आयेगी ही लेकिन एक बात हमें कभी भी भूलनी नहीं चाहिये कि भक्तकी हरेक क्रियामे भक्तिकी सुवास आती है इस कारण हमें भक्तिका कोई प्रयास करना कि नहीं करना?

भक्तकी क्रियामें भक्तिकी सुवास आती है अतएव हमें लौकिक कि वैदिक दोनोंमेंसे थोड़ातो डिटेचमेन्ट जरूरी है पूरेपूरा डिटेचमेन्ट नहीं कहता, थोड़ातो उपेक्षाका भाव रखकर भक्तिकी थोड़ी तो अपेक्षा हृदयमें रखनी कि नहीं रखनी? मूल मुद्दा इस बारेमे हैं

लोकवेदमे तो हम बहुतसी अपेक्षायें रखते है लेकिन लोकवेदमे सब अपेक्षायें रखते हुये भी भक्तिकी कोई अपेक्षा हमारे हृदयमें है कि नहीं? भक्तिकी अपेक्षा हमारे हृदयमें होगी तो फिर यह बात समझमें आ जायेगी कि **सेवाकृतिर् गुरोः आज्ञा बाधन वा हरीच्छया अत सेवापर चित्त विधाय स्थीयता सुखम्.** मेरी मूख्य अपेक्षा भक्तिकी हैं श्रीमहाप्रभुजीकी आज्ञानुसार बरताव करू तो भी और श्रीठाकुरजीकी आज्ञानुसार बरताव करू तो भी

ब्याहीहुई घर आई पत्नी सासके कहे अनुसार चले अथवा तो अपने पतिके अनुसार चले तो हरेक सयोगमे इसका शुद्ध भाव यह होना चाहिये कि मूझे मेरा दाम्पत्य निभाना है अतएव सासके कहे अनुसार निभता हो तो उस प्रकार निभाना चाहिये सासने अपने बेटेको पालपोस कर बडा किया है तो कोई ऐसी आदत इसमें डालदी होगी कि बेटेके स्वभावकी बनावटमें सासका बहूत बडा हाथ है और यह जानती है कि इसका स्वभाव कैसा है खट्टा अच्छा लगता है, तीखा अच्छा लगता है, क्या अच्छा लगता है और क्या अच्छा नहीं लगता? क्योंकि आदत डालनेवाली कि इसके स्वभावको घडनेवाली इसकी जननी होती

है यह जो कहेगी उस प्रकार पति सुखी रहेगा लेकिन सोचो कि तुम्हारे आनेके बाद, तुम्हारेसे संबध बनानेके बाद, ऐडीशनल् कुछ तुम्हारे पतिको अच्छा लगने लगा तो यह तुमको जतायेगा तुम्हारा उद्वेग ऐसा नहीं होना चाहिये कि सासके अगेन्स्ट् रिवोल्ट् ही करना है अथवा तो पतिको माका भगतही मानकर उसके साथ बरताव करना! क्योंकि या तो सासके सामने विद्रोह करे उसका नाम बहू और या तो बकरीकी तरह सासके सामने मिमियाते रहना! शांतिसे विचारो कि परिवारमें ब्याहे हो कि केवल पतिको ही ब्याही हो? जिस परिवारमें ब्याही हो तो पति उपरांत परिवारमे सास भी है, परिवारमें जेठ भी है, परिवारमें ससुर भी है, परिवारमे देवर भी है, परिवारमें ननद भी है पतिको ब्याहनेके साथ ही हमारा सबके साथ कोई न कोई सबध ब्याह जाता है, पतिवाले सबधमें नहीं लेकिन सासवाले सबधमे, ससुरवाले सबधमें, सास-बहुके संबधमें, ननद-भाभीके सबधमें देवर-भाभीके सबधमें, कोई न कोई सबधमें सबके साथ हम ब्याह जाते है और जब सबके साथ ब्याह ही गये हैं तब तुम्हारा अभिगम शुद्ध होना चाहिये कैसा अभिगम कि मैं परिवारके साथ ब्याही हू इसमें हरेकका मान, हरेककी सावधानी, हरेकका सूचन, इस परिवारमें जैसे पतिको व्यक्तित्व है वैसे ही मुझे अपना समझना पडेग और उस व्यक्तित्वके सिवाय भी कुछ नोवेल्टी इसमें खडी हो रही है, अथवा तो मैं खुद खडी कर सकू अर्थात् भक्त अपने मनोरथसे अथवा भगवान अपनी इच्छासे कोई थोडासा इस पेटर्नमें रहते हुये भी थोडीसी पिकनिक करना चाहते हो तो पिकनिक जरूर कर सकते है पर पिकनिक करनेका अर्थ कभी भी गृहत्याग नहीं होना चाहिये अपने घरसे रविवारको, समर वेकेशनमें पिकनिकके लिये जाना चाहिये, हिलस्टेशन जाना चाहिये घरके त्यागकी भावना से नहीं, घरको ताला मारके, घरको पडोसीको सोंपकर, घरकी सब वस्तुओकी सावधानी रखकर, हमे पिकनिक पर जाना चाहिये, ऐसे ही महाप्रभुजीके वचनोंकी हरेक सावधानी रखनेके बाद तुमको जब

कभी भगवान जो आज्ञा कुछ अलग दे तो इसे भी तुम्हें पिकनिकके रूपमें लेना चाहिये यह बात खास समझनेकी है

**बाधन वा हरीच्छयाका** गलत अर्थ तुम लोगे कि हा बस साक्षात् टेलीफोनिक कोन्टेक्ट हमारा प्रभूके साथ जुड गया क्योंकि महाप्रभुजीका भग हो गया है, पांचसौ वर्ष बीत जानेके साथ अब तो हमारा ही कोन्टेक्ट ऐस्टेब्लिश हो गया जब डायल करो तब भगवान बोलेगे ही कि मेरे लिये केक लाओ, अब ब्रेड लाओ, अब बटर लाओ, अब अडा लाओ, अब बीफ लाओ क्योकि **बाधन वा हरीच्छया** महाप्रभुजीने ना करी थी वह पाचसौ साल पहलेकी बात है आजके हमारे बालक कॉलेजमे सब जाते हैं वह ठाकुरजीकी इच्छा नहीं होती? ऐसे **बाधन वा हरीच्छया** की छूट वास्तवमें एक पचायत हो गई ना!

महाप्रभूजीने ठाकुरजीका जो स्वभाव गढा है अपने भावानुरूप उस स्वभावका क्या हुआ, उस भावका क्या हुवा? तुमने किसी दिन सोचा, विचारा? इस प्रकार नहीं होता ऐसी स्वच्छदता ठाकुरजीके साथ नहीं की जा सकती, बस यही बात यहा कहनेमें आ रही है

इसके बाद आता है दसवा उपदेश
**चित्तोद्वेग विधायापि हरिर्यद्यत् करिष्यति।**
**तथैव तस्य लीलेति मत्वा चिन्ता द्रुत त्यजेत्।।८।।**

श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

१० {आन्तरिकोपायोपदेश} हरि *चित्तोद्वेगम् अपि विधाय* यद्यत् करिष्यति तस्य लीला तथैव इति मत्वा (कर्तृवैर्योपदेश) चिन्ता द्रुत त्यजेत्.

सरल भावानुवाद सर्वविध दुःखोंको हरनेवाले भगवान हरि हमारे चित्तके भीतर उद्वेग पैदा करके जो कुछ कर रहे है वह उनकी लीलाका रूप जानकर चिंता नहीं करनी

इस सूत्रका भाष्य महाप्रभुजी विवेकधैर्याश्रयमे करते हैं

**त्रिदुःखसहनम् धैर्यम् आमृते सर्वत्र सदा।**
**[1]चक्रवद् [2]देहवद् भाव्य [3]जडवद् [4]गोपभार्यावद्।।**

इस प्रकार धैर्यधारणके चार उदाहरणों द्वारा तदानुसार धैर्य धरनेके चार उपाय भी वर्णन करनेमें आये है

[1]प्रतीकारो यदच्छातो सिद्ध चेद् नाग्रही भवेत्।
[2]भार्यादीना तथा अन्येषाम् असत्त च आक्रम सहेत्।।
[3]स्वयम् इन्द्रियकार्याणि कायवाङ्मनसा त्यजेत।
[4]अशूरेणापि कर्त्तव्य स्वस्य असामर्थ्यभावनात्।।

यह बात ठीक कि आमरण सबही दुःखोंको सहन कर लेना वह धैर्य, परन्तु महाप्रभूजी कहते हैं कि साहजिक रीतिसे ऐसे आये दुःखोंका प्रतीकार शक्य होता हो तो भी जानबूझकर स्वयको दुःखी रखना वह धैर्य नहीं लेकिन धैर्यकी अस्वाभाविक सनक है जब प्रतीकार शक्य न हो तो सहन करनेके सिवाय दूसरा कोई उपाय हो ही नहीं सकता सहन करनेकी सनक तो गलत ही होती है परन्तु राजीखुशी सहन करते करते भी दुःखोको मिटा सकते हो तो मिटा देना चाहिये अगर ऐसी सामर्थ्य अपनेमें न हो तो असामर्थ्यकी भावना हृदयमें कर लेनी चाहिये

अब तुमको इस उद्वेगका अर्थ तो अच्छी तरह समझमें आ गया होगा कि चित्तमें उद्वेग पैदा करके भी प्रभू जो कुछ करते हैं उसे लीला कैसे मानना? किसी भी सजोगमें उद्वेगमें चिंताको मत विकसित होने दो तो उद्वेग और चिंतामें अन्तर है कि नहीं? अगर उद्वेग और चिंता एकही हैं तो चित्तोद्वेग

विधायापि हरि यद्यत् करिष्यति तथैव तस्य लीलेति मत्वा चिता द्रुतम् त्यजेत्. ऐसा महाप्रभुजी क्यो कहते? क्योकि उद्वेग तुम स्वय कहा कर रहे हो? इस उपदेशमें उद्वेग जो भगवान पैदा करते हो तो भी उसकी चिता तुमको नहीं करनी चाहिये क्योकि भगवान् चिता पैदा नहीं कर रहे इस बातको ध्यानसे समझो, विषयका पृथक्करण करके, कि भगवान उद्वेग पैदा कर रहे है और तुम इसमेंसे चिता पैदा कर रहे हो भगवानने जो उद्वेग पैदा किया उसे छोडनेकेलिये महाप्रभुजी नहीं कह रहे हैं भगवानने जो उद्वेग पैदा किया उसे महाप्रभुजी ऐसे कहते हैं जैसे कोई करुणान्त नाटक हो कि कोई करुणान्तिका/ट्रेजेडी फिल्म हो उसे देखने तुम जाते हो तो उसका मजा लेते हो कि नहीं? हीरो दर दर भटक रहा है, खानेको नहीं मिल रहा है, भूखा मर रहा है, रो रहा है इन द्वारा जितने आसू तुम्हारी आखोंमें आते है उतना अधिक आनन्द तुमको आता है कि नहीं? फिल्ममे जितनी अधिक ट्रेजेडी हो, नाटक जितना ट्रेजिक हो उतना अधिक आनन्द आता है जब नाटकमें ट्रेजेडीको रेलिश कर सकते हो तो जीवनमे क्यो रेलिश नहीं कर सकते? अगर लीलाका बोध तुम्हारे अन्दर अच्छी तरहसे है तो इस लीलाके बोधको झेलनेकेलिये तुमको धैर्य चाहिये

धैर्यमें जो चार स्टेप् गिनाये गये हैं, इन धैर्यके चार स्टेपोंसे गुजरोगे तो फिर तुम इस आनन्दको ले सकते हो और इन धैर्यके जो चारस्टेप हैं इनमेंसे नहीं गुजरे, तो तुम यहीं टूट जाओगे इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है महाप्रभुजी ऐसे कह रहे हैं कि चित्तोद्वेग विधायापि हरिः यद्यत् करिष्यति, तथैव तस्य लीलेति मत्वा चिताम् द्रुतम् त्यजेत् महाप्रभुजी ऐसा नहीं कह रहे कि तुम्हारे चित्तमे उद्वेग भगवान पैदा नहीं कर रहे तुम स्वय ही कर रहे हो

आप लोगोंमेंसे कितनेही को याद होगा कि मलाडमें जब मैं नवरन्तके ऊपर प्रवचन कर रहा था तो एक भाई ने मुझे चिट भिजवायी थी कि बाबा, बातोंके बडे क्यों बना रहे हो इसकी बजाय कोई सोलिड काम क्यो नहीं करते तुम? अतएव उस समय भी प्रश्नके उत्तरमें यह ही बात कही थी बात तुम्हारी ठीक है कि मैं बातोके बडे बना रहा हू लेकिन बसन महाप्रभुजीके वचनोका है, तेल इसमे पुष्टिभक्तिका है, तुमको स्वाद आता हो तो खाओ! स्वाद नहीं ले सकते तो प्लीस् गेट आउट मैं कोई दरवाजे बन्द करके तुमको जबरदस्ती तो सुना नहीं रहा इस भाईने दूसरे दिन फिर मुझे सवाल भिजवाया कि तुमको दस जन्मका अन्तराय होगा ऐसे प्रवचन करनेके कारण नवरत्नके पहले प्रवचनकी पुस्तकमे तुम पढना तुम्हारे पास हो तो मैं फिरसे इस भाईकी बातको ध्यानमें ला रहा हू कि मैं तुम्हारा आभार मानता हू कि मुझे प्रभुप्राप्तिमें दस जन्मोका अतराय तुम बता रहे हो. जब चौरासी लाख योनिमें आत्मा भटकती है, तो इसे दस जन्म बितानेमे कितनी देर लगेगी? ज्यादासे ज्यादा पचास साल, साठ साल, कि सौ वर्ष आदमी जीता हो तो भी एक हजार साल लगेगें मुझे लगता था दस हजार जन्मोका अतराय होगा. इसकी तुलनामे तो अभीष्ट वरदान तुमने मुझको दिया है, शाप नहीं दिया.

अतएव एक बात समझो कि कौनसी वस्तुको किस प्रकार लेना यह तो तुम्हारे अभिगमके ऊपर निर्भर है गिलास तुम्हे आधा भरा हुवा दिखाई देता है कि आधा खाली दिखाई देता है तुम्हारा गिलासके प्रति क्या अभिगम है तुम्हे रोनेकी आदत है तो तुम्हें गिलास आधा खाली ही दिखाई देगा और तुम्हारी सतोषकी वृत्ति है तो **प्राप्त सेवेत निर्मम** की वृत्ति होगी तो तुमको गिलास आधा खाली दिखाई नहीं देगा, आधा भरा हुवा दिखाई देगा एक शेर है जो कि मुझे बहुत ही पसद है **गुचे तेरी**

जिंदगीपे रश्क होता है, तू एक तबस्सुमके लिये खिलता है, मुचेने कहा हसकर, ऐ बाबा एक तबस्सुमभी किसे मिलता है?

एक बार जीवनमें मुस्करानेका अवसर किसे मिलता हैं? मुझे मिलता है यह कोई साधारण बात है? दसजन्मोंका अंतराय प्रभु अगर मुझे देते हों तो मेरा कितना बडा अधिकार है कि दस जन्मोंमें मेरा काम सब निबटाना चाहते हैं मेरी तुलनामे इतना बडा भगवदीय कौन दुनियामे और मेरी तुलनामें प्रभुकी पुष्टिका बडा अधिकारी कौन है कि जिसका काम दस जन्ममें पूरा कर रहें हैं प्रभु? मेरी योग्यता मैं देखने जाऊं तो कौन जाने कितने हजार जन्मोंका अंतराय होगा हमें श्रापदेनेवाला भले ही ऐसा समझता हो कि श्राप दे रहा है लेकिन मैं तो इसे वरदान ही समझता हूं, अगर यह बात सत्य है तो!

जो कि सती श्राप देती नहीं और व्यभिचारिणीका लगता नहीं इसकी मैं दरकार ही नहीं रखता फिर भी एक बात समझो कि अगर श्राप हैं तो उसकी बात ह क्योंकि मैं तो अंतराय मानता ही नहीं मेरे मतानुसार तो मेरे ठाकुरजी मेरे घरमें बिराज रहे हैं अंतराय हैं कहा मुझे जन्मक? जिसके घरमें ना बिराजते हों, जो अविवाहित हों उसे अंतराय होगा मैं तो विवाहित हू अपने ठाकुरजीके साथ मेरे घरमें मेरे ठाकुरजी बिराजते हो तो वहा व्यभिचारिणीका श्राप मुझे लगे इसके चान्स बहुत दूर हैं इस कारण मैं नहीं मानता कि ऐसा श्राप मुझे लगेगा अंतराय मुझे एक भी जन्मका नहीं हैं मेरे ठाकुर मेरे घरमें बिराजते हैं, मैं मेरे ठाकुरके साथ घरमें रहता हू अब किसका अंतराय? किसको अंतराय? किस कारण अंतराय? जिसे होगा उसे होगा मुझे तो कोई अंतराय नहीं हैं मैं इसे कोई पत्थर नहीं मानता कि इसे मैं कोई लोहेका टुकडा कि धातु नहीं मानता मैं तो इसे स्वरूप मानता हू इसमें अंतराय अब किसका रहा? जिसे अंतराय हो उसे अंतराय लगे मुझे व्याधि

वैकुंठस्थित पुष्टिप्रभु और मेरे घर बिराजते सेव्यप्रभुके बीच अंतराय ही नहीं लगता तो मैं किस कारण दस जन्मका अंतराय मानूं? एकभी जन्मका अंतराय नहीं है मैं इस निष्ठासे चलनेवाला मनुष्य हूं लेकिन किस प्रकार लेना आखिरमें यह तो हमारे अभिगमकी बात है हम स्वीकारते हैं अपने स्वरूपके तौरपर तो कुछ न कुछ प्रभुको चित्तोद्वेग पैदा करनेका अधिकार हमको स्वीकार करना पड़ेगा

युवावस्थामें मुझे मेरी बुआका लड़का चिढ़ाता था मैं यह कहता लड़का नहीं चाहिये क्योंकि लड़के सभी उपद्रवी होते हैं. यह मुझे ऐसे कहता मुझे तो कमसे कम सात-आठ लड़के चाहिये ही. मेरे भेजेमें किसी भी दिन यह बात नहीं उतरती कि आजके जमानेमें सात-आठ लड़के कैसे पोसायेंगे? बादमें इसका एक लड़का बहुत ही योग्य बन गया, लेकिन जब छोटा था तब इतना अधिक रोता रहता कि सारी रात नींद ही नहीं आती अतएव एक दिन मैंने उससे पूछा भाई क्या हुवा तेरे प्रोग्रामका? इसने कहा यह एक लड़का ही सातके बराबर है सारी रात जगाता है मुझे तो हम लड़के पैदा करेंगे तो छोटे बच्चेके जो अधिकार हैं उनको स्वीकार करना पड़ेगा ही हम दो काम एक साथ नहीं कर सकते कि लड़के को जन्म दें और उसे सारी रात रोनेभी न दें अरे एकही ऐसा होगा कि सारी रात तुमको सोने नहीं दे तो इसने मुझको कहा ना एकही सात के बराबर हो गया अतएव अब मेरी इच्छा पूरी हो गई सातकी

मैंने एक बहुत मजेदार चुटकला पढ़ा किसी दम्पतिके विवाहोपरान्त उनके यहां नया नया बच्चा हुवा कहा जाता है कि दिनमें जन्मा बच्चा मोटे तौरपर रातको जागता है और रातमें जन्मा बच्चा दिनमें जागता है ऐसा बुढियापुराण हैं तदानुसार इस बालकको कुछ ऐसी कुटेव थी कि रात पड़ते ही

इसको पहलवानी सूझे, जागे- रोए बिचारी पत्नी घरका काम करके सो गई हो तब भी यह तो रोये और इसे झझट लगे इसकारण हरेक समय अपने पतिको जगाये **अरे तुम देखो ना क्यो रो रहा है?** दस पद्रह दिन बाद यह भी थक गया कि यह रोजरोजकी मुसीबत अच्छी आई बालक हुआ कि क्या हुवा? इसके बाद यह चाइल्ड स्पेशियालिस्टको जाकर मिला **इसका उपाय क्या?** उसने कहा **एक उपाय करो कि तुम रातको बच्चेके सोनेसे पहले इसकी खूब तेलकी मालिश करो, मालिश करके इसको नहलाओ और फिर सुला दो. फिर रातमें यह नहीं जागेगा** एक तो यह खार खा कर बैठा था कि रोज रातको पत्नी जगाती है कि देखो क्यों रो रहा है उसके बाद यह दूसरी मुसीबत और गले पड गई पत्नी ऐसे समझती कि बच्चा हुवा यह पतिका दोष है, पति समझता है कि पत्नीका दोष है कि बच्चा ऐसा हुवा जबकि दोष दोनोका होता है पार्टनरशिपमें फिफ्टी फिफ्टी लेकिन रातको जब जागना पडे तो पति पत्नि एक दूसरेसे पूछते हैं कि तुम क्यों नहीं जागते क्या यह तुम्हारा बच्चा नहीं है? एक तो दिनमें ऑफिसके कामसे ही थककर पति तग आ जाता है फिर भी बिचारा बच्चेको खूब तेल मालिश करके स्नान-पानकराके सुला भी दे अब उस दिन वास्तवमें चाइल्ड स्पेशियालिस्टकी बात सच्ची निकली कि रातको बच्चा रोया नहीं परन्तु दो ढाई बजे तब पत्नीने नित्य-नियमके अनुसार पतिको जगाकर पूछा **अरे देखोतो जरा रो क्यो नहीं रहा?** अब कहा जाना? एक तो तेलमालिश करी, नहलाया सब कुछ किया तो भी जगाना कि रो क्यो नहीं रहा? इसे यह चिता हो गई कि रोज रोता है तो आज कैसे सो रहा है? कुछ न कुछ गडबड तो नहीं हो गई? उसमें भी फिर खुद को तो उठना नहीं लेकिन पतिको जरूर जगाना

भगवानभी **चित्तोद्वेग विधायापि हरि यद्यत् करिष्यति** किसी समय सोते होगे तो भी तुमको जगायेगा और किसी समय

जागते होंगे तो सोनेकेलिये नहीं जाने देगा लेकिन यह तो दाम्पत्यकी लीला जैसे चलती है वैसे ही चलेगी **तथैव तस्य लीलेति** जैसे दाम्पत्यको भी स्वीकारे बिना छुटकारा नहीं होता बच्चेको पालनेमें ऐसी सभी प्रक्रियाओंमें अपनेको पार्टी बनना ही पडता है इसमें एक दूसरेके ऊपर ताना देना कि लो तुम्हारा ही बच्चा है तू क्यों नहीं जागती? और पहला कहे कि नहीं नहीं तुम्हारा भी बच्चा है तुम क्यो नहीं जागते? लेकिन जब बच्चा रोना बद कर देता है तो भी तुम्हें तो रोना ही पडेगा आखिरमें अतएव यथा अवसर जागते रहना **चित्तोद्वेग विधायापि हरि यद्यत् करिष्यति** दाम्पत्यकी लीला ऐसी ही होती है **इति मत्वा चिन्ता द्वत त्यजेत्** चिताको छोडदो जो जागता है तो तुम भी जागो और अगर थपथपाकर सुला सकते हो तो सुला दो उद्वेग कुछ हो तो होगा ही इसका अगर हम दाम्पत्यके बधनमें बधे है तो

अब तलकके उपदेश एक नहीं तो दूसरे रूपमें विवेकश्चर्याश्रय ग्रथमेंके विवेकरूपी उपायोको अवलम्बन करनेके बारेमें थे अब यहा महाप्रभुजी धैर्यका उपदेश देना चाह रहे हैं उसमें सबसे पहले तो यह भी एक आतरिक उपाय है और उसमे भी सर्वप्रथम हरि शब्द हमको मिलता है **अज्ञान-पाप-दु.खादिक हरति इति हरि:** अर्थात् जो आर्थिक उपदेश यहा मिल रहा है वह यह कि अध्यापक पढाये और बादमे परीक्षा ले वैसे ही हमको स्वयंकी लीलाका अनुभव प्रदान करते करते भगवान तुम्हारे भीतर किसी प्रकारका उद्वेग भी प्रकट कर देते है लेकिन किसी भी सयोगमें आखिरमें वह हरि होनेके कारण दु खोका हर ही लेते है अतएव जो दु ख कि क्लेश तुम अनुभव कर रहे हो उसके बारेमें भगवल्लीला उसीकी होनेकी भावना करनेसे तुम्हारा उद्वेग चितामे विकृत नहीं होगा उसके आधारपर महाप्रभुजी वाचनिक उपदेश देते हैं कि आत्मनिवेदन करनेवालेको धैर्य रखनेके अलग अलग उपाय अपनाने चाहिये

जिससे **तस्य लीला तथा इति मत्वा** अशमें वाचनिक उपदेश समझ लेना जैसे विद्यार्थीकी परीक्षा भी अंतमे तो लेनेमें आती है जो कि विद्याध्यापनका ही अग होता है वैसे जिन उद्वेगोंको हम अपने स्वयके आत्मनिवेदीके तौरपर विवेक उपयोगकरके समझ नहीं सकते उनका, धैर्यके चतुर्विध प्रकारोंका अवलम्बन करके मानसिक हल्केपनस सहन कर लेना चाहिये अनुभवमें आते क्लेशोंको भगवल्लीलाका कोई प्रकार मान लेना चाहिये ऐसे यहा कृर्तधैर्योपदेश देनेमें आ रहा है

तो एक बात यहा अच्छी तरहसे समझ जाओ **तस्मात् सर्वात्मना नित्य श्रीकृष्ण शरण मम. वदद्भि एव सतत.** इसे तुम ध्यानसे देखो यहा महाप्रभुजीने धैर्यका उपदेश दिया है जो सबसे बड़ा फिनोमिना इसमे इन्वोल्व हुआ है किस पॉइन्टको महाप्रभुजीने प्रेशराइज् किया है धैर्यको, कि तुम विवाहित होनेके बाद ऐसे ही धैर्य मत खो दा कि बच्चेको पैदा करनेके लिये तुम एकदम तैयार और पालनपोषन करनेमे तुम पार्टनर नहीं बनो तो तुम धैर्य खो रहे हो दाम्पत्यका, दाम्पत्यका धैर्य किसी भी दिन ऐसा नहीं हो सकता पैदा किया है तो पालनपोषन करना ही पडेगा, सब प्रकारोसे रातको जागना भी पडेगा, सब कुछ करना पडेगा अगर साहस नहीं है तो विवाह ही नहीं करना था तुमको किसने कहा कि विवाह करो? अतएव प्रभुको हमने पकडा है तो जो कुछ उद्वेग प्रभु पैदा कर रहे है उसे उनकी लीला मानकर चिताको छोडो तो तुम अच्छी तरह से भक्तिका सबंध प्रभुके साथ निभा सकते हो

विवेकधैर्याश्रयमेंके ऐसे विवेक और धैर्यके उपायों द्वारा आत्मनिवेदीके भीतर उद्भव होते उद्वेगोको चितामें पलटनेसे कैसे बचाया जा सके उस बारेमें उपदेशोके बाद अब महाप्रभुजी भवगदाश्रय द्वारा भी हम अपने उद्वेगोंको चितामे परिणत होनेसे रोक सकत हैं इस बातको समझानेके लिये कहते है

**तस्मात् सर्वात्मना नित्य 'श्रीकृष्ण. शरण मम'।**
**वदद्भि एव सतत स्थेयम्, इत्येव मे मति ।।९।।**

श्लोकान्वय और श्लोकका मानसशास्त्रीय विश्लेषण

११. {वाचनिकोपायोपदेश} : तस्मात् *सर्वात्मना* नित्य श्रीकृष्ण शरण मम (इति) वदद्भि एव सतत स्थेयम् (सप्रदानाश्रयोपदेश), **इत्येव मे मति.**

सरल भावानुवाद विवेक कि धैर्य रूपी उपायोंसे जिनके ऊपर काबू पाया जा सकता हो अथवा तो काबू नहीं भी पाया जा सकता हो ऐसे सब ही उद्वेगोमें हमें **श्रीकृष्ण. शरण मम**की रटन द्वारा भगवदाश्रय तो दृढ रखना ही चाहिये ऐसा मेरा दृढ अभिप्राय है

अब यहा फाइनल उपदेश आ रहा है उसका गुसाईजी विवेचन करते हैं कि यह सब सलाह जो महाप्रभुजीने दी हैं उनमेसे कोई भी सलाह तुम नहीं अनुसर सकते तो क्या करना? कुछ भी कर सकनेमें हम समर्थ न हों तो बताओ क्या करना? तब महाप्रभुजी कह रहे हैं **तस्मात् सर्वात्मना नित्य श्रीकृष्ण. शरण मम. वदद्भि एव सततं स्थेयं, इत्येव मे मति** इसमेसे कुछ भी तुम नहीं अनुसर सकते हो तो ऐटलीस्ट शरणभावना तो कर ही सकते हो कि नहीं? शरणभावनाके मैंने पहलेही चार स्टेप बता दिये है स्टेप वाईस उनकी तुम शरणभावना करो तुम्हारे सारे ही प्रोब्लम्स्का सोल्युशन मिल जायेगा **तस्मात् सर्वात्मना नित्य श्रीकृष्ण शरण मम. वदद्भि एव सतत स्थेयम् इत्येव मे मति.**

उसके लिये महाप्रभुजीने विवेकधैर्याश्रयमें इस सूत्रका भाष्य किस प्रकार किया इसे तुम पढोगे तो तुमको अतिशय आनन्द आयेगा

**एतत् सहनम् अत्र उक्तम् आश्रयो अतो निरूप्यते। ऐहिके पारलोके च सर्वथा शरण हरि।। दुःसहानौ तथा पापे भये कामाद्यपूरणे। भक्तद्रोहे भक्त्यभावे भक्तैश्चातिक्रमे कृते।। अशक्ये वा सुशक्येवा सर्वथा शरण हरि। अहंकारकृते चैव पोष्यपोषणरक्षणे।। पोष्यातिक्रमणे चैव तथा अन्तेवास्यतिक्रमे। अलौकिकमन सिद्धौ सर्वार्थे शरण हरि।।** (विवेकधैर्याश्रय ९-१२)

तुम कहते हो कि उद्वेगके कारण हमारा मन ही स्वस्थ कि स्थिर नहीं रहता कि हम विवेक या धैर्य व्यवहारमें ला सकें महाप्रभुजी कहते है कि कोई चिन्ताकी बात नहीं दुःखोंको सहन करना मैंने तुमको बताया लेकिन अब मैं तुमको भगवदाश्रयकी असरकारकता समझाना चाह रहा हू भगवदाश्रय तो ऐहिक कि पारलौकिक सभी बातोंमें निभा सको ऐसा है तुम्हारे दुःखोंको तुमने समाप्त करना हो कि तुमसे कोई पापाचरण हो गया हो तो भगवदाश्रयसे विचलित मत होओ किसी प्रकारका आधिभौतिक आध्यात्मिक कि आधिदैविक डर तुमको सता रहा हो तो भगवदाश्रयसे विचलित मत हो तुम्हारी अधूरी रही हुई किसी प्रकारकी कामनायें तुमको बहुत कष्ट दे रही हो तो भगवदाश्रयसे विचलित मत हो तुम्हारेसे किसी भक्तका अपराध कि द्रोह हो गया हो तो भगवदाश्रयसे विचलित मत होओ तुम्हारे भीतर भक्तिभाव क्योंकर नहीं जागता तो भी भगवदाश्रयसे विचलित मत होओ कोई भक्त तुमको किसी प्रकारका कष्ट पहुचाता हो तो भी भगवदाश्रयसे तो विचलित मत होओ ऐसी अनेकविधि

कष्टोंका प्रतीकार करनेमें तुम समर्थ हो कि असमर्थ हो तो भी भगवदाश्रय से विचलित नहीं हो तुम्हारे ऊपर जो निर्भर हैं उनका पोषण कि रक्षण करनेकेलिये तुम्हें किसी प्रकारका अतिक्रमण कि ओछापन प्रकट करना पडता हो तो भी भगवदाश्रयसे विचलित मत होओ जो लोग तुम्हारे ऊपर निर्भर हैं कि तुम्हारे साथ रहकर तुमसे कुछ सीखनेवाले हैं वह तुम्हारे साथ कुछ ओछापन करते हैं तो भी भगवदाश्रयसे तो विचलित मत होओ ऐसी अनेक बातोंमें विचलित न हो ऐसा तुम्हारा अलौकिक मन सिद्ध हो जायेगा जो तुमको भगवदाश्रयसे विचलित नहीं होने देगा इस प्रकार श्रीकृष्ण. शरण मम इस अष्टाक्षरमंत्र द्वारा जगानेमें आती आश्रयभावनाको प्राप्त करो तुम कायिक, वाचिक, मानसिक तीनो प्रकारोंसे कृष्णके अनन्याश्रयके भावको निभाओ

एव चित्ते सदा भाव्य वाचा च परिकीर्तयेत् ।(विवेकधैर्याश्रय १३)

चित्तमे ऐसी भावना करो एव वाणीसे इस प्रकार रटन करते रहो

अन्यस्य भजन तत्र स्वतागमनमेव च।
प्रार्थना कार्यमात्रेऽपि तथान्यत्र विवर्जयेत।।(विवेकधैर्याश्रय १४)

अन्याश्रय छोडो और सावधानी रखो कि प्रभुमें तुमको जैसी श्रद्धा है वैसा ही विश्वास भी रखो कि प्रभुके अतिरिक्त दूसरा कोई तुम्हे क्लेशोसे मुक्त कर सकता है वैसा नहीं है

अविश्वासो न कर्तव्य. सर्वथा बाधकस्तु स ।
ब्रह्मास्त्रघातकौ भाव्यौ प्राप्त सेवेत निर्मम ।

यथाकथंचित् कार्याणि कुर्याद् उच्चावचान्यपि।।
(विवेकधैर्याश्रय १५)

जिस प्रकार कर सकते हो उस प्रकार करो ऊंचा-नीचा अगडम-बगडम जो काम कर सकते हो करो लेकिन अपने कृष्णाश्रयके भावको तुम खोना नहीं

किंवा प्रोक्तेन बहुना शरणं भावयेद् हरिम्।

इस कलियुगमें भक्तिमार्गको अनुसरना वास्तवमें बहुत मुश्किल काम है लेकिन शरणमार्ग बिलकुल सरल तुम्हारे पास उपलब्ध है. शरणमार्गको तुम अनुसरो, टूट मत जाओ यह बात इसकेलिये कहनेमें आ रही है इसकेलिये कहनेमे नहीं आ रही कि तुम बस सेवा मत करो क्योंकि अष्टाक्षर जप लूगा! कह कर अलग हो जाओ वास्तवमें तो अष्टाक्षर किस प्रकार जपोगे -श्रीकृष्ण मेरी शरण हैं क्योंकि मैं उसकी सेवाकी हवेली चलानेवाले पू.पा.गो.वा.हू उसमें फिर बादमे लक्ष्मीवाहन कोर्टमे मुकदमा दायर करेगे कि यह गलत बोलते हैं क्योंकि सेवा-मनोरथकी विभिन्न नौटंकीया तो हमनें पैसे देकर करायी थी. उसमें फिर मुखिया-भीतरिया कहेंगे कि यह दोनों तो मिथ्याभाषी हैं क्योंकि वास्तवमें तो सबहसे शामतक सेवामें तो हम पहुचते हैं, कोल्हूके बैलकी तरह और तनख्वाह कितनी थोडी देते हैं भगवान भी घबरा जाये कि परसादकी तरह कितने सारे हाथोमें पहुचके मैं बिक गया और बट गया

आजकल तो हम खाली दिखावेसे भरा भक्तिमार्ग चला रहे हैं, चित्तमें कोई दूसरी ही भावना ही चल रही हैं वाणीसे कुछ तीसरी ही बात कर रहे है दिलसे कोई चौथा ही काम करनेमें आ रहा है लेकिन लम्बे समय तक ऐसी गाडी नहीं चलेगी क्योंकि आखिरमे तो महाप्रभुजीने सुस्पष्ट शब्दोंमें-

एव चित्ते सदा भाव्य वाचा च परिकीर्तयेत् ।
अन्यस्य भजन तत्र स्वतोगमनमेव च ।
प्रार्थना कार्यमात्रेऽपि तथान्यत्र विवर्जयेत ।।
अविश्वासो न कर्तव्य सर्वथा बाधकस्तु स ।
ब्रह्मास्त्रघातकी भाव्यो प्राप्त सेवेत निर्मम ।
यथाकथचित् कार्याणि कुर्याद् उच्चावचान्यपि ।।
किवा प्रोक्तेन बहुना शरण भावयेद् हरिम् ।
एवम् आश्रयण प्रोक्त सर्वेषा सर्वदा हितम् ।
कलौ भक्त्यादिमार्गा हि दु साध्या इति मे मति ।।

(विवेकधैर्याश्रय

१३-१७)

यहा १. [1]अन्यस्य भजन तत्र स्वतोगमनमेव च. विवर्जयेद्, [2]प्राप्त सेवेत निर्मम, [3]यथा कथचित कार्याणि कुर्याद् उच्चावचान्यपि किवा प्रोक्तेन बहुना शरण भावयेद् हरिम् ऐसे तीन अशोसे कायिक अनन्याश्रयकी रीति महाप्रभुजी समझाना चाहते हैं २ [1]वाचा च परिकीर्तयेत्. [2]प्रार्थना कार्यमात्रेऽपि ततो अन्यत्र विवर्जयेत् ऐसे दो अशोसे महाप्रभुजी वाचिक अनन्याश्रयका उपदेश दे रहे हैं ३ [1]एव चित्त सदा भाव्य .. [2]अविश्वासो न कर्तव्य सर्वथा बाधकस्तु स ऐसे दो अशोंसे महाप्रभुजी मानसिक अनन्याश्रयका उपदेश देना चाह रहे हैं लेकिन नवरत्नमें यहा केवल वाचिक आश्रयका ही जो केवल उपदेश देनेमें आया है उसमें महाप्रभुजीका हेतु तुम्हारे उद्वेगमें किसी भी प्रकारकी वृद्धि न करनेका स्पष्ट नजर आ रहा है यह अष्टाक्षर करोगे और उस अष्टाक्षरको तुम जीनेका भी प्रयास करोगे तो इतनी अधिक विचित्र परिस्थितियो कि पाखडोमें से तुम अपने आपको बाहर निकालनेमे सक्षम बन जाओगे लेकिन ऐसे अभिगमसे तो नहीं ही कि तुम महाप्रभुजी द्वारा उपदर्शित रीतिसे सेवा तो करोही नहीं, अतएव अष्टाक्षर कर लूगा' अथवा तो भक्ति तो करनी ही नहीं, इसलिये मैं अष्टाक्षर जप लूगा तुमको भक्ति करनी हो तो लेकिन किसी कारणसे वह

निभती नहीं हो तो अष्टाक्षर महामत्र तुमको सहायक हो सकता है अतएव आखिरी लाइन पर पडे हुवोंके लिये अष्टाक्षर महामंत्र वाचिक सनिष्ठासे भी बहुत कुछ सुधार सकता है

अब अष्टाक्षर महामत्रको भी स्वाहा करके नष्टकरनेके लिये महायाग जुटाकर, उसके नामपर फिर नौटंकी इक्कठी करनेकी व्यापारिक कुटिलतासे इस मत्रका भी दुरुपयोग कर लेनेमे तो, आजके हम पू पा गो वालक सभी प्रकारसे समर्थ है लेकिन इससे तो हमारा आत्मनाश ही ध्रुव निश्चित है

इस कारण अपना भाष्य करनेकी बजाय सूत्ररूपमे नवरत्नग्रथमें महाप्रभुजी कायिक वाचिक और मानसिक ऐसे त्रिविध आश्रयोंके बजाय केवल वाचिक आश्रयकी ही बात कर रहे है **तस्मात् सर्वात्मना नित्य श्रीकृष्ण शरण मम वदद्भि. एव सतत स्थेयम्** और वह भी पुष्टिजीवोंको सेवात्मक भक्तिमार्गकी सरलता लेकिन दुर्लभताभी समझानेके हेतुसे ही इसकारण सच्चे अर्थमें भक्ति करनी हो तो ही अष्टाक्षर महामत्र सब प्रकारसे सहायक हो सकता है यह हम देख सकते है कि महाप्रभुजीने बहुत कठोर आज्ञा यहा दी है **वदद्भि एव सतत स्थेयम्** तुम इस प्रकार सतत अष्टाक्षर बोल ही नहीं पाओगे और इस प्रकार रह भी नहीं पाओगे जो तुम अनन्याश्रय प्रभुका प्राप्त नहीं कर सको तो विवेक-धैर्य भी तुम जान नहीं पाओगे आखिरमें तुम्हारेसे आश्रयभी निभनेवाला तो नहीं है आश्रयका नियम ऐसे किसी दूसरी दृष्टिसे देखें तो विवेक धैर्य निभानेके बजाय कठिन काम है उसमें सेवा करते हुवे भी क्योंकि सेवामें अनवसरका विधान महाप्रभुजीने किया है दिन रात्रिमें दोनोंमें भी अनवसर हो जाता है और रातमें भी अनवसर हो जाता है एकमे ही आदर्श प्रकारसे तीन तीन घटेकी सेवा भी होय तो भी, कुल चौबीस घटेमे से केवल छ घटेकी सेवा है और यहा तो मार ही डाला है महाप्रभुजीने हमको **वदद्भि एव सतत स्थेयम्**

**इत्येव मे मति** कहकर किसके बापकी ताकत है **सतत स्थेयम्** आज्ञाका अनुसरनेकी? इसकारण यह कोई सेवाका सबस्टिटयूट् नहीं है अतएव ऐसा मत मान लेना कि सेवा नहीं करते तो अष्टाक्षरकी एक माला फेर लेंगे फूल नहीं तो फूलकी पखुडी बस! अरे, क्या पाखड फैला रखा है? यह बात यहा कहनेमे नहीं आ रही यहा कोई बहुत ही गभीर बात कहनमें आ रही है

ऐसे यह वाचनिक उपायका उपदेश होनेपर जिसके सम्मुख हमने आत्मनिवेदन किया है उस श्रीकृष्णका अनन्याश्रय प्राप्त करनेका उपदेश महाप्रभुजी देना चाह रहे हैं उसे ब्रेकेटमें सप्रदानाश्रयोपदेश कहकर स्पष्ट करनेका प्रयास किया है उसी प्रकार *सर्वात्मना* अक्षरोंका तिरछा करके इस बारेमे स्पष्ट करना चाहता हू कि महाप्रभुजी द्वारा दिया गया उपदेश हम पाल सकते हो कि न पाल सकते हों किन्हीं भी ऐसे विचित्र सजोगोको यहा समस्याके तौर पर पेश करनेके लिये और उस समस्याका समाधान अडरलाईन करके समझा दिया है

इसी कारण कृष्णाश्रयके उपसहारमें महाप्रभुजी आज्ञा करते है

**विवेकधैर्य भक्त्यादिरहितस्य विशेषत.।**
**पापासक्तस्य दीनस्य कृष्णएव गति मम।।**
**सर्वसामर्थ्यसहित सर्वदैव अखिलार्थकृत्।**
**शरणस्थसमुद्धार कृष्ण विज्ञापयामि अहम्।।**

(कृष्णाश्रय ९-१०)

श्रीमहाप्रभुजी श्रीकृष्णसे वचन चाह रहे हैं कि शरणागत पुष्टिजीव कैसा भी हो उसका पुष्टिमार्गीय उद्धार - अर्थात् अपनी नित्यसेवाके योग्य इसी जन्ममें कि आनेवाले जन्ममें कि फिर नित्यलीलामें - जैसे प्रभुको रुचे वैसे करने की कृपा विचारोगे!

उपसहार

अगर हमारा श्रीमहाप्रभुजीके प्रति हृदयका भाव और गौरवकी लगन सच्ची है तो उनके नाम पर पुजवाना कि उनके नाम पर नये वल्लभपथ चलानेके बजाय स्वय महाप्रभुजी कितना अधिक श्रीकृष्णके साथ निश्छल - निर्हेतुक प्रेम करते हैं और उसे करनेके लिये हमको भी समझाना चाह रहे हैं उसे अगर समझेगे तो ही महाप्रभूजीको हम अच्छे लगेंगे अन्यथा तो सब बेकार है

अतमें पुष्टिप्रभु श्रीकृष्ण और महाप्रभुजीकी शरणागतिकी प्रार्थना करके अब इस प्रवचनका उपसहार करूगा-

**सर्वसाधनहीनस्य पराधीनस्य सर्वत ।**
**पापपीनस्य दीनस्य श्रीकृष्ण शरण मम।।**

महाप्रभूजीने जो निश्चिततताका यह दिव्य उपदेश हमारी श्रीकृष्णभक्ति और श्रीकृष्ण शरणागतिको सुदृढ करनेकेलिये दिया है उनके अनुग्रह एव आश्रयकी भावनाके साथ इस कार्यक्रमके उपसहार रूपमें आश्रयका पद भी हम गायेंगे-

दृढ इन चरणन केरो भरोसो।
श्रीवल्लभनखचद्रछटा बिन सब जग माझ अधेरो।।१।।
साधन और नहीं या कलिमे जासों होत निवेरो।
सूर कहा कहे द्विविध आधरो बिना मोलको चेरो।।२।।

oooooooooo